श्रीगणेशाय नमः

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

संक्षिप्त ब्रह्मवैवर्तपुराण

ब्रह्मखण्ड

मङ्गलाचरण, नैमिषारण्यमें आये हुए सौतिसे शौनकके प्रश्न तथा सौतिद्वारा ब्रह्मवैवर्तपुराणका परिचय देते हुए इसके महत्त्वका निरूपण

गणेशब्रह्मेशसुरेशशेषाः
सुराश्च सर्वे मनवो मुनीन्द्राः।
सरस्वतीश्रीगिरिजादिकाश्च
नमन्ति देव्यः प्रणमामि तं विभुम्॥ १॥

गणेश, ब्रह्मा, महादेवजी, देवराज इन्द्र, शेषनाग आदि सब देवता, मनु, मुनीन्द्र, सरस्वती, लक्ष्मी तथा पार्वती आदि देवियाँ भी जिन्हें मस्तक झुकाती हैं, उन सर्वव्यापी परमात्माको मैं प्रणाम करता हूँ।

स्थूलास्तनूर्विदधतं त्रिगुणं विराजं
विश्वानि लोमविवरेषु महान्तमाद्यम्।
सृष्ट्युन्मुखः स्वकलयापि ससर्ज सूक्ष्मं
नित्यं समेत्य हृदि यस्तमजं भजामि॥ २॥

जो सृष्टिके लिये उन्मुख हो तीन गुणोंको स्वीकार करके ब्रह्मा, विष्णु और शिव नामवाले तीन दिव्य स्थूल शरीरोंको ग्रहण करते तथा विराट् पुरुषरूप हो अपने रोमकूपोंमें सम्पूर्ण विश्वको धारण करते हैं, जिन्होंने अपनी कलाद्वारा भी सृष्टि-रचना की है तथा जो सूक्ष्म (अन्तर्यामी आत्मा)-रूपसे सदा सबके हृदयमें विराजमान हैं, उन महान् आदिपुरुष अजन्मा परमेश्वरका मैं भजन करता हूँ।

ध्यायने ध्याननिष्ठाः सुरनरमनवो योगिनो योगरूढाः
सन्तः स्वप्नेऽपि सन्तं कतिकतिजनिभिर्यं न पश्यन्ति तप्त्वा।
ध्याये स्वेच्छामयं तं त्रिगुणपरमहो निर्विकारं निरीहं
भक्तध्यानैकहेतोर्निरुपमरुचिरश्यामरूपं दधानम्॥ ३॥

ध्यानपरायण देवता, मनुष्य और स्वायम्भुव आदि मनु जिनका ध्यान करते हैं, योगारूढ योगिजन जिनका चिन्तन करते हैं, जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति सभी अवस्थाओंमें विद्यमान होनेपर भी जिन्हें बहुत-से साधक संत कितने ही जन्मोंतक तपस्या करके भी देख नहीं पाते हैं तथा जो केवल भक्त पुरुषोंके ध्यान करनेके लिये स्वेच्छामय अनुपम एवं परम मनोहर श्यामरूप धारण करते हैं, उन त्रिगुणातीत निरीह एवं निर्विकार परमात्मा श्रीकृष्णका मैं ध्यान करता हूँ।

वन्दे कृष्णं गुणातीतं परं ब्रह्माच्युतं यतः।
आविर्बभूवुः प्रकृतिब्रह्मविष्णुशिवादयः॥ ४॥

जिनसे प्रकृति, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदिका आविर्भाव हुआ है, उन त्रिगुणातीत परब्रह्म परमात्मा अच्युत श्रीकृष्णकी मैं वन्दना करता हूँ।

हे भोले-भाले मनुष्यो! व्यासदेवने श्रुतिगणोंको बछड़ा बनाकर भारतीरूपिणी कामधेनुसे जो अपूर्व, अमृतसे भी उत्तम, अक्षय, प्रिय एवं मधुर दूध दुहा था, वही यह अत्यन्त सुन्दर ब्रह्मवैवर्तपुराण है। तुम अपने श्रवणपुटोंद्वारा इसका पान करो, पान करो।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

ॐ नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥

परम पुरुष नारायण, नरश्रेष्ठ नर, इनकी

लीलाओंको प्रकट करनेवाली देवी सरस्वती तथा उन लीलाओंका गान करनेवाले वेदव्यासको नमस्कार करके फिर जयका उच्चारण (इतिहास-पुराणका पाठ) करना चाहिये।

भारतवर्षके नैमिषारण्य तीर्थमें शौनक आदि ऋषि प्रातःकाल नित्य और नैमित्तिक क्रियाओंका अनुष्ठान करके कुशासनपर बैठे हुए थे। इसी समय सूतपुत्र उग्रश्रवा अकस्मात् वहाँ आ पहुँचे। आकर उन्होंने विनीत भावसे मुनियोंके चरणोंमें प्रणाम किया। उन्हें आया देख ऋषियोंने बैठनेके लिये आसन दिया। मुनिवर शौनकने भक्तिभावसे उन नवागत अतिथिका भलीभाँति पूजन करके प्रसन्नतापूर्वक उनका कुशल-समाचार पूछा। शौनकजी शम आदि गुणोंसे सम्पन्न थे, पौराणिक सूतजी भी शान्त चित्तवाले महात्मा थे। अब वे रास्तेकी थकावटसे छूटकर सुस्थिर आसनपर आरामसे बैठे थे। उनके मुखपर मन्द मुस्कानकी छटा छा रही थी। उन्हें पुराणोंके सम्पूर्ण तत्त्वका ज्ञान था। शौनकजी भी पुराण-विद्याके ज्ञाता थे। वे मुनियोंकी उस सभामें विनीत भावसे बैठे थे और आकाशमें ताराओंके बीच चन्द्रमाकी भाँति शोभा पा रहे थे। उन्होंने परम विनीत सूतजीसे एक ऐसे पुराणके विषयमें प्रश्न किया, जो परम उत्तम, श्रीकृष्णकी कथासे युक्त, सुननेमें सुन्दर एवं सुखद, मङ्गलमय, मङ्गलयोग्य तथा सर्वदा मङ्गलधाम हो, जिसमें सम्पूर्ण मङ्गलोंका बीज निहित हो; जो सदा मङ्गलदायक, सम्पूर्ण अमङ्गलोंका विनाशक, समस्त सम्पत्तियोंकी प्राप्ति करानेवाला और श्रेष्ठ हो; जो हरिभक्ति प्रदान करनेवाला, नित्य परमानन्ददायक, मोक्षदाता, तत्त्वज्ञानकी प्राप्ति करानेवाला तथा स्त्री-पुत्र एवं पौत्रोंकी वृद्धि करनेवाला हो।

शौनकजीने पूछा—सूतजी! आपने कहाँके लिये प्रस्थान किया है और कहाँसे आप आ रहे हैं? आपका कल्याण हो। आज आपके दर्शनसे हमारा दिन कैसा पुण्यमय हो गया। हम सभी लोग कलियुगमें श्रेष्ठ ज्ञानसे वञ्चित होनेके कारण भयभीत हैं। संसार-सागरमें डूबे हुए हैं और इस कष्टसे मुक्त होना चाहते हैं। हमारा उद्धार करनेके लिये ही आप यहाँ पधारे हैं। आप बड़े भाग्यशाली साधु पुरुष हैं। पुराणोंके ज्ञाता हैं। सम्पूर्ण पुराणोंमें निष्णात हैं और अत्यन्त कृपानिधान हैं। महाभाग! जिसके श्रवण और पठनसे भगवान् श्रीकृष्णमें अविचल भक्ति प्राप्त हो तथा जो तत्त्वज्ञानको बढ़ानेवाला हो, उस पुराणकी कथा कहिये। सूतनन्दन! जो मोक्षसे भी बढ़कर है, कर्मका मूलोच्छेद करनेवाली तथा संसाररूपी कारागारमें बँधे हुए जीवोंकी बेड़ी काटनेवाली है, वह कृष्ण-भक्ति ही जगत्-रूपी दावानलसे दग्ध हुए जीवोंपर अमृत-रसकी वर्षा करनेवाली है। वही जीवधारियोंके हृदयमें नित्य-निरन्तर परम सुख एवं परमानन्द प्रदान करती है।*

आप वह पुराण सुनाइये, जिसमें पहले सबके बीज (कारणतत्त्व)-का प्रतिपादन तथा परब्रह्मके स्वरूपका निरूपण हो। सृष्टिके लिये उन्मुख हुए उस परमात्माकी सृष्टिका भी उत्कृष्ट वर्णन हो। मैं यह जानना चाहता हूँ कि परमात्माका स्वरूप साकार है या निराकार? ब्रह्मका स्वरूप कैसा है? उसका ध्यान अथवा चिन्तन कैसे करना चाहिये? वैष्णव महात्मा किसका ध्यान करते हैं? तथा शान्तचित्त योगीजन किसका चिन्तन किया करते हैं? वेदमें किनके गूढ़ एवं प्रधान

---

* श्रीकृष्णे निश्चला भक्तिर्यतो भवति शाश्वती। तत् कथ्यतां महाभाग पुराणं ज्ञानवर्द्धनम्॥
गरीयसी या मोक्षाच्च कर्ममूलनिकृन्तनी। संसारसंनिबद्धानां निगडच्छेदकर्तरी॥
भवदावाग्निदग्धानां पीयूषवृष्टिवर्षिणी। सुखदाऽऽनन्ददा सौते शश्वच्चेतसि जीविनाम्॥
(ब्रह्मखण्ड १। १२—१४)

मतका निरूपण किया गया है?

वत्स! जिस पुराणमें प्रकृतिके स्वरूपका निरूपण हुआ हो, गुणोंका लक्षण वर्णित हो तथा 'महत्' आदि तत्त्वोंका निर्णय किया गया हो; जिसमें गोलोक, वैकुण्ठ, शिवलोक तथा अन्यान्य स्वर्गादि लोकोंका वर्णन हो तथा अंशों और कलाओंका निरूपण हो, उस पुराणको श्रवण कराइये। सूतनन्दन! प्राकृत पदार्थ क्या हैं? प्रकृति क्या है तथा प्रकृतिसे परे जो आत्मा या परमात्मा है, उसका स्वरूप क्या है? जिन देवताओं और देवाङ्गनाओंका भूतलपर गूढ़रूपसे जन्म या अवतरण हुआ है, उनका भी परिचय दीजिये। समुद्रों, पर्वतों और सरिताओंके प्रादुर्भावकी भी कथा कहिये। प्रकृतिके अंश कौन हैं? उसकी कलाएँ और उन कलाओंकी भी कलाएँ क्या हैं? उन सबके शुभ चरित्र, ध्यान, पूजन और स्तोत्र आदिका वर्णन कीजिये। जिस पुराणमें दुर्गा, सरस्वती, लक्ष्मी और सावित्रीका वर्णन हो, श्रीराधिकाका अत्यन्त अपूर्व और अमृतोपम आख्यान हो, जीवोंके कर्मविपाकका प्रतिपादन तथा नरकोंका भी वर्णन हो, जहाँ कर्मबन्धनका खण्डन तथा उन कर्मोंसे छूटनेके उपायका निरूपण हो, उसे सुनाइये। जिन जीवधारियोंको जहाँ जो-जो शुभ या अशुभ स्थान प्राप्त होता हो, उन्हें जिस कर्मसे जिन-जिन योनियोंमें जन्म लेना पड़ता हो, इस लोकमें देहधारियोंको जिस कर्मसे जो-जो रोग होता हो तथा जिस कर्मके अनुष्ठानसे उन रोगोंसे छुटकारा मिलता हो, उन सबका प्रतिपादन कीजिये।

सूतनन्दन! जिस पुराणमें मनसा, तुलसी, काली, गङ्गा और वसुन्धरा पृथ्वी—इन सबका तथा अन्य देवियोंका भी मङ्गलमय आख्यान हो, शालग्राम-शिलाओं तथा दानके महत्त्वका निरूपण हो अथवा जहाँ धर्माधर्मके स्वरूपका अपूर्व विवेचन उपलब्ध होता हो, उसका वर्णन कीजिये। जहाँ गणेशजीके चरित्र, जन्म और कर्मका तथा उनके गूढ़ कवच, स्तोत्र और मन्त्रोंका वर्णन हो, जो उपाख्यान अत्यन्त अद्भुत और अपूर्व हो तथा कभी सुननेमें न आया हो, वह सब मन-ही-मन याद करके इस समय आप उसका वर्णन करें। परमात्मा श्रीकृष्ण सर्वत्र परिपूर्ण हैं तथापि इस जगत्में पुण्य-क्षेत्र भारतवर्षमें जन्म (अवतार) लेकर उन्होंने नाना प्रकारके लीला-विहार किये। मुने! जिस पुराणमें उनके इस अवतार तथा लीला-विहारका वर्णन हो, उसकी कथा कहिये। उन्होंने किस पुण्यात्माके पुण्यमय गृहमें अवतार ग्रहण किया था? किस धन्या, मान्या, पुण्यवती सती नारीने उनको पुत्ररूपसे उत्पन्न किया था? उसके घरमें प्रकट होकर वे भगवान् फिर कहाँ और किस कारणसे चले गये? वहाँ जाकर उन्होंने क्या किया और वहाँसे फिर अपने स्थानपर कैसे आये? किसकी प्रार्थनासे उन्होंने पृथ्वीका भार उतारा? तथा किस सेतुका निर्माण (मर्यादाकी स्थापना) करके वे भगवान् पुनः गोलोकको पधारे? इन सबसे तथा अन्य उपाख्यानोंसे परिपूर्ण जो श्रुतिदुर्लभ पुराण है, उसका सम्यक् ज्ञान मुनियोंके लिये भी दुर्लभ है। वह मनको निर्मल बनानेका उत्तम साधन है। अपने ज्ञानके अनुसार मैंने जो भी शुभाशुभ बात पूछी है या नहीं पूछी है, उसके समाधानसे युक्त जो पुराण तत्काल वैराग्य उत्पन्न करनेवाला हो, मेरे समक्ष उसीकी कथा कहिये। जो शिष्यके पूछे अथवा बिना पूछे हुए विषयकी भी व्याख्या करता है तथा योग्य और अयोग्यके प्रति भी समभाव रखता है, वही सत्पुरुषोंमें श्रेष्ठ सद्गुरु है।

सौति बोले—मुने! आपके चरणारविन्दोंका दर्शन मिल जानेसे मेरे लिये सब कुशल-ही-कुशल है। इस समय मैं सिद्धक्षेत्रसे आ रहा हूँ और नारायणाश्रमको जाता हूँ। यहाँ ब्राह्मणसमूहको

उपस्थित देख नमस्कार करनेके लिये चला आया हूँ। साथ ही भारतवर्षके पुण्यदायक क्षेत्र नैमिषारण्यका दर्शन भी मेरे यहाँ आगमनका उद्देश्य है। जो देवता, ब्राह्मण और गुरुको देखकर वेगपूर्वक उनके सामने मस्तक नहीं झुकाता है, वह 'कालसूत्र' नामक नरकमें जाता है तथा जबतक चन्द्रमा और सूर्यकी सत्ता रहती है, तबतक वह वहीं पड़ा रहता है। साक्षात् श्रीहरि ही भारतवर्षमें ब्राह्मणरूपसे सदा भ्रमण करते रहते हैं। श्रीहरि-स्वरूप उस ब्राह्मणको कोई पुण्यात्मा ही अपने पुण्यके प्रभावसे प्रणाम करता है। भगवन्! आपने जो कुछ पूछा है तथा आपको जो कुछ जानना अभीष्ट है, वह सब आपको पहलेसे ही ज्ञात है, तथापि आपकी आज्ञा शिरोधार्य कर मैं इस विषयमें कुछ निवेदन करता हूँ। पुराणोंमें सारभूत जो ब्रह्मवैवर्त नामक पुराण है, वही सबसे उत्तम है। वह हरिभक्ति देनेवाला तथा सम्पूर्ण तत्त्वोंके ज्ञानकी वृद्धि करनेवाला है। यह भोग चाहनेवालोंको भोग, मुक्तिकी इच्छा रखनेवालोंको मोक्ष तथा वैष्णवोंको हरिभक्ति प्रदान करनेवाला है। सबकी इच्छा पूर्ण करनेके लिये यह साक्षात् कल्पवृक्ष-स्वरूप है। इसके ब्रह्मखण्डमें सर्वबीजस्वरूप उस परब्रह्म परमात्माका निरूपण है जिसका योगी, संत और वैष्णव ध्यान करते हैं तथा जो परात्पर-रूप है। शौनकजी! वैष्णव, योगी और अन्य संत महात्मा एक-दूसरेसे भिन्न नहीं हैं। जीवधारी मनुष्य अपने ज्ञानके परिणामस्वरूप क्रमशः संत, योगी और वैष्णव होते हैं। सत्संगसे मनुष्य संत होते हैं। योगियोंके संगसे योगी होते हैं तथा भक्तोंके संगसे वैष्णव होते हैं। ये क्रमशः उत्तरोत्तर श्रेष्ठ योगी हैं।

ब्रह्मखण्डके अनन्तर प्रकृतिखण्ड है, जिसमें देवताओं, देवियों और सम्पूर्ण जीवोंकी उत्पत्तिका कथन है। साथ ही देवियोंके शुभ चरित्रका वर्णन है। जीवोंके कर्मविपाक और शालग्राम-शिलाके महत्त्वका निरूपण है। उन देवियोंके कवच, स्तोत्र, मन्त्र और पूजा-पद्धतिका भी प्रतिपादन किया गया है। उस प्रकृतिखण्डमें प्रकृतिके लक्षणका वर्णन है। उसके अंशों और कलाओंका निरूपण है। उनकी कीर्तिका कीर्तन तथा प्रभावका प्रतिपादन है। पुण्यात्माओं और पापियोंको जो-जो शुभाशुभ स्थान प्राप्त होते हैं, उनका वर्णन है। पापकर्मसे प्राप्त होनेवाले नरकों तथा रोगोंका कथन है। उनसे छूटनेके उपायका भी विचार किया गया है।

प्रकृतिखण्डके पश्चात् गणेशखण्डमें गणेशजीके जन्मका वर्णन है। उनके उस अत्यन्त अपूर्व चरित्रका निरूपण है, जो श्रुतियों और वेदोंके लिये भी परम दुर्लभ है। गणेश और भृगुजीके संवादमें सम्पूर्ण तत्त्वोंका निरूपण है। गणेशजीके गूढ़ कवच और स्तोत्र, मन्त्र तथा तन्त्रोंका वर्णन है। तत्पश्चात् श्रीकृष्ण-जन्मखण्डका कीर्तन हुआ है। भारतवर्षके पुण्यक्षेत्रमें श्रीकृष्णके दिव्य

जन्म-कर्मका वर्णन है। उनके द्वारा पृथ्वीके भार उतारे जानेका प्रसंग है। उनके मङ्गलमय क्रीडा-कौतुकोंका वर्णन है। सत्पुरुषोंके लिये जो धर्मसेतुका विधान है, उसका निरूपण भी श्रीकृष्ण-जन्मखण्डमें ही हुआ है।

विप्रवर शौनक! इस प्रकार मैंने उत्तम पुराणशिरोमणि ब्रह्मवैवर्तका परिचय दिया। यह ब्रह्म आदि चार खण्डोंमें बँटा हुआ है। इसमें सम्पूर्ण धर्मोंका निरूपण है। यह पुराण सब लोगोंको अत्यन्त प्रिय है तथा सबकी समस्त आशाओंको पूर्ण करनेवाला है। इसका नाम ब्रह्मवैवर्त है। यह सम्पूर्ण अभीष्ट पदोंको देनेवाला है। पुराणोंमें सारभूत है। इसकी तुलना वेदसे की गयी है। भगवान् श्रीकृष्णने इस पुराणमें अपने सम्पूर्ण ब्रह्मभावको विवृत (प्रकट) किया है, इसीलिये पुराणवेत्ता महर्षि इसे ब्रह्मवैवर्त कहते हैं। पूर्वकालमें निरामय गोलोकके भीतर परमात्मा श्रीकृष्णने ब्रह्माजीको इस पुराण-सूत्रका दान दिया था। फिर ब्रह्माजीने महान् तीर्थ पुष्करमें धर्मको इसका उपदेश दिया। धर्मने अपने पुत्र नारायणको प्रसन्नतापूर्वक यह पुराण प्रदान किया। भगवान् नारायण ऋषिने नारदको और नारदजीने गङ्गाजीके तटपर व्यासदेवको इसका उपदेश दिया। व्यासजीने उस पुराणसूत्रका विस्तार करके उसे अत्यन्त विशाल रूप देकर पुण्यदायक सिद्धक्षेत्रमें मुझे सुनाया। यह पुराण बड़ा ही मनोहर है। ब्रह्मन्! अब मैं आपके सामने इसकी कथा आरम्भ करता हूँ। आप इस सम्पूर्ण पुराणको सुनें। व्यासजीने इस पुराणको अठारह हजार श्लोकोंमें विस्तृत किया है। सम्पूर्ण पुराणोंके श्रवणसे मनुष्यको जो फल प्राप्त होता है, वह निश्चय ही इसके एक अध्यायको सुननेसे मिल जाता है।

(अध्याय १)

परमात्माके महान् उज्ज्वल तेजःपुञ्ज, गोलोक, वैकुण्ठलोक और शिवलोककी स्थितिका वर्णन तथा गोलोकमें श्यामसुन्दर भगवान् श्रीकृष्णके परात्पर स्वरूपका निरूपण

शौनकजीने पूछा—सूतनन्दन! आपने कौन-सा परम अद्भुत, अपूर्व और अभीष्ट पुराण सुना है, वह सब विस्तारपूर्वक कहिये। पहले परम उत्तम ब्रह्मखण्डकी कथा सुनाइये।

सौतिने कहा—मैं सर्वप्रथम अमित तेजस्वी गुरुदेव व्यासजीके चरणकमलोंकी वन्दना करता हूँ। तत्पश्चात् श्रीहरिको, सम्पूर्ण देवताओंको और ब्राह्मणोंको प्रणाम करके सनातन धर्मोंका वर्णन आरम्भ करता हूँ। मैंने व्यासजीके मुखसे जिस सर्वोत्तम ब्रह्मखण्डको सुना है, वह अज्ञानान्धकारका विनाशक और ज्ञानमार्गका प्रकाशक है। ब्रह्मन्! पूर्ववर्ती प्रलयकालमें केवल ज्योतिष्पुञ्ज प्रकाशित होता था, जिसकी प्रभा करोड़ों सूर्योंके समान थी। वह ज्योतिर्मण्डल नित्य है और वही असंख्य विश्वका कारण है। वह स्वेच्छामय रूपधारी सर्वव्यापी परमात्माका परम उज्ज्वल तेज है। उस तेजके भीतर मनोहर रूपमें तीनों ही लोक विद्यमान हैं। विप्रवर! तीनों लोकोंके ऊपर गोलोक-धाम है, जो परमेश्वरके समान ही नित्य है। उसकी लम्बाई-चौड़ाई तीन करोड़ योजन है। वह सब ओर मण्डलाकार फैला हुआ है। परम महान् तेज ही उसका स्वरूप है। उस चिन्मय लोककी भूमि दिव्य रत्नमयी है। योगियोंको स्वप्नमें भी उसका दर्शन नहीं होता। परंतु वैष्णव भक्तजन भगवान्‌की कृपासे उसको प्रत्यक्ष देखते और वहाँ जाते हैं। अप्राकृत

आकाश अथवा परम व्योममें स्थित हुए उस श्रेष्ठ धामको परमात्माने अपनी योगशक्तिसे धारण कर रखा है। वहाँ आधि, व्याधि, जरा, मृत्यु तथा शोक और भयका प्रवेश नहीं है। उच्चकोटिके दिव्य रत्नोंद्वारा रचित असंख्य भवन सब ओरसे उस लोककी शोभा बढ़ाते हैं। प्रलयकालमें वहाँ केवल श्रीकृष्ण रहते हैं और सृष्टिकालमें वह गोप-गोपियोंसे भरा रहता है। गोलोकसे नीचे पचास करोड़ योजन दूर दक्षिणभागमें वैकुण्ठ और वामभागमें शिवलोक है। ये दोनों लोक भी गोलोकके समान ही परम मनोहर हैं। मण्डलाकार वैकुण्ठलोकका विस्तार एक करोड़ योजन है। वहाँ भगवती लक्ष्मी और भगवान् नारायण सदा विराजमान रहते हैं। उनके साथ उनके चार भुजावाले पार्षद भी रहते हैं। वैकुण्ठलोक भी जरा-मृत्यु आदिसे रहित है। उसके वामभागमें शिवलोक है, जिसका विस्तार एक करोड़ योजन है। वहाँ पार्षदोंसहित भगवान् शिव विराजमान हैं। गोलोकके भीतर अत्यन्त मनोहर ज्योति है, जो परम आह्लादजनक तथा नित्य परमानन्दकी प्राप्तिका कारण है। योगीजन योग एवं ज्ञानदृष्टिसे सदा उसीका चिन्तन करते हैं। वह ज्योति ही परमानन्ददायक, निराकार एवं परात्पर ब्रह्म है। उस ब्रह्म-ज्योतिके भीतर अत्यन्त मनोहर रूप सुशोभित होता है, जो नूतन जलधरके समान श्याम है। उसके नेत्र लाल कमलके समान प्रफुल्ल दिखायी देते हैं। उसका निर्मल मुख शरत्पूर्णिमाके चन्द्रमाकी शोभाको तिरस्कृत करनेवाला है। उसके रूप-लावण्यपर करोड़ों कामदेव निछावर किये जा सकते हैं। वह मनोहर रूप विविध लीलाओंका धाम है। उसके दो भुजाएँ हैं। एक हाथमें मुरली सुशोभित है। अधरोंपर मन्द मुसकान खेलती रहती है। उसके श्रीअङ्ग दिव्य रेशमी पीताम्बरसे आवृत हैं। सुन्दर रत्नमय आभूषणोंके समुदाय उसके अलङ्कार हैं। वह भक्तवत्सल है। उसके सम्पूर्ण अङ्ग चन्दनसे चर्चित तथा कस्तूरी और कुङ्कुमसे अलङ्कृत हैं। उसका श्रीवत्सभूषित वक्षःस्थल कान्तिमान्

कौस्तुभसे प्रकाशित है। मस्तकपर उत्तम रत्नोंके सार-तत्त्वसे रचित किरीट-मुकुट जगमगाते रहते हैं। वह श्याम-सुन्दर पुरुष रत्नमय सिंहासनपर आसीन है और आजानुलम्बिनी वनमाला उसकी शोभा बढ़ाती है। उसीको परब्रह्म परमात्मा एवं सनातन भगवान् कहते हैं। वे भगवान् स्वेच्छामय रूपधारी, सबके आदिकारण, सर्वाधार तथा परात्पर परमात्मा हैं। उनकी नित्य किशोरावस्था रहती है। वे सदा गोप-वेष धारण करते हैं। करोड़ों पूर्ण चन्द्रमाओंकी शोभासे सम्पन्न हैं तथा अपने भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये आकुल रहते हैं। वे ही निरीह, निर्विकार, परिपूर्णतम तथा सर्वव्यापी परमेश्वर हैं तथा वे ही रासमण्डलमें विराजमान, शान्तचित्त, परम मनोहर रासेश्वर हैं; मङ्गलकारी, मङ्गल-योग्य, मङ्गलमय तथा मङ्गलदाता हैं; परमानन्दके बीज, सत्य, अक्षर और अविनाशी

हैं; सम्पूर्ण सिद्धियोंके स्वामी, सर्वसिद्धिस्वरूप तथा सिद्धिदाता हैं; प्रकृतिसे परे विराजमान, ईश्वर, निर्गुण, नित्य-विग्रह, आदिपुरुष और अव्यक्त हैं। बहुत-से नामोंद्वारा उन्हींको पुकारा जाता है। बहुसंख्यक पुरुषोंने विविध स्तोत्रोंद्वारा उन्हींका स्तवन किया है। वे सत्य, स्वतन्त्र, एक, परमात्मस्वरूप, शान्त तथा सबके परम आश्रय हैं। शान्तचित्त वैष्णवजन उन्हींका ध्यान करते हैं। ऐसा उत्कृष्ट रूप धारण करनेवाले उन एकमात्र भगवान्‌ने प्रलयकालमें दिशाओं और आकाशके साथ सम्पूर्ण विश्वको शून्यरूप देखा। (अध्याय २)

श्रीकृष्णसे सृष्टिका आरम्भ, नारायण, महादेव, ब्रह्मा, धर्म, सरस्वती, महालक्ष्मी और प्रकृति (दुर्गा)-का प्रादुर्भाव तथा इन सबके द्वारा पृथक्-पृथक् श्रीकृष्णका स्तवन

सौति कहते हैं—भगवान्‌ने देखा कि सम्पूर्ण विश्व शून्यमय है। कहीं कोई जीव-जन्तु नहीं है। जलका भी कहीं पता नहीं है। सारा आकाश वायुसे रहित और अन्धकारसे आवृत हो घोर प्रतीत होता है। वृक्ष, पर्वत और समुद्र आदिसे शून्य होनेके कारण विकृताकार जान पड़ता है। मूर्ति, धातु, शस्य और तृणका सर्वथा अभाव हो गया है। ब्रह्मन्! जगत्‌को इस शून्यावस्थामें देख मन-ही-मन सब बातोंकी आलोचना करके दूसरे किसी सहायकसे रहित एकमात्र स्वेच्छामय प्रभुने स्वेच्छासे ही सृष्टि-रचना आरम्भ की। सबसे पहले उन परम पुरुष श्रीकृष्णके दक्षिणपार्श्वसे जगत्‌के कारणरूप तीन मूर्तिमान् गुण प्रकट हुए। उन गुणोंसे महत्तत्त्व, अहङ्कार, पाँच तन्मात्राएँ तथा रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द—ये पाँच विषय क्रमशः प्रकट हुए। तदनन्तर श्रीकृष्णसे साक्षात् भगवान् नारायणका प्रादुर्भाव हुआ, जिनकी अङ्गकान्ति श्याम थी, वे नित्य-तरुण, पीताम्बरधारी तथा वनमालासे विभूषित थे। उनके चार भुजाएँ थीं। उन्होंने अपने चार हाथोंमें क्रमशः—शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म धारण कर रखे थे। उनके मुखारविन्दपर मन्द मुस्कानकी छटा छा रही थी। वे रत्नमय आभूषणोंसे विभूषित थे, शार्ङ्गधनुष धारण किये हुए थे। कौस्तुभमणि उनके वक्षःस्थलकी शोभा बढ़ाती थी। श्रीवत्सभूषित वक्षमें साक्षात् लक्ष्मीका निवास था। वे श्रीनिधि अपूर्व शोभाको प्रकट कर रहे थे; शरत्कालकी पूर्णिमाके चन्द्रमाकी प्रभासे सेवित मुख-चन्द्रके कारण वे बड़े मनोहर जान पड़ते थे। कामदेवकी कान्तिसे युक्त रूप-लावण्य उनका सौन्दर्य बढ़ा रहा था। वे श्रीकृष्णके सामने खड़े हो दोनों हाथ जोड़कर उनकी स्तुति करने लगे।

नारायण बोले—जो वर (श्रेष्ठ), वरेण्य (सत्पुरुषोंद्वारा पूज्य), वरदायक (वर देनेवाले) और वरकी प्राप्तिके कारण हैं; जो कारणोंके भी कारण, कर्मस्वरूप और उस कर्मके भी कारण हैं; तप जिनका स्वरूप है, जो नित्य-निरन्तर तपस्याका फल प्रदान करते हैं, तपस्वीजनोंमें सर्वोत्तम तपस्वी हैं, नूतन जलधरके समान श्याम, स्वात्माराम और मनोहर हैं, उन भगवान् श्रीकृष्णकी मैं वन्दना करता हूँ। जो निष्काम और कामरूप हैं, कामनाके नाशक तथा कामदेवकी उत्पत्तिके कारण हैं, जो सर्वरूप, सर्वबीजस्वरूप, सर्वोत्तम

एवं सर्वेश्वर हैं, वेद जिनका स्वरूप है, जो वेदोंके बीज, वेदोक्त फलके दाता और फलरूप हैं, वेदोंके ज्ञाता, उसके विधानको जाननेवाले तथा सम्पूर्ण वेदवेत्ताओंके शिरोमणि हैं, उन भगवान् श्रीकृष्णको मैं प्रणाम करता हूँ।*

ऐसा कहकर वे नारायणदेव भक्तिभावसे युक्त हो उनकी आज्ञासे उन परमात्माके सामने रमणीय रत्नमय सिंहासनपर विराज गये। जो पुरुष प्रतिदिन एकाग्रचित्त हो तीनों संध्याओंके समय नारायणद्वारा किये गये इस स्तोत्रको सुनता और पढ़ता है, वह निष्पाप हो जाता है। उसे यदि पुत्रकी इच्छा हो तो पुत्र मिलता है और भार्याकी इच्छा हो तो प्यारी भार्या प्राप्त होती है। जो अपने राज्यसे भ्रष्ट हो गया है, वह इस स्तोत्रके पाठसे पुनः राज्य प्राप्त कर लेता है तथा धनसे वञ्चित हुए पुरुषको धनकी प्राप्ति हो जाती है। कारागारके भीतर विपत्तिमें पड़ा हुआ मनुष्य यदि इस स्तोत्रका पाठ करे तो निश्चय ही संकटसे मुक्त हो जाता है। एक वर्षतक इसका संयमपूर्वक श्रवण करनेसे रोगी अपने रोगसे छुटकारा पा जाता है।

सौति कहते हैं—शौनकजी! तत्पश्चात् परमात्मा श्रीकृष्णके वामपार्श्वसे भगवान् शिव प्रकट हुए। उनकी अङ्गकान्ति शुद्ध स्फटिकमणिके समान निर्मल एवं उज्ज्वल थी। उनके पाँच मुख थे और दिशाएँ ही उनके लिये वस्त्र थीं। उन्होंने मस्तकपर तपाये हुए सुवर्णके समान पीले रंगकी जटाओंका भार धारण कर रखा था। उनका मुख मन्द-मन्द मुसकानसे प्रसन्न दिखायी देता था। उनके प्रत्येक मस्तकमें तीन-तीन नेत्र थे। उनके सिरपर चन्द्राकार मुकुट शोभा पाता था। परमेश्वर शिवने हाथोंमें त्रिशूल, पट्टिश और जपमाला ले रखी थी। वे सिद्ध तो हैं ही, सम्पूर्ण सिद्धोंके ईश्वर भी हैं। योगियोंके गुरुके भी गुरु हैं। मृत्युकी भी मृत्यु हैं, मृत्युके ईश्वर हैं, मृत्युस्वरूप हैं और मृत्युपर विजय पानेवाले मृत्युञ्जय हैं। वे ज्ञानानन्दरूप, महाज्ञानी, महान् ज्ञानदाता तथा सबसे श्रेष्ठ हैं। पूर्ण चन्द्रमाकी प्रभासे धुले हुए-से गौरवर्ण शिवका दर्शन सुखपूर्वक होता है। उनकी आकृति मनको मोह लेती है। ब्रह्मतेजसे जाज्वल्यमान भगवान् शिव वैष्णवोंके शिरोमणि हैं। प्रकट होनेके पश्चात् श्रीकृष्णके सामने खड़े हो भगवान् शिवने भी हाथ जोड़कर उनका स्तवन किया। उस समय उनके सम्पूर्ण अङ्गोंमें रोमाञ्च हो आया था। नेत्रोंसे अश्रु झर रहे थे और उनकी वाणी अत्यन्त गद्गद हो रही थी।

महादेवजी बोले—जो जयके मूर्तिमान् रूप, जय देनेवाले, जय देनेमें समर्थ, जयकी प्राप्तिके कारण तथा विजयदाताओंमें सर्वश्रेष्ठ हैं, उन अपराजित देवता भगवान् श्रीकृष्णकी मैं वन्दना करता हूँ। सम्पूर्ण विश्व जिनका रूप है, जो विश्वके ईश्वरोंके भी ईश्वर हैं, विश्वेश्वर, विश्वकारण, विश्वाधार, विश्वके विश्वासभाजन तथा विश्वके कारणोंके भी कारण हैं, उन भगवान् श्रीकृष्णकी मैं वन्दना करता हूँ। जो जगत्की रक्षाके कारण, जगत्के संहारक तथा जगत्की सृष्टि करनेवाले परमेश्वर हैं; फलके बीज, फलके आधार, फलरूप और फलदाता

---

* वरं वरेण्यं वरदं वराहं वरकारणम्। कारणं कारणानां च कर्म तत्कर्मकारकम्॥
तपस्तत्फलदं शश्वत् तपस्विनां च तापसम्। वन्दे नवघनश्यामं स्वात्मारामं मनोहरम्॥
निष्कामं कामरूपं च कामघ्नं कामकारणम्। सर्वं सर्वेश्वरं सर्वबीजरूपमनुत्तमम्॥
वेदरूपं वेदबीजं वेदोक्तफलदं फलम्। वेदज्ञं तद्विधानं च सर्ववेदविदां वरम्॥
(ब्रह्मखण्ड ३। १०—१३)

हैं; उन भगवान् श्रीकृष्णको मैं प्रणाम करता हूँ। जो तेजःस्वरूप, तेजके दाता और सम्पूर्ण तेजस्वियोंमें श्रेष्ठ हैं, उन भगवान् गोविन्दकी मैं वन्दना करता हूँ।*

ऐसा कहकर महादेवजीने भगवान् श्रीकृष्णको मस्तक झुकाया और उनकी आज्ञासे श्रेष्ठ रत्नमय सिंहासनपर नारायणके साथ वार्तालाप करते हुए बैठ गये। जो मनुष्य भगवान् शिवद्वारा किये गये इस स्तोत्रका संयतचित्त होकर पाठ करता है, उसे सम्पूर्ण सिद्धियाँ मिल जाती हैं और पग-पगपर विजय प्राप्त होती है। उसके मित्र, धन और ऐश्वर्यकी सदा वृद्धि होती है तथा शत्रुसमूह, दुःख और पाप नष्ट हो जाते हैं।

सौति कहते हैं—तत्पश्चात् श्रीकृष्णके नाभि-कमलसे बड़े-बूढ़े महातपस्वी ब्रह्माजी प्रकट हुए। उन्होंने अपने हाथमें कमण्डलु ले रखा था। उनके वस्त्र, दाँत और केश सभी सफेद थे। चार मुख थे। वे ब्रह्माजी योगियोंके ईश्वर, शिल्पियोंके स्वामी तथा सबके जन्मदाता गुरु हैं। तपस्याके फल देनेवाले और सम्पूर्ण सम्पत्तियोंके जन्मदाता हैं। वे ही स्रष्टा और विधाता हैं तथा समस्त कर्मोंके कर्ता, धर्ता एवं संहर्ता हैं। चारों वेदोंको वे ही धारण करते हैं। वे वेदोंके ज्ञाता, वेदोंको प्रकट करनेवाले और उनके पति (पालक) हैं। उनका शील-स्वभाव सुन्दर है। वे सरस्वतीके कान्त, शान्तचित्त और कृपाकी निधि हैं। उन्होंने श्रीकृष्णके सामने खड़े हो दोनों हाथ जोड़कर उनका स्तवन किया। उस समय उनके सम्पूर्ण अङ्गोंमें रोमाञ्च हो आया था तथा उनकी ग्रीवा भगवान्‌के सामने भक्तिभावसे झुकी हुई थी।

ब्रह्माजी बोले—जो तीनों गुणोंसे अतीत और एकमात्र अविनाशी परमेश्वर हैं, जिनमें कभी कोई विकार नहीं होता, जो अव्यक्त और व्यक्तरूप हैं तथा गोप-वेष धारण करते हैं, उन गोविन्द श्रीकृष्णकी मैं वन्दना करता हूँ। जिनकी नित्य किशोरावस्था है, जो सदा शान्त रहते हैं, जिनका सौन्दर्य करोड़ों कामदेवोंसे भी अधिक है तथा जो नूतन जलधरके समान श्यामवर्ण हैं, उन परम मनोहर गोपीवल्लभको मैं प्रणाम करता हूँ। जो वृन्दावनके भीतर रासमण्डलमें विराजमान होते हैं, रासलीलामें जिनका निवास है तथा जो रासजनित उल्लासके लिये सदा उत्सुक रहते हैं, उन रासेश्वरको मैं नमस्कार करता हूँ।†

ऐसा कहकर ब्रह्माजीने भगवान् श्रीकृष्णके चरणोंमें प्रणाम किया और उनकी आज्ञासे नारायण तथा महादेवजीके साथ सम्भाषण करते हुए श्रेष्ठ रत्नमय सिंहासनपर बैठे। जो प्रातःकाल उठकर ब्रह्माजीके द्वारा किये गये इस स्तोत्रका पाठ करता है, उसके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं और बुरे सपने अच्छे सपनोंमें बदल जाते हैं। भगवान् गोविन्दमें भक्ति होती है, जो पुत्रों और पौत्रोंकी वृद्धि करनेवाली है। इस स्तोत्रका पाठ करनेसे अपयश नष्ट होता है और चिरकालतक सुयश बढ़ता रहता है।

---

* जयस्वरूपं जयदं जयेशं जयकारणम्। प्रवरं जयदानां च वन्दे तमपराजितम्॥
विश्वं विश्वेश्वरेशं च विश्वेशं विश्वकारणम्। विश्वाधारं च विश्वस्तं विश्वकारणकारणम्॥
विश्वरक्षाकारणं च विश्वघ्नं विश्वजं परम्। फलबीजं फलाधारं फलं च तत्फलप्रदम्॥
तेजःस्वरूपं तेजोदं सर्वतेजस्विनां वरम्। (ब्रह्मखण्ड ३। २३—२६)

† कृष्णं वन्दे गुणातीतं गोविन्दमेकमक्षरम्। अव्यक्तमव्ययं व्यक्तं गोपवेषविधायिनम्॥
किशोरवयसं शान्तं गोपीकान्तं मनोहरम्। नवीननीरदश्यामं कोटिकन्दर्पसुन्दरम्॥
वृन्दावनवनाभ्यर्णे रासमण्डलसंस्थितम्। रासेश्वरं रासवासं रासोल्लाससमुत्सुकम्॥
(ब्रह्मखण्ड ३। ३५—३७)

सौति कहते हैं—तत्पश्चात् परमात्मा श्रीकृष्णके वक्षःस्थलसे कोई एक पुरुष प्रकट हुआ, जिसके मुखपर मन्द मुस्कानकी छटा छा रही थी। उसकी अङ्गकान्ति श्वेत वर्णकी थी और उसने अपने मस्तकपर जटा धारण कर रखी थी। वह सबका साक्षी, सर्वज्ञ तथा सबके समस्त कर्मोंका द्रष्टा था। उसका सर्वत्र समभाव था। उसके हृदयमें सबके प्रति दया भरी थी। वह हिंसा और क्रोधसे सर्वथा अछूता था। उसे धर्मका ज्ञान था। वह धर्मस्वरूप, धर्मिष्ठ तथा धर्म प्रदान करनेवाला था। वही धर्मात्माओंमें 'धर्म' नामसे विख्यात है। परमात्मा श्रीकृष्णकी कलासे उसका प्रादुर्भाव हुआ है, श्रीकृष्णके सामने खड़े हुए उस पुरुषने पृथ्वीपर दण्डकी भाँति पड़कर प्रणाम किया और सम्पूर्ण कामनाओंके दाता उन सर्वेश्वर परमात्माका स्तवन आरम्भ किया।

धर्म बोले—जो सबको अपनी ओर आकृष्ट करनेवाले सच्चिदानन्दस्वरूप हैं, इसलिये 'कृष्ण' कहलाते हैं, सर्वव्यापी होनेके कारण जिनकी 'विष्णु' संज्ञा है, सबके भीतर निवास करनेसे जिनका नाम 'वासुदेव' है, जो 'परमात्मा' एवं 'ईश्वर' हैं, 'गोविन्द', 'परमानन्द', 'एक', 'अक्षर', 'अच्युत', 'गोपेश्वर', 'गोपीश्वर', 'गोप', 'गोरक्षक', 'विभु', 'गौओंके स्वामी', 'गोष्ठनिवासी', 'गोवत्स-पुच्छधारी', 'गोपों और गोपियोंके मध्य विराजमान', 'प्रधान', 'पुरुषोत्तम', 'नवघनश्याम', 'रासवास' और 'मनोहर' आदि नाम धारण करते हैं, उन भगवान् श्रीकृष्णकी मैं वन्दना करता हूँ।

ऐसा कहकर धर्म उठकर खड़े हुए। फिर वे भगवान्‌की आज्ञासे ब्रह्मा, विष्णु और महादेवजीके साथ वार्तालाप करके उस श्रेष्ठ रत्नमय सिंहासनपर बैठे। जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर धर्मके मुखसे निकले हुए इन चौबीस नामोंका पाठ करता है, वह सर्वथा सुखी और सर्वत्र विजयी होता है। मृत्युके समय उसके मुखसे निश्चय ही हरि-नामका उच्चारण होता है। अतः वह अन्तमें श्रीहरिके परम धाममें जाता है तथा उसे श्रीहरिकी अविचल दास्य-भक्ति प्राप्त होती है। उसके द्वारा सदा धर्मविषयक ही चेष्टा होती है। अधर्ममें उसका मन कभी नहीं लगता। धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी फल सदाके लिये उसके हाथमें आ जाता है। उसे देखते ही सारे पाप, सम्पूर्ण भय तथा समस्त दुःख उसी तरह भयसे भाग जाते हैं, जैसे गरुड़पर दृष्टि पड़ते ही सर्प पलायन कर जाते हैं।

सौति कहते हैं—तत्पश्चात् धर्मके वामपार्श्वसे एक रूपवती कन्या प्रकट हुई, जो साक्षात् दूसरी लक्ष्मीके समान सुन्दरी थी। वह 'मूर्ति' नामसे विख्यात हुई। तदनन्तर परमात्मा श्रीकृष्णके मुखसे एक शुक्ल वर्णवाली देवी प्रकट हुई, जो वीणा और पुस्तक धारण करनेवाली थी। वह करोड़ों पूर्ण चन्द्रमाओंकी शोभासे सम्पन्न थी। उसके नेत्र शरत्कालके प्रफुल्ल कमलोंका सौन्दर्य धारण करते थे। उसने अग्निमें शुद्ध किये गये उज्ज्वल वस्त्र धारण कर रखे थे और वह रत्नमय आभूषणोंसे विभूषित थी। उसके मुखपर मन्द-मन्द मुस्कराहट छा रही थी। दन्तपंक्ति बड़ी सुन्दर दिखायी देती थी। अवस्था सोलह वर्षकी थी। वह सुन्दरियोंमें भी श्रेष्ठ सुन्दरी थी। श्रुतियों, शास्त्रों और विद्वानोंकी परम जननी थी। वह वाणीकी अधिष्ठात्री, कवियोंकी इष्टदेवी, शुद्ध सत्त्वस्वरूपा और शान्तरूपिणी सरस्वती थी। गोविन्दके सामने खड़ी होकर पहले तो उसने वीणावादनके साथ उनके नाम और गुणोंका सुन्दर कीर्तन किया, फिर वह नृत्य करने लगी। श्रीहरिने प्रत्येक कल्पके युग-युगमें जो-जो लीलाएँ की हैं, उन सबका गान करते हुए सरस्वतीने हाथ जोड़कर उनकी स्तुति की।

सरस्वती बोलीं—'जो रासमण्डलके मध्य-भागमें विराजमान हैं, रासोल्लासके लिये सदा

उत्सुक रहनेवाले हैं, रत्नसिंहासनपर आसीन हैं, रत्नमय आभूषणोंसे विभूषित हैं, रासेश्वर एवं श्रेष्ठ रासकर्ता हैं, रासेश्वर राधाके प्राणवल्लभ हैं, रासके अधिष्ठाता देवता हैं तथा रासलीलाद्वारा मनोविनोद करनेवाले हैं, उन भगवान् गोविन्दकी मैं वन्दना करती हूँ। जो रासलीलाजनित श्रमसे थक गये हैं, प्रत्येक रासमें विहार करनेवाले हैं तथा रासके लिये उत्कण्ठित हुई गोपियोंके प्राणवल्लभ हैं, उन शान्त मनोहर श्रीकृष्णको मैं प्रणाम करती हूँ।'

यों कहकर प्रसन्न मुखवाली सती सरस्वतीने भगवान्‌को प्रणाम किया और सफलमनोरथ हो उनकी आज्ञासे वे श्रेष्ठ रत्नमय सिंहासनपर बैठीं। जो प्रातःकाल उठकर वाणीद्वारा किये गये इस स्तोत्रका पाठ करता है, वह सदा बुद्धिमान्, धनवान्, विद्वान् और पुत्रवान् होता है।

सौति कहते हैं—तत्पश्चात् परमात्मा श्रीकृष्णके मनसे एक गौरवर्णा देवी प्रकट हुईं, जो रत्नमय अलंकारोंसे अलंकृत थीं। उनके श्रीअङ्गोंपर पीताम्बरकी साड़ी शोभा पा रही थी। मुखपर मन्द हास्यकी छटा छा रही थी। वे नवयौवना देवी सम्पूर्ण ऐश्वर्योंकी अधिष्ठात्री थीं। वे ही फलरूपसे सम्पूर्ण सम्पत्तियाँ प्रदान करती हैं। स्वर्गलोकमें उन्हींको स्वर्गलक्ष्मी कहते हैं तथा राजाओंके यहाँ वे ही राजलक्ष्मी कहलाती हैं। श्रीहरिके सामने खड़ी होकर उन साध्वी लक्ष्मीने उन्हें हाथ जोड़कर प्रणाम किया। उनकी ग्रीवा भक्तिभावसे झुक गयी और उन्होंने उन परमात्मा भगवान् श्रीकृष्णका स्तवन किया।

महालक्ष्मी बोलीं—'जो सत्यस्वरूप, सत्यके स्वामी और सत्यके बीज हैं, सत्यके आधार, सत्यके ज्ञाता तथा सत्यके मूल हैं, उन सनातन देव श्रीकृष्णको मैं प्रणाम करती हूँ।'

यों कह श्रीहरिको मस्तक नवाकर तपाये हुए सुवर्णकी-सी कान्तिवाली लक्ष्मीदेवी दसों दिशाओंको प्रकाशित करती हुई सुखासनपर बैठ गयीं।

तदनन्तर परमात्मा श्रीकृष्णकी बुद्धिसे सबकी अधिष्ठात्री देवी ईश्वरी मूलप्रकृतिका प्रादुर्भाव हुआ। सुतप्त काञ्चनकी-सी कान्तिवाली वे देवी अपनी प्रभासे करोड़ों सूर्योंका तिरस्कार कर रही थीं। उनका मुख मन्द-मन्द मुस्कराहटसे प्रसन्न दिखायी देता था। नेत्र शरत्कालके प्रफुल्ल कमलोंकी शोभाको मानो छीन लेते थे। उनके श्रीअङ्गोंपर लाल रंगकी साड़ी शोभा पाती थी। वे रत्नमय आभरणोंसे विभूषित थीं। निद्रा, तृष्णा, क्षुधा, पिपासा, दया, श्रद्धा और क्षमा आदि जो देवियाँ हैं, उन सबकी तथा समस्त शक्तियोंकी वे ईश्वरी और अधिष्ठात्री देवी हैं। उनके सौ भुजाएँ हैं। वे दर्शनमात्रसे भय उत्पन्न करती हैं। उन्हींको दुर्गतिनाशिनी दुर्गा कहा गया है। वे परमात्मा श्रीकृष्णकी शक्तिरूपा तथा तीनों लोकोंकी परा जननी हैं। त्रिशूल, शक्ति, शार्ङ्गधनुष, खड्ग, बाण, शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, अक्षमाला, कमण्डलु, वज्र, अङ्कुश, पाश, भुशुण्डि, दण्ड, तोमर, नारायणास्त्र, ब्रह्मास्त्र, रौद्रास्त्र, पाशुपतास्त्र, पार्जन्यास्त्र, वारुणास्त्र, आग्नेयास्त्र तथा गान्धर्वास्त्र—इन सबको हाथोंमें धारण किये श्रीकृष्णके सामने खड़ी हो, प्रकृति देवीने प्रसन्नतापूर्वक उनका स्तवन किया।

प्रकृति बोलीं—प्रभो! मैं प्रकृति, ईश्वरी, सर्वेश्वरी, सर्वरूपिणी और सर्वशक्तिस्वरूपा कहलाती हूँ। मेरी शक्तिसे ही यह जगत् शक्तिमान् है तथापि मैं स्वतन्त्र नहीं हूँ; क्योंकि आपने मेरी सृष्टि की है, अतः आप ही तीनों लोकोंके पति, गति, पालक, स्रष्टा, संहारक तथा पुनः सृष्टि करनेवाले हैं। परमानन्द ही आपका स्वरूप है। मैं सानन्द आपकी वन्दना करती हूँ। प्रभो! आप चाहें तो पलक मारते-मारते ब्रह्माका भी पतन हो सकता है। जो भ्रूभङ्गकी लीलामात्रसे करोड़ों विष्णुओंकी सृष्टि कर सकता है, ऐसे आपके अनुपम प्रभावका

वर्णन करनेमें कौन समर्थ है? आप तीनों लोकोंके चराचर प्राणियों, ब्रह्मा आदि देवताओं तथा मुझ-जैसी कितनी ही देवियोंकी खेल-खेलमें ही सृष्टि कर सकते हैं। आप परिपूर्णतम परमात्मा हैं। भलीभाँति स्तुतिके योग्य हैं। विभो! मैं आपकी सानन्द वन्दना करती हूँ। असंख्य विश्वका आश्रयभूत महान् विराट् पुरुष जिनकी कलाका अंशमात्र है, उन परमात्मा भगवान् श्रीकृष्णको मैं आनन्दपूर्वक प्रणाम करती हूँ। ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवता, सम्पूर्ण वेद, मैं और सरस्वती—ये सब जिनकी स्तुति करनेमें असमर्थ हैं तथा जो प्रकृतिसे परे हैं, उन आप परमेश्वरको मैं नमस्कार करती हूँ। वेद तथा श्रेष्ठ विद्वान् लक्षण बताते हुए आपकी स्तुति करनेमें समर्थ नहीं हैं। भला जो निर्लक्ष्य हैं उनकी स्तुति कौन कर सकता है? ऐसे आप निरीह परमात्माको मैं प्रणाम करती हूँ।

ऐसा कहकर दुर्गादेवी श्रीकृष्णको प्रणाम करके उनकी आज्ञासे श्रेष्ठ रत्नमय सिंहासनपर बैठ गयीं। जो पूजाकालमें दुर्गाद्वारा किये गये परमात्मा श्रीकृष्णके इस स्तोत्रका पाठ करता है, वह सर्वत्र विजयी और सुखी होता है। दुर्गा-देवी उसका घर छोड़कर कभी नहीं जाती हैं। वह भवसागरमें रहकर भी अपने सुयशसे प्रकाशित होता रहता है और अन्तमें श्रीहरिके परम धामको जाता है। (अध्याय ३)

सावित्री, कामदेव, रति, अग्नि, अग्निदेव, जल, वरुणदेव, स्वाहा, वरुणानी, वायुदेव, वायवीदेवी तथा मेदिनीके प्राकट्यका वर्णन

सौति कहते हैं—शौनकजी! तत्पश्चात् श्रीकृष्णकी जिह्वाके अग्रभागसे शुद्ध स्फटिकके समान उज्ज्वल वर्णवाली एक मनोहारिणी देवीका प्रादुर्भाव हुआ, जो सफेद साड़ी पहने हुए सब प्रकारके आभूषणोंसे विभूषित थीं और हाथमें जपमाला लिये हुए थीं। उन्हें सावित्री कहा गया है। साध्वी सावित्रीने सामने खड़ी हो हाथ जोड़ भक्तिभावसे मस्तक झुकाकर सनातन परब्रह्म श्रीकृष्णका स्तवन आरम्भ किया।

सावित्री बोलीं—भगवन्! आप सबके बीज (आदिकारण) हैं। सनातन ब्रह्म-ज्योति हैं। परात्पर, निर्विकार एवं निरञ्जन ब्रह्म हैं। आप श्यामसुन्दर श्रीकृष्णको मैं नमस्कार करती हूँ।

यों कह मन्द-मन्द मुस्कराती हुई वेदमाता सावित्रीदेवी श्रीहरिको पुनः प्रणाम करके श्रेष्ठ रत्नमय सिंहासनपर आसीन हुईं। तत्पश्चात् परमात्मा श्रीकृष्णके मानससे एक पुरुष प्रकट हुआ, जो तपाये हुए सुवर्णके समान कान्तिमान् था। वह पाँच बाणोंद्वारा समस्त कामियोंके मनको मथ डालता है, इसलिये मनीषी पुरुष उसका नाम 'मन्मथ' कहते हैं। उस कामदेवके वामपार्श्वसे एक श्रेष्ठ कामिनी उत्पन्न हुई, जो परम सुन्दरी और सबके मनको मोह लेनेवाली थी। मन्द-मन्द मुस्कराती हुई उस सतीको देखकर समस्त प्राणियोंकी उसमें रति हो गयी! इसीलिये मनीषी पुरुषोंने उसका नाम 'रति' रख दिया। पाँच बाण और पुष्पमय धनुष धारण करनेवाले कामदेव श्रीहरिके सामने खड़े हो उनकी स्तुति करके आज्ञा पाकर रतिके साथ रमणीय रत्नमय सिंहासनपर बैठे। मारण, स्तम्भन, जृम्भन, शोषण और उन्मादन—ये कामदेवके पाँच बाण हैं। उन्हींको वे धारण करते हैं। अपने बाणोंकी परीक्षा करनेके लिये कामदेवने बारी-बारीसे वे सभी बाण चलाये। फिर तो ईश्वरकी इच्छासे सब लोग कामके वशीभूत हो गये। कामपरवश स्खलित महायोगी ब्रह्माजीका वीर्य अग्निके रूपमें उद्दीप्त हो उठा। वे देवेश्वर

अग्निदेव बड़ी-बड़ी लपटें उठाते हुए करोड़ों ताड़ोंके समान विशाल रूप धारण करके प्रज्वलित होने लगे। उस अग्निको बढ़ते देख श्रीकृष्णने लीलापूर्वक 'जल' की रचना की। वे अपने मुखसे निःश्वास वायुके साथ जलकी एक-एक बूँद गिराने लगे। मुखसे निकले हुए उस बिन्दुमात्र जलने सम्पूर्ण विश्वको आप्लावित कर दिया। उसके किञ्चित् कणमात्र जलने उस प्रज्वलित अग्निको शान्त कर दिया। तभीसे जलके द्वारा आग बुझने लगी। तत्पश्चात् वहाँ एक पुरुषका प्रादुर्भाव हुआ, जो उस अग्निके अधिदेवता थे। फिर पूर्वोक्त जलसे एक पुरुषका उत्थान हुआ, जिनका नाम 'वरुण' हुआ। वे ही जलके अधिष्ठाता देवता और समस्त जल-जन्तुओंके स्वामी हुए। इसके बाद उस अग्निदेवके वामपार्श्वसे एक कन्याका आविर्भाव हुआ, जिसका नाम 'स्वाहा' था। मनीषी पुरुष उसे अग्निकी पत्नी कहते हैं। जलेश्वर वरुणके वामपार्श्वसे भी एक कन्या प्रकट हुई, जो 'वरुणानी' के नामसे विख्यात थी। वही वरुणकी सती साध्वी प्रिया हुई। भगवान् श्रीकृष्णकी निःश्वास वायुसे श्रीमान् 'पवन' का प्रादुर्भाव हुआ, जो समस्त देहधारियोंके प्राण हैं। श्वास-प्रश्वासके रूपमें उन्हींकी कला प्रकट हुई है। वायुदेवके वामपार्श्वसे एक कन्या प्रकट हुई, जो वायुपत्नी 'वायवी' देवी कही गयी है।

श्रीकृष्णका शुक्र जलमें गिरा। वह एक हजार वर्षके बाद एक अंडेके रूपमें प्रकट हुआ। उसीसे महान् विराट् पुरुषकी उत्पत्ति हुई, जो सम्पूर्ण विश्वके आधार हैं। उन विराट् पुरुषके एक-एक रोम-कूपमें एक-एक ब्रह्माण्डकी स्थिति है। वे स्थूलसे भी स्थूलतम हैं। उनसे बड़ा दूसरा कोई नहीं है। वे परमात्मा श्रीकृष्णके सोलहवें अंश हैं। उन्हींको 'महाविष्णु' जानना चाहिये। वे ही सबके सनातन आधार हैं। जैसे जलमें कमलका पत्ता रहता है, उसी प्रकार वे महार्णवके जलमें शयन करते हैं। उनके शयन करते समय कानोंके मलसे दो दैत्य प्रकट हुए। वे दोनों जलसे उठकर ब्रह्माजीको मार डालनेके लिये उद्यत हो गये। तब भगवान् नारायणने उन दोनोंको अपने जघन-देशमें सुलाकर चक्रसे काट डाला। उन दोनोंके सम्पूर्ण मेदेसे यह सारी पृथ्वी निर्मित हुई, जिससे इसका नाम 'मेदिनी' हुआ। उसीपर सम्पूर्ण विश्वकी स्थिति है। उसकी अधिष्ठात्री देवीका नाम 'वसुन्धरा' है। (अध्याय ४)

ब्राह्म आदि कल्पोंका परिचय, गोलोकमें श्रीकृष्णका नारायण आदिके साथ रासमण्डलमें निवास, श्रीकृष्णके वामपार्श्वसे श्रीराधाका प्रादुर्भाव; राधाके रोमकूपोंसे गोपाङ्गनाओंका प्राकट्य तथा श्रीकृष्णसे गोपों, गौओं, बलीवर्दों, हंसों, श्वेत घोड़ों और सिंहोंकी उत्पत्ति; श्रीकृष्णद्वारा पाँच रथोंका निर्माण तथा पार्षदोंका प्राकट्य; भैरव, ईशान और डाकिनी आदिकी उत्पत्ति

महर्षि शौनकके पूछनेपर सौति कहते हैं—ब्रह्मन्! मैंने सबसे पहले ब्रह्मकल्पके चरित्रका वर्णन किया है। अब वाराहकल्प और पाद्मकल्प—इन दोनोंका वर्णन करूँगा, सुनिये। मुने! ब्राह्म, वाराह और पाद्म—ये तीन प्रकारके कल्प हैं; जो क्रमशः प्रकट होते हैं। जैसे सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग—ये चारों युग क्रमसे कहे गये हैं, वैसे ही वे कल्प भी हैं। तीन सौ साठ युगोंका एक दिव्य युग माना गया है। इकहत्तर दिव्य युगोंका एक मन्वन्तर होता है। चौदह मनुओंके व्यतीत हो जानेपर ब्रह्माजीका एक दिन होता है। ऐसे तीन सौ साठ

दिनोंके बीतनेपर ब्रह्माजीका एक वर्ष पूरा होता है। इस तरहके एक सौ आठ वर्षोंकी विधाताकी आयु बतायी गयी है। यह परमात्मा श्रीकृष्णका एक निमेषकाल है। कालवेत्ता विद्वानोंने ब्रह्माजीकी आयुके बराबर कल्पका मान निश्चित किया है। छोटे-छोटे कल्प बहुत-से हैं, जो संवर्त आदिके नामसे विख्यात हैं। महर्षि मार्कण्डेय सात कल्पोंतक जीनेवाले बताये गये हैं; परंतु वह कल्प ब्रह्माजीके एक दिनके बराबर ही बताया गया है। तात्पर्य यह कि मार्कण्डेय मुनिकी आयु ब्रह्माजीके सात दिनमें ही पूरी हो जाती है, ऐसा निश्चय किया गया है। ब्राह्म, वाराह और पाद्म—ये तीन महाकल्प कहे गये हैं। इनमें जिस प्रकार सृष्टि होती है, वह बताता हूँ, सुनिये। ब्राह्मकल्पमें मधु-कैटभके मेदसे मेदिनीकी सृष्टि करके स्रष्टाने भगवान् श्रीकृष्णकी आज्ञा ले सृष्टि-रचना की थी। फिर वाराहकल्पमें जब पृथ्वी एकार्णवके जलमें डूब गयी थी, वाराहरूपधारी भगवान् विष्णुके द्वारा अत्यन्त प्रयत्नपूर्वक रसातलसे उसका उद्धार करवाया और सृष्टि-रचना की; तत्पश्चात् पाद्मकल्पमें सृष्टिकर्ता ब्रह्माने विष्णुके नाभिकमलपर सृष्टिका निर्माण किया। ब्रह्मलोकपर्यन्त जो त्रिलोकी है, उसीकी रचना की, ऊपरके जो नित्य तीन लोक हैं, उनकी नहीं। सृष्टि-निरूपणके प्रसंगमें मैंने यह काल-गणना बतायी है और किञ्चिन्मात्र सृष्टिका निरूपण किया है। अब फिर आप क्या सुनना चाहते हैं?

शौनकजीने पूछा—सूतनन्दन! अब यह बताइये कि गोलोकमें सर्वव्यापी महान् परमात्मा गोलोकनाथने इन नारायण आदिकी सृष्टि करके फिर क्या किया? इस विषयका विस्तारपूर्वक वर्णन करनेकी कृपा करें।

सौतिने कहा—ब्रह्मन्! इन सबकी सृष्टि करके इन्हें साथ ले भगवान् श्रीकृष्ण अत्यन्त कमनीय सुरम्य रासमण्डलमें गये। रमणीय कल्पवृक्षोंके मध्यभागमें मण्डलाकार रासमण्डल अत्यन्त मनोहर दिखायी देता था। वह सुविस्तृत, सुन्दर, समतल और चिकना था। चन्दन, कस्तूरी, अगर और कुङ्कुमसे उसको सजाया गया था। उसपर दही, लावा, सफेद धान और दूर्वादल बिखेरे गये थे। रेशमी सूतमें गुँथे हुए नूतन चन्दन-पल्लवोंकी बन्दनवारों और केलेके खंभोंद्वारा वह चारों ओरसे घिरा हुआ था। करोड़ों मण्डप, जिनका निर्माण उत्तम रत्नोंके सारभागसे हुआ था, उस भूमिकी शोभा बढ़ाते थे। उनके भीतर रत्नमय प्रदीप जल रहे थे। वे पुष्प और सुगन्धकी धूपसे वासित थे। उनके भीतर अत्यन्त ललित प्रसाधन-सामग्री

रखी हुई थी। वहाँ जाकर जगदीश्वर श्रीकृष्ण सबके साथ उन मण्डपोंमें ठहरे। मुनिश्रेष्ठ! उस रासमण्डलका दर्शन करके वे सब लोग आश्चर्यसे चकित हो उठे। वहाँ श्रीकृष्णके वामपार्श्वसे एक कन्या प्रकट हुई, जिसने दौड़कर फूल ले आकर उन भगवान्‌के चरणोंमें अर्घ्य प्रदान किया। उसके अङ्ग अत्यन्त कोमल थे। वह मनोहारिणी और सुन्दरियोंमें भी सुन्दरी थी। उसके सुन्दर एवं अरुण ओष्ठ और अधर अपनी लालिमासे बन्धुजीव पुष्प

(दुपहरियेके फूल)-की शोभाको पराजित कर रहे थे। मनोहर दन्तपंक्ति मोतियोंकी श्रेणीको तिरस्कृत करती थी। वह सुन्दरी किशोरी बड़ी मनोहर थी। उसका सुन्दर मुख शरत्पूर्णिमाके कोटि चन्द्रोंकी शोभाको छीने लेता था। सीमन्तभाग बड़ा मनोहर था। नेत्र शरत्कालके प्रफुल्ल कमलोंके समान अत्यन्त सुन्दर दिखायी देते थे। उसकी मनोहर नासिकाके सामने पक्षिराज गरुडकी नुकीली चोंच हार मान चुकी थी। वह मनोहारिणी बाला अपने दोनों कपोलोंद्वारा सुनहरे दर्पणकी शोभाको तिरस्कृत कर रही थी। रत्नोंके आभूषणोंसे विभूषित दोनों कान बड़े सुन्दर लगते थे। सुन्दर कपोलोंमें चन्दन, अगुरु, कस्तूरी, कुङ्कुम और सिन्दूरकी बूँदोंसे पत्ररचना की गयी थी, जिससे वह बड़ी मनोहर जान पड़ती थी। उसके सँवारे हुए केशपाश मालतीकी मालासे अलंकृत थे। वह सती-साध्वी बाला अपने सिरपर सुन्दर एवं सुगन्धित वेणी धारण करती थी। उसके दोनों चरणस्थल कमलोंकी प्रभाको छीने लेते थे। उसकी मन्द-मन्द गति हंस और खंजनके गर्वका गञ्जन करनेवाली थी। वह उत्तम रत्नोंके सारभागसे बनी हुई मनोहर वनमाला, हीरेका बना हुआ हार, रत्ननिर्मित केयूर, कंगन, सुन्दर रत्नोंके सारभागसे निर्मित अत्यन्त मनोहर पाशक (गलेकी जंजीर या कानका पासा), बहुमूल्य रत्नोंका बना झनकारता हुआ मंजीर तथा अन्य नाना प्रकारके चित्राङ्कित सुन्दर जड़ाऊ आभूषण पहने हुए थी।

वह गोविन्दसे वार्तालाप करके उनकी आज्ञा पा मुसकराती हुई श्रेष्ठ रत्नमय सिंहासनपर बैठ गयी। उसकी दृष्टि अपने उन प्राणवल्लभके मुखारविन्दपर ही लगी हुई थी। उस किशोरीके रोमकूपोंसे तत्काल ही गोपाङ्गनाओंका आविर्भाव हुआ, जो रूप और वेषके द्वारा भी उसीकी समानता करती थीं। उनकी संख्या लक्षकोटि थी। वे सब-की-सब नित्य सुस्थिर-यौवना थीं। संख्याके जानकार विद्वानोंने गोलोकमें गोपाङ्गनागणोंकी उक्त संख्या ही निर्धारित की है। मुने! फिर तो श्रीकृष्णके रोमकूपोंसे भी उसी क्षण गोपगणोंका आविर्भाव हुआ, जो रूप और वेषमें भी उन्हींके समान थे। संख्यावेत्ता महर्षियोंका कथन है कि श्रुतिमें गोलोकके कमनीय मनोहर रूपवाले गोपोंकी संख्या तीस करोड़ बतायी गयी है।

फिर तत्काल ही श्रीकृष्णके रोमकूपोंसे नित्य सुस्थिर यौवनवाली गौएँ प्रकट हुईं, जिनके रूप-रंग अनेक प्रकारके थे। बहुतेरे बलीवर्द (साँड़), सुरभि जातिकी गौएँ, नाना प्रकारके सुन्दर-सुन्दर बछड़े और अत्यन्त मनोहर, श्यामवर्णवाली बहुत-सी कामधेनु गायें भी वहाँ तत्काल प्रकट हो गयीं। उनमेंसे एक मनोहर बलीवर्दको, जो करोड़ों सिंहोंके समान बलशाली था, श्रीकृष्णने शिवको सवारीके लिये दे दिया। तत्पश्चात् श्रीकृष्णके चरणोंके नखछिद्रोंसे सहसा मनोहर हंस-पंक्ति प्रकट हुई। उन हंसोंमें नर, मादा और बच्चे सभी मिले-जुले थे। उनमेंसे एक राजहंसको, जो महान् बल-पराक्रमसे सम्पन्न था, श्रीकृष्णने तपस्वी ब्रह्माको वाहन बनानेके लिये अर्पित कर दिया।

तदनन्तर परमात्मा श्रीकृष्णके बायें कानके छिद्रसे सफेद रंगके घोड़ोंका समुदाय प्रकट हुआ, जो बड़ा मनोहर जान पड़ता था। उनमेंसे एक श्वेत अश्व गोपाङ्गनावल्लभ श्रीकृष्णने देवसभामें विराजमान धर्मको सवारीके लिये प्रसन्नतापूर्वक दे दिया। फिर उन परम पुरुषके दाहिने कानके छिद्रसे उस देवसभाके भीतर ही महान् बलवान् और पराक्रमी सिंहोंकी श्रेणी प्रकट हुई। श्रीकृष्णने उनमेंसे एक सिंह जो बहुमूल्य श्रेष्ठ हारसे अलंकृत था, बड़े आदरके साथ प्रकृति (दुर्गा)-देवीको अर्पित कर दिया। उन्हें वही सिंह दिया गया, जिसे वे लेना चाहती थीं।

इसके बाद योगीश्वर श्रीकृष्णने योगबलसे पाँच रथोंका निर्माण किया। वे सब शुद्ध एवं सर्वश्रेष्ठ रत्नोंसे बनाये गये थे। मनके समान वेगसे चलनेवाले और मनोहर थे। उनकी ऊँचाई लाख योजनकी और विस्तार सौ योजनका था। उनमें लाख-लाख पहिये लगे थे। उनका वेग वायुके समान था। उन रथोंमें एक-एक लाख क्रीड़ाभवन बने हुए थे। उनमें शृङ्गारोचित भोगवस्तुएँ और असंख्य शय्याएँ थीं। उन गृहोंमें लाखों रत्नमय दीप प्रकाश फैलाते थे और लाखों घोड़े उस रथकी शोभा बढ़ाते थे। भाँति-भाँतिके विचित्र चित्र उनमें अङ्कित थे। सुन्दर रत्नमय कलश उनकी उज्ज्वलता बढ़ा रहे थे। रत्नमय दर्पणों और आभूषणोंसे वे सभी रथ (विमान) भरे हुए थे। श्वेत चँवर उनकी शोभा बढ़ा रहे थे। अग्निमें तपाकर शुद्ध किये गये सुनहरे वस्त्र, विचित्र-विचित्र माला, श्रेष्ठ मणि, मोती, माणिक्य तथा हीरोंके हारोंसे वे सभी रथ अलंकृत थे। कुछ-कुछ लाल रंगके असंख्य सुन्दर कृत्रिम कमल, जो श्रेष्ठ रत्नोंके सारभागसे निर्मित हुए थे, उन रथोंको सुशोभित कर रहे थे।

द्विजश्रेष्ठ! भगवान् श्रीकृष्णने उनमेंसे एक रथ तो नारायणको दे दिया और एक राधिकाको देकर शेष सभी रथ अपने लिये रख लिये। तत्पश्चात् श्रीकृष्णके गुह्यदेशसे पिङ्गलवर्णवाले पार्षदोंके साथ एक पिङ्गल पुरुष प्रकट हुआ। गुह्यदेशसे आविर्भूत होनेके कारण वे सब गुह्यक कहलाये और वह पुरुष उन गुह्यकोंका स्वामी कुबेर कहलाया, जो धनाध्यक्षके पदपर प्रतिष्ठित है। कुबेरके वामपार्श्वसे एक कन्या प्रकट हुई, जो कुबेरकी पत्नी हुई। वह देवी समस्त सुन्दरियोंमें मनोरमा थी, अतः उसी नामसे प्रसिद्ध हुई। फिर भगवान्‌के गुह्यदेशसे भूत, प्रेत, पिशाच, कूष्माण्ड, ब्रह्मराक्षस और विकृत अङ्गवाले वेताल प्रकट हुए। मुने! तदनन्तर श्रीकृष्णके मुखसे कुछ पार्षदोंका प्राकट्य हुआ, जिनके चार भुजाएँ थीं। वे सब-के-सब श्यामवर्ण थे और हाथोंमें शङ्ख, चक्र, गदा एवं पद्म धारण करते थे। उनके गलेमें वनमाला लटक रही थी। उन सबने पीताम्बर पहन रखे थे, उनके मस्तकपर किरीट, कानोंमें कुण्डल तथा अन्यान्य अङ्गोंमें रत्नमय आभूषण शोभा दे रहे थे। श्रीकृष्णने वे चार भुजाधारी पार्षद नारायणको दे दिये। गुह्यकोंको उनके स्वामी कुबेरके हवाले किया और भूत-प्रेतादि भगवान् शङ्करको अर्पित कर दिये।

तदनन्तर श्रीकृष्णके चरणारविन्दोंसे द्विभुज पार्षद प्रकट हुए, जो श्यामवर्णके थे और हाथोंमें जपमाला लिये हुए थे। वे श्रेष्ठ पार्षद निरन्तर आनन्दपूर्वक भगवान्‌के चरणकमलोंका ही चिन्तन करते थे। श्रीकृष्णने उन्हें दास्यकर्ममें नियुक्त किया। वे दास यत्नपूर्वक अर्घ्य लिये प्रकट हुए थे। वे सभी श्रीकृष्णपरायण वैष्णव थे। उनके सारे अङ्ग पुलकित थे, नेत्रोंसे अश्रु झर रहे थे और वाणी गद्गद थी। उनका चित्त केवल भगवच्चरणारविन्दोंके चिन्तनमें ही संलग्न रहता था।

इसके बाद श्रीकृष्णके दाहिने नेत्रसे भयंकर गण प्रकट हुए, जो हाथोंमें त्रिशूल और पट्टिश लिये हुए थे। उन सबके तीन नेत्र थे और मस्तकपर चन्द्राकार मुकुट धारण करते थे। वे सब-के-सब विशालकाय तथा दिगम्बर थे। प्रज्वलित अग्निशिखाके समान जान पड़ते थे। वे सभी महान् भाग्यशाली भैरव कहलाये। वे शिवके समान ही तेजस्वी थे। रुरुभैरव, संहारभैरव, कालभैरव, असितभैरव, क्रोधभैरव, भीषणभैरव, महाभैरव तथा खट्वाङ्गभैरव—ये आठ भैरव माने गये हैं।

श्रीकृष्णके बायें नेत्रसे एक भयंकर पुरुष प्रकट हुआ, जो त्रिशूल, पट्टिश, व्याघ्रचर्ममय वस्त्र और गदा धारण किये हुए था। वह

दिगम्बर, विशालकाय, त्रिनेत्रधारी और चन्द्राकार मुकुट धारण करनेवाला था। वह महाभाग पुरुष 'ईशान' कहलाया, जो दिक्पालोंका स्वामी है। इसके बाद श्रीकृष्णकी नासिकाके छिद्रसे डाकिनियाँ, योगिनियाँ तथा सहस्रों क्षेत्रपाल प्रकट हुए। इनके सिवा उन परम पुरुषके पृष्ठदेशसे सहसा तीन करोड़ श्रेष्ठ देवताओंका प्रादुर्भाव हुआ, जो दिव्य मूर्तिधारी थे। (अध्याय ५)

श्रीकृष्णका नारायण आदिको लक्ष्मी आदिका पत्नीरूपमें दान, महादेवजीका दार-संयोगमें अरुचि प्रकट करके निरन्तर भजनके लिये वर माँगना तथा भगवान्‌का उन्हें वर देते हुए उनके नाम आदिकी महिमा बताकर उन्हें भविष्यमें शिवासे विवाहकी आज्ञा देना तथा शिवा आदिको मन्त्रादिका उपदेश करना

सौति कहते हैं—तदनन्तर श्रीकृष्णने श्रेष्ठ रत्नोंकी मालाके साथ महालक्ष्मी और सरस्वती—इन दो देवियोंको भी नारायणके हाथमें सादर समर्पित कर दिया। तत्पश्चात् ब्रह्माजीको सावित्री, धर्मको मूर्ति, कामदेवको रूपवती रति और कुबेरको मनोरमा सादर प्रदान की। इसी तरह अन्यान्य स्त्रियोंको भी पतियोंके हाथमें दिया। जो-जो स्त्री जिस-जिससे प्रकट हुई थी, उस-उस रूपवती सतीको उसी-उसी पतिके हाथोंमें अर्पित किया। तदनन्तर सर्वेश्वर श्रीकृष्णने योगियोंके गुरु शंकरजीको बुलाकर प्रिय वाणीमें कहा—'आप देवी सिंहवाहिनीको ग्रहण करें।' श्रीकृष्णका यह वचन सुनकर नीललोहित शिव हँसे और डरते हुए विनीत भावसे उन प्राणेश्वर प्रभु अच्युतसे बोले। महादेवजीने पहले प्रकृतिके दोष बताकर उसे ग्रहण न करनेकी इच्छा प्रकट की। फिर इस प्रकार कहा—

श्रीमहेश्वर बोले—नाथ! मुझे गृहिणी नहीं चाहिये। मुझे तो मनचाहा वर दीजिये। जिस सेवकको जो अभीष्ट हो, श्रेष्ठ स्वामी उसे वही वस्तु देते हैं। 'मैं आपकी भक्तिमें लगा रहूँ, आपके चरणोंकी दासता—सेवा करता रहूँ' यह लालसा मेरे हृदयमें निरन्तर बढ़ रही है। आपके नाम-जपसे, आपके चरणकमलोंकी सेवासे मुझे कभी

तृप्ति नहीं होती है। मैं सोते-जागते हर समय अपने पाँच मुखोंसे आपके नाम और गुणोंका, जो मङ्गलके आश्रय हैं, निरन्तर गान करता हुआ सर्वत्र विचरा करता हूँ। मेरा मन कोटि-कोटि कल्पोंतक आपके स्वरूपका ध्यान करनेमें ही तत्पर रहे। भोगेच्छामें नहीं, यह योग और तपस्यामें ही संलग्न रहे। आपकी सेवा, पूजा, वन्दना और नाम-कीर्तनमें ही इसे सदा उल्लास प्राप्त हो। इनसे विरत होनेपर यह उद्विग्न हो उठे। सम्पूर्ण वरोंके ईश्वर! आपके नाम और गुणोंका स्मरण, कीर्तन, श्रवण, जप, आपके मनोहर

रूपका ध्यान, आपके चरणकमलोंकी सेवा, आपकी वन्दना, आपके प्रति आत्मसमर्पण और नित्य आपके नैवेद्य (प्रसाद)-का भोजन—यह जो नौ प्रकारकी भक्ति है, उसीको मुझे श्रेष्ठ वरदान मानकर दीजिये। प्रभो! सार्ष्टि (आपके समान ऐश्वर्यकी प्राप्ति), सालोक्य (आपके समान लोककी प्राप्ति), सारूप्य (आपके समान रूपकी प्राप्ति), सामीप्य (आपके निकट रहनेका सौभाग्य), साम्य (आपकी समताकी प्राप्ति) और लीनता (आपमें मिलकर एक हो जाना अथवा सायुज्यकी प्राप्ति)—मुक्त पुरुष ये छः प्रकारकी मुक्तियाँ बताते हैं। अणिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, महिमा, ईशित्व, वशित्व, सर्वकामावसायिता, सर्वज्ञता, दूरश्रवण, परकायप्रवेश, वाक्सिद्धि, कल्पवृक्षत्व, सृष्टिशक्ति, संहारशक्ति, अमरत्व और सर्वाग्रगण्यता—ये अठारह सिद्धियाँ मानी गयी हैं। सर्वेश्वर! योग, तप, सब प्रकारके दान, व्रत, यश, कीर्ति, वाणी, सत्य, धर्म, उपवास, सम्पूर्ण तीर्थोंमें भ्रमण, स्नान, आपके सिवा अन्य देवताका पूजन, देवप्रतिमाओंका दर्शन, सात द्वीपोंकी सात परिक्रमा, समस्त समुद्रोंमें स्नान, सभी स्वर्गोंके दर्शन, ब्रह्मपद, रुद्रपद, विष्णुपद तथा परमपद—ये तथा और भी जो अनिर्वचनीय, वाञ्छनीय पद हैं, वे सब-के-सब आपकी भक्तिके कलांशकी सोलहवीं कलाके भी बराबर नहीं हैं।

महादेवजीका यह वचन सुनकर भगवान् श्रीकृष्ण हँसे और उन योगिगुरु महादेवजीसे यह सर्वसुखदायक सत्य वचन बोले—

श्रीभगवान्‌ने कहा—सर्वज्ञोंमें श्रेष्ठ सर्वेश्वर शिव! तुम पूरे सौ करोड़ कल्पोंतक निरन्तर दिन-रात मेरी सेवा करो। सुरेश्वर! तुम तपस्वीजनों, सिद्धों, योगियों, ज्ञानियों, वैष्णवों तथा देवताओंमें सबसे श्रेष्ठ हो। शम्भो! तुम अमरत्व लाभ करो और महान् मृत्युञ्जय हो जाओ। मेरे वरसे तुम्हें सब प्रकारकी सिद्धियाँ, वेदोंका ज्ञान और सर्वज्ञता प्राप्त होगी। वत्स! तुम लीलापूर्वक असंख्य ब्रह्माओंका पतन देखोगे। शिव! आजसे तुम ज्ञान, तेज, अवस्था, पराक्रम, यश और तेजमें मेरे समान हो जाओ। तुम मेरे लिये प्राणोंसे भी अधिक प्रिय हो। तुमसे बढ़कर मेरा कोई प्रिय भक्त नहीं है—

त्वत्परो नास्ति मे प्रेयांस्त्वं मदीयात्मनः परः।
ये त्वां निन्दन्ति पापिष्ठा ज्ञानहीना विचेतनाः।
पच्यन्ते कालसूत्रेण यावच्चन्द्रदिवाकरौ।

शिव! तुमसे बढ़कर अत्यन्त प्रिय मेरे लिये दूसरा नहीं है। तुम मेरी आत्मासे बढ़कर हो। जो पापिष्ठ, अज्ञानी और चेतनाहीन मनुष्य तुम्हारी निन्दा करते हैं, वे तबतक कालसूत्र नरकमें पकाये जाते हैं, जबतक चन्द्रमा और सूर्यकी सत्ता रहती है।

शिव! तुम सौ कोटि कल्पोंके पश्चात् शिवाको ग्रहण करोगे। मेरा वचन कभी व्यर्थ नहीं होता। तुम्हें इसका पालन करना चाहिये। तुम मेरे और अपने वचनका भी पालन करो। शम्भो! तुम प्रकृति (दुर्गा)-को ग्रहण करके दिव्य सहस्र वर्षोंतक महान् सुख एवं शृङ्गाररसका आस्वादन करोगे, इसमें संशय नहीं है। तुम केवल तपस्वी नहीं हो। मेरे समान ही महान् ईश्वर हो। जो स्वेच्छामय ईश्वर है, वह समयानुसार गृही, तपस्वी और योगी हुआ करता है। शिव! दार-संयोग (पत्नी-परिग्रह)-में तुमने जो दुःख बताया है, उसके विषयमें मैं यह कहना चाहता हूँ कि कुलटा स्त्री ही स्वामीको दुःख देती है, पतिव्रता नहीं। जो महान् कुलमें उत्पन्न हुई है, कुलीन एवं कुल-मर्यादाका पालन करनेवाली है, वह स्नेहपूर्वक उसी तरह पतिका पालन करती है, जैसे माता उत्तम पुत्रका। पति पतित हो या अपतित, दरिद्र हो या धनवान्—कुलवती स्त्रीके

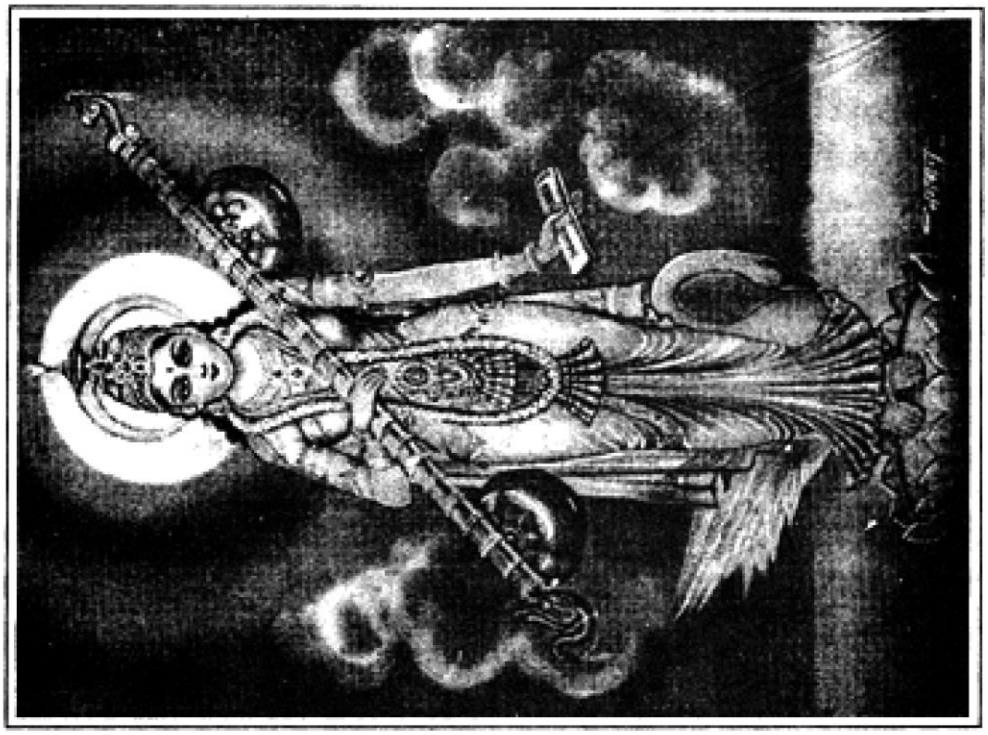

भगवती सरस्वती

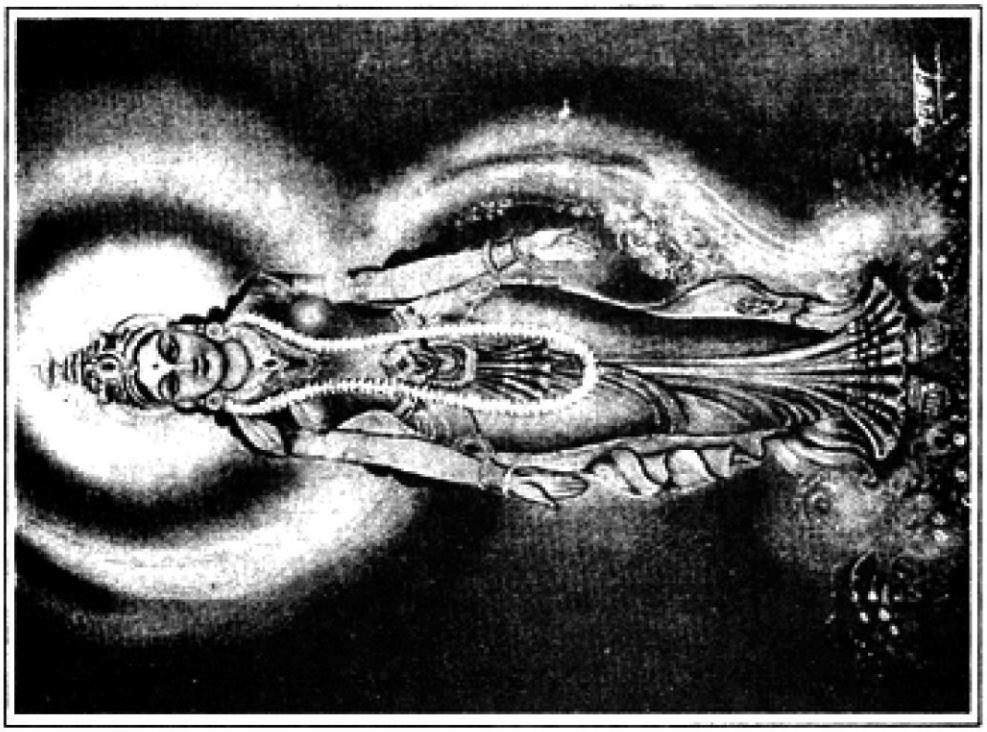

भगवती लक्ष्मी

लिये वही बन्धु, आश्रय और देवता है। जो नीच कुलमें उत्पन्न हुई हैं, जिनमें माता-पिताके बुरे शील, स्वभाव और आचरणका सम्मिश्रण हुआ है तथा जो परपुरुषोंके उपभोगमें आनेवाली हैं, अवश्य वे ही स्त्रियाँ सदा पतिकी निन्दा करती हैं। जो पतिको हम दोनोंसे भी बढ़कर देखती और समझती है, वह सती-साध्वी स्त्री गोलोकमें अपने स्वामीके साथ कोटि कल्पोंतक आनन्द भोगती है। शिव! वह वैष्णवी प्रकृति शिवप्रिया होकर तुम्हारे लिये कल्याणमयी होगी। अतः मेरी आज्ञासे लोक-कल्याणके निमित्त उस साध्वीको भार्यारूपसे ग्रहण करो।

तदनन्तर भगवान् श्रीकृष्णने शिवलिङ्गके स्थापन और पूजनका महान् फल बतलाते हुए कहा—जो 'महादेव', 'महादेव' और 'महादेव' का उच्चारण करता है, उसके पीछे मैं उस नाम-श्रवणके लोभसे अत्यन्त भयभीतकी भाँति जाता हूँ। जो मनुष्य 'शिव' शब्दका उच्चारण करके प्राणोंका परित्याग करता है, वह कोटि जन्मोंके उपार्जित पापसे मुक्त हो मोक्ष प्राप्त कर लेता है। 'शिव' शब्द कल्याणका वाचक है और 'कल्याण' शब्द मुक्तिका। शिवके उच्चारणसे मोक्ष या कल्याणकी प्राप्ति होती है, इसीलिये महादेवजीको शिव कहा गया है*। धन और भाई-बन्धुओंका वियोग होनेपर जो शोक-सागरमें डूब गया हो, वह मनुष्य शिव शब्दका उच्चारण करके सर्वथा कल्याणका भागी होता है। 'शि' पापनाशक अर्थमें है और 'व' मोक्षदायक अर्थमें। महादेवजी मनुष्योंके पापहन्ता और मोक्षदाता हैं। इसलिये उन्हें शिव कहा गया है। जिसकी वाणीमें शिव—यह मङ्गलमय नाम विद्यमान है, उसके करोड़ों जन्मोंका पाप निश्चय ही नष्ट हो जाता है।

शूलधारी महादेवजीसे ऐसा कहकर भगवान् श्रीकृष्णने उन्हें कल्पवृक्ष-मन्त्र और मृत्युञ्जय-तत्त्वज्ञान दिया। तत्पश्चात् वे सिंहवाहिनी दुर्गासे बोले—

श्रीभगवान्‌ने कहा—वत्से! इस समय तुम गोलोकमें मेरे पास रहो। फिर समय आनेपर कल्याणके आश्रयभूत मङ्गलदाता शिवको पतिरूपमें प्राप्त करोगी। सुमुखि! सम्पूर्ण देवताओंके तेजःपुञ्जसे प्रकट हो समस्त दैत्योंका संहार करके तुम सबके द्वारा पूजित होओगी। तदनन्तर कल्प-विशेषमें सत्ययुग आनेपर तुम दक्षकन्या सती होओगी और शिवकी सुशीला गृहिणी बनोगी। फिर यज्ञमें अपने स्वामीकी निन्दा सुनकर शरीरका त्याग कर दोगी और हिमवान्‌की पत्नी मेनाके गर्भसे जन्म लेकर पार्वती नामसे विख्यात होओगी। उस समय सहस्र दिव्य वर्षोंतक तुम शिवके साथ विहार करोगी। तत्पश्चात् तुम सर्वदाके लिये पतिके साथ पूर्णतः अभिन्नता प्राप्त कर लोगी। सुरेश्वरि! प्रतिवर्ष प्रशस्त समयमें समस्त लोकोंमें तुम्हारी शरत्कालिक पूजा होगी। गाँवों और नगरोंमें तुम ग्रामदेवताके रूपमें पूजित होओगी तथा विभिन्न स्थानोंमें तुम्हारे पृथक्-पृथक् मनोहर नाम होंगे। मेरी आज्ञासे शिवरचित नाना प्रकारके तन्त्रोंद्वारा तुम्हारी पूजा की जायगी। मैं तुम्हारे लिये स्तोत्र और कवचका विधान करूँगा। तुम्हारे सेवक ही महान् और सिद्ध होंगे तथा धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षरूप फलके भागी होंगे। मातः! पुण्यक्षेत्र भारतवर्षमें जो तुम्हारी

---

*महादेव महादेव महादेवेति वादिनः।
पश्चाद्यामि महात्रस्तो नामश्रवणलोभतः। शिवेति मन्त्रमुच्चार्य प्राणांस्त्यजति यो नरः॥
कोटिजन्मार्जितात् पापान्मुक्तो मुक्तिं प्रयाति सः। शिवं कल्याणवचनं कल्याणं मुक्तिवाचिकम्॥
यतस्तत् प्रभवेत्तेन स शिवः परिकीर्तितः। (ब्रह्मखण्ड ६। ४८—५१)

सेवा-पूजा करेंगे, उनके यश, कीर्ति, धर्म और ऐश्वर्यकी वृद्धि होगी।

प्रकृतिसे ऐसा कहकर भगवान्‌ने उसे कामबीज (क्लीं)-सहित एकादशाक्षर-मन्त्रका उपदेश दिया, जो परम उत्तम मन्त्रराज कहा गया है। फिर विधिपूर्वक ध्यानका उपदेश दिया तथा भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये श्री (श्रीं), माया (ह्रीं) तथा काम (क्लीं) बीजसहित दशाक्षर-मन्त्रका उपदेश दिया। साथ ही सृष्टिके लिये उपयोगी शक्ति और मनोवाञ्छित वस्तु प्रदान करनेवाली सम्पूर्ण सिद्धि देकर भगवान्‌ने प्रकृतिको उत्कृष्ट तत्त्वज्ञान भी प्रदान किया। इस तरह उसे त्रयोदशाक्षर-मन्त्र देकर जगदीश्वर श्रीकृष्णने शिवको भी स्तोत्र और कवच दिया। ब्रह्मन्! फिर धर्मको भी वही मन्त्र और वही सिद्धि एवं ज्ञान देकर कामदेव, अग्नि और वायुको भी मन्त्र आदिका उपदेश दिया। इसी प्रकार कुबेर आदिको मन्त्र आदिका उत्तम उपदेश देकर विधाताके भी विधाता भगवान् श्रीकृष्ण सृष्टिके लिये ब्रह्माजीसे इस प्रकार बोले—

श्रीभगवान्‌ने कहा—महाभाग विधे! तुम सहस्र दिव्य वर्षोंतक मेरी प्रसन्नताके लिये तप करके नाना प्रकारकी उत्तम सृष्टि करो।

ऐसा कहकर श्रीकृष्णने ब्रह्माजीको एक मनोरम माला दी। फिर गोप-गोपियोंके साथ वे नित्य-नूतन दिव्य वृन्दावनमें चले गये। (अध्याय ६)

सृष्टिका क्रम—ब्रह्माजीके द्वारा मेदिनी, पर्वत, समुद्र, द्वीप, मर्यादापर्वत, पाताल, स्वर्ग आदिका निर्माण; कृत्रिम जगत्‌की अनित्यता तथा वैकुण्ठ, शिवलोक तथा गोलोककी नित्यताका प्रतिपादन

सौति कहते हैं—शौनकजी! तब भगवान्‌की आज्ञाके अनुसार तपस्या करके अभीष्ट सिद्धि पाकर ब्रह्माजीने सर्वप्रथम मधु और कैटभके मेदेसे मेदिनीकी सृष्टि की। उन्होंने आठ प्रधान पर्वतोंकी रचना की। वे सब बड़े मनोहर थे। उनके बनाये हुए छोटे-छोटे पर्वत तो असंख्य हैं, उनके नाम क्या बताऊँ? मुख्य-मुख्य पर्वतोंकी नामावली सुनिये—सुमेरु, कैलास, मलय, हिमालय, उदयाचल, अस्ताचल, सुवेल और गन्धमादन—ये आठ प्रधान पर्वत हैं। फिर ब्रह्माजीने सात समुद्रों, अनेकानेक नदों और कितनी ही नदियोंकी सृष्टि की। वृक्षों, गाँवों और नगरोंका निर्माण किया। समुद्रोंके नाम सुनिये—लवण, इक्षुरस, सुरा, घृत, दही, दूध और सुस्वादु जलके वे समुद्र हैं। उनमेंसे पहलेकी लंबाई-चौड़ाई एक लाख योजनकी है। बादवाले उत्तरोत्तर दुगुने होते गये हैं। इन समुद्रोंसे घिरे हुए सात द्वीप हैं। उनके भूमण्डल कमलपत्रकी आकृतिवाले हैं। उनमें उपद्वीप और मर्यादापर्वत भी सात-सात ही हैं। ब्रह्मन्! अब आप उन द्वीपोंके नाम सुनिये, जिनकी पहले ब्रह्माजीने रचना की थी। वे हैं—जम्बूद्वीप, शाकद्वीप, कुशद्वीप, प्लक्षद्वीप, क्रौञ्चद्वीप, न्यग्रोध (अथवा शाल्मलि)-द्वीप तथा पुष्करद्वीप। भगवान् ब्रह्माने मेरुपर्वतके आठ शिखरोंपर आठ लोकपालोंके विहारके लिये आठ मनोहर पुरियोंका निर्माण किया। उस पर्वतके मूलभाग—पाताललोकमें उन्होंने भगवान् अनन्त (शेषनाग)-की नगरी बनायी। तदनन्तर लोकनाथ ब्रह्माने उस पर्वतके ऊपर-ऊपर सात स्वर्गोंकी सृष्टि की। शौनकजी! उन सबके नाम सुनिये—भूर्लोक, भुवर्लोक, परम मनोहर स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक तथा सत्यलोक।

मेरुके सबसे ऊपरी शिखरपर जरा-मृत्यु आदिसे रहित ब्रह्मलोक है। उससे भी ऊपर ध्रुवलोक है, जो सब ओरसे अत्यन्त मनोहर है। जगदीश्वर ब्रह्माजीने उस पर्वतके निम्नभागमें सात पातालोंका निर्माण किया। मुने! वे स्वर्गकी अपेक्षा भी अधिक भोग-साधनोंसे सम्पन्न हैं और क्रमशः एकसे दूसरे उत्तरोत्तर नीचे भागमें स्थित हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, पाताल तथा रसातल। सबसे नीचे रसातल ही है। सात द्वीप, सात स्वर्ग तथा सात पाताल—इन लोकोंसहित जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड है, वह ब्रह्माजीके ही अधिकारमें है। शौनक! ऐसे-ऐसे असंख्य ब्रह्माण्ड हैं और महाविष्णुके रोमाञ्च-विवरोंमें उनकी स्थिति है। श्रीकृष्णकी मायासे प्रत्येक ब्रह्माण्डमें दिक्पाल, ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर हैं, देवता, मनुष्य आदि सभी प्राणी स्थित हैं। इन ब्रह्माण्डोंकी गणना करनेमें न तो लोकनाथ ब्रह्मा, न शङ्कर, न धर्म और न विष्णु ही समर्थ हैं; फिर और देवता किस गिनतीमें हैं? विप्रवर! कृत्रिम विश्व तथा उसके भीतर रहनेवाली जो वस्तुएँ हैं, वे सब अनित्य तथा स्वप्नके समान नश्वर हैं। वैकुण्ठ, शिवलोक तथा इन दोनोंसे परे गोलोक है, ये सब नित्य-धाम हैं। इन सबकी स्थिति कृत्रिम विश्वसे बाहर है। ठीक उसी तरह, जैसे आत्मा, आकाश और दिशाएँ कृत्रिम जगत्से बाहर तथा नित्य हैं।

(अध्याय ७)

सावित्रीसे वेद आदिकी सृष्टि, ब्रह्माजीसे सनकादिकी, सस्त्रीक स्वायम्भुव मनुकी, रुद्रोंकी, पुलस्त्यादि मुनियोंकी तथा नारदकी उत्पत्ति, नारदको ब्रह्माका और ब्रह्माजीको नारदका शाप

सौति कहते हैं—तदनन्तर सावित्रीने चार मनोहर वेदोंको प्रकट किया। साथ ही न्याय और व्याकरण आदि नाना प्रकारके शास्त्र-समूह तथा परम मनोहर एवं दिव्य छत्तीस रागिनियाँ उत्पन्न कीं। नाना प्रकारके तालोंसे युक्त छः सुन्दर राग प्रकट किये। सत्ययुग, त्रेता, द्वापर, कलहप्रिय कलियुग; वर्ष, मास, ऋतु, तिथि, दण्ड, क्षण आदि; दिन, रात्रि, वार, संध्या, उषा, पुष्टि, मेधा, विजया, जया, छः कृत्तिका, योग, करण, कार्तिकेयप्रिया सती महाषष्ठी देवसेना—जो मातृकाओंमें प्रधान और बालकोंकी इष्ट देवी हैं, इन सबको भी सावित्रीने ही उत्पन्न किया। ब्राह्म, पाद्म और वाराह—ये तीन कल्प माने गये हैं। नित्य, नैमित्तिक, द्विपरार्ध और प्राकृत—ये चार प्रकारके प्रलय हैं। इन कल्पों और प्रलयोंको तथा काल, मृत्युकन्या एवं समस्त व्याधिगणोंको उत्पन्न करके सावित्रीने उन्हें अपना स्तन पान कराया।

तदनन्तर ब्रह्माजीके पृष्ठदेशसे अधर्म उत्पन्न हुआ। अधर्मके वामपार्श्वसे अलक्ष्मी उत्पन्न हुई, जो उसकी पत्नी थी। ब्रह्माजीके नाभिदेशसे शिल्पियोंके गुरु विश्वकर्मा हुए। साथ ही आठ महावसुओंकी उत्पत्ति हुई, जो महान् बल-पराक्रमसे सम्पन्न थे। तत्पश्चात् विधाताके मनसे चार कुमार आविर्भूत हुए, जो पाँच वर्षकी अवस्थाके-से जान पड़ते थे और ब्रह्मतेजसे प्रज्वलित हो रहे थे। उनमेंसे प्रथम तो सनक थे, दूसरेका नाम सनन्दन था, तीसरे सनातन और चौथे ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ भगवान् सनत्कुमार थे। इसके बाद ब्रह्माजीके मुखसे सुवर्णके समान कान्तिमान् कुमार उत्पन्न हुआ, जो दिव्यरूपधारी था। उसके

साथ उसकी पत्नी भी थी। वह श्रीमान् एवं सुन्दर युवक था। क्षत्रियोंका बीजस्वरूप था। उसका नाम था स्वायम्भुव मनु। जो स्त्री थी, उसका नाम शतरूपा था। वह बड़ी रूपवती थी और लक्ष्मीकी कलास्वरूपा थी। पत्नीसहित मनु विधाताकी आज्ञाका पालन करनेके लिये उद्यत रहते थे। स्वयं विधाताने हर्षभरे पुत्रोंसे, जो बड़े भगवद्भक्त थे, सृष्टि करनेके लिये कहा। परंतु वे श्रीकृष्णपरायण होनेके कारण 'नहीं' करके तपस्या करनेके लिये चले गये। इससे जगत्पति विधाताको बड़ा क्रोध हुआ। कोपासक्त ब्रह्मा ब्रह्मतेजसे जलने लगे। प्रभो! इसी समय उनके ललाटसे ग्यारह रुद्र प्रकट हुए। उन्हींमेंसे एकको संहारकारी 'कालाग्नि रुद्र' कहा गया है। समस्त लोकोंमें केवल वे ही तामस या तमोगुणी माने गये हैं। स्वयं ब्रह्मा राजस हैं और शिव तथा विष्णु सात्त्विक कहे गये हैं। गोलोकनाथ श्रीकृष्ण निर्गुण हैं; क्योंकि वे प्रकृतिसे परे हैं। जो परम अज्ञानी और मूर्ख हैं, वे ही शिवको तामस (तमोगुणी) कहते हैं। वे शुद्ध, सत्त्वस्वरूप, निर्मल तथा वैष्णवोंमें अग्रगण्य हैं। अब रुद्रोंके वेदोक्त नाम सुनो—महान्, महात्मा, मतिमान्, भीषण, भयंकर, ऋतुध्वज, ऊर्ध्वकेश, पिङ्गलाक्ष, रुचि, शुचि तथा कालाग्नि रुद्र। ब्रह्माजीके दायें कानसे पुलस्त्य, बायें कानसे पुलह, दाहिने नेत्रसे अत्रि, वामनेत्रसे क्रतु, नासिकाछिद्रसे अरणि, मुखसे अङ्गिरा एवं रुचि, वामपार्श्वसे भृगु, दक्षिणपार्श्वसे दक्ष, छायासे कर्दम, नाभिसे पञ्चशिख, वक्षःस्थलसे वोढु, कण्ठदेशसे नारद, स्कन्धदेशसे मरीचि, गलेसे अपान्तरतमा, रसनासे वसिष्ठ, अधरोष्ठसे प्रचेता, वामकुक्षिसे हंस और दक्षिणकुक्षिसे यति प्रकट हुए। विधाताने अपने इन पुत्रोंकी सृष्टि करनेकी आज्ञा दी। पिताकी बात सुनकर नारदने उनसे कहा।

नारद बोले—जगत्पते! पितामह! पहले सनक, सनन्दन आदि ज्येष्ठ पुत्रोंको बुलाइये और उनका विवाह कीजिये। तत्पश्चात् हम लोगोंसे ऐसा करनेके लिये कहिये। जब पिताजीने उन्हें तपस्यामें लगाया है, तब हमें ही क्यों संसार-बन्धनमें डाल रहे हैं? अहो! कितने खेदकी बात है कि प्रभुकी बुद्धि विपरीत भावको प्राप्त हो रही है। भगवन्! आपने किसी पुत्रको तो अमृतसे भी बढ़कर तपस्याका कार्य दिया है और किसीको आप विषसे भी अधिक विषम विषय-भोग दे रहे हैं। पिताजी! जो अत्यन्त निम्न कोटिके भयानक भवसागरमें गिरता है, उसका करोड़ों कल्प बीतनेपर भी उद्धार नहीं होता। भगवान् पुरुषोत्तम ही सबके आदिकारण तथा निस्तारके बीज हैं। वे ही सब कुछ देनेवाले, भक्ति प्रदान करनेवाले, दास्यसुख देनेवाले, सत्य तथा कृपामय हैं। वे ही भक्तोंको एकमात्र शरण देनेवाले, भक्तवत्सल और स्वच्छ हैं। भक्तोंके प्रिय, रक्षक और उनपर अनुग्रह करनेवाले भी वे ही हैं। भक्तोंके आराध्य तथा प्राप्य उन परमेश्वर श्रीकृष्णको छोड़कर कौन मूढ विनाशकारी विषयमें मन लगायेगा? अमृतसे भी अधिक प्रिय श्रीकृष्ण-सेवा छोड़कर कौन मूर्ख विषय नामक विषम विषका भक्षण (आस्वादन) करेगा? विषय तो स्वप्नके समान नश्वर, तुच्छ, मिथ्या तथा विनाशकारी है।*

तात! जैसे दीपशिखाका अग्रभाग पतङ्गोंको

---

* निस्तारबीजं सर्वेषां बीजं च पुरुषोत्तमम्। सर्वदं भक्तिदं दास्यप्रदं सत्यं कृपामयम्॥
भक्तैकशरणं भक्तवत्सलं स्वच्छमेव च। भक्तप्रियं भक्तनाथं भक्तानुग्रहकारकम्॥
भक्ताराध्यं भक्तसाध्यं विहाय परमेश्वरम्। मनो दधाति को मूढो विषये नाशकारणे॥
विहाय कृष्णसेवां च पीयूषादधिकां प्रियाम्। को मूढो विषमश्नाति विषमं विषयाभिधम्॥
स्वप्नवन्नश्वरं तुच्छमसत्यं नाशकारणम्। (ब्रह्मखण्ड ८। ३३—३७)

बड़ा मनोहर प्रतीत होता है, जैसे बंसीमें गुँथा हुआ मांस मछलियोंको आपातत: सुखद जान पड़ता है, उसी प्रकार विषयी पुरुषोंको विषयमें सुखकी प्रतीति होती है; परंतु वास्तवमें वह मृत्युका कारण है।*

ब्रह्माजीके सामने वहाँ ऐसी बात कहकर नारदजी चुप हो गये। वे अग्निशिखाके समान तेजसे प्रकाशित हो रहे थे। पिताको प्रणाम करके चुपचाप खड़े रहे। उनकी बात सुनकर ब्रह्माजी रोषसे आगबबूला हो उठे। उनका मुँह लाल हो गया। ओठ फड़कने लगे और सारा अङ्ग थर-थर काँपने लगा। ब्रह्मन्! वे पुत्रको शाप देते हुए बोले।

ब्रह्माजीने कहा—नारद! मेरे शापसे तुम्हारे ज्ञानका लोप हो जायगा। तुम कामिनियोंके क्रीडामृग बन जाओगे। उनके वशीभूत होओगे, तुम पचास कामिनियोंके पति बनो। शृङ्गार-शास्त्रके ज्ञाता, शृङ्गार-रसास्वादनके लिये अत्यन्त लोलुप तथा नाना प्रकारके शृङ्गारमें निपुण लोगोंके गुरुके भी गुरु हो जाओगे। गन्धर्वोंमें श्रेष्ठ पुरुष होओगे। सुमधुरस्वरसे युक्त उत्तम गायक बनोगे। वीणा-वादन-संदर्भमें पारंगत तथा सुस्थिर यौवनसे युक्त होओगे। विद्वान्, मधुरभाषी, शान्त, सुशील, सुन्दर और सुबुद्धि होओगे, इसमें संशय नहीं है। उस समय 'उपबर्हण' नामसे तुम्हारी प्रसिद्धि होगी। उन कामिनियोंके साथ युगोंतक निर्जन वनमें विहार करके फिर मेरे शापसे दासीपुत्र होओगे। बेटा! तदनन्तर वैष्णवोंके संसर्गसे और उनकी जूँठन खानेसे तुम पुनः श्रीकृष्णकी कृपा प्राप्त करके मेरे पुत्ररूपमें प्रतिष्ठित हो जाओगे। उस समय मैं पुनः तुम्हें दिव्य एवं पुरातन ज्ञान प्रदान करूँगा। इस समय मेरी आँखसे ओझल हो जाओ और अवश्य ही नीचे गिरो।

ब्रह्मन्! पुत्रसे ऐसा कहकर जगत्पति ब्रह्मा चुप हो गये और नारदजी रोने लगे। उन्होंने दोनों हाथ जोड़कर पितासे कहा।

नारद बोले—तात! तात! जगद्गुरो! आप अपने क्रोधको रोकिये। आप स्रष्टा हैं। तपस्वियोंके स्वामी हैं। अहो! मुझपर आपका यह क्रोध अकारण ही हुआ है। विद्वान् पुरुषको चाहिये कि वह कुमार्गगामी पुत्रको शाप दे अथवा उसका त्याग कर दे। आप पण्डित होकर अपने तपस्वी पुत्रको शाप देना कैसे उचित मानते हैं? ब्रह्मन्! जिन-जिन योनियोंमें मेरा जन्म हो भगवान्की भक्ति मुझे कदापि न छोड़े, ऐसा वर प्रदान कीजिये। जगत्स्रष्टाका ही पुत्र क्यों न हो, यदि भगवान् श्रीहरिके चरणोंमें उसकी भक्ति नहीं है तो वह भारतभूमिमें सूअरसे भी बढ़कर अधम

*यथा दीपशिखाग्रं च कीटानां सुमनोहरम्॥
यथा बडिशमांसं च मत्स्यापातसुखप्रदम् । तथा विषयिणां तात विषयं मृत्युकारणम्॥
(ब्रह्मखण्ड ८। ३७-३८)

है। जो अपने पूर्वजन्मका स्मरण रखते हुए श्रीहरिकी भक्तिसे युक्त होता है, वह सूअरकी योनियोंमें जन्म ले तो भी श्रेष्ठ है; क्योंकि उस भजनरूपी कर्मसे वह गोलोकमें चला जाता है। जो गोविन्दके चरणारविन्दोंकी भक्तिरूप मनोवाञ्छित मकरन्दका पान करते रहते हैं, उन वैष्णव आदिके स्पर्शसे सारी पृथ्वी पवित्र हो जाती है। पितामह! पापी लोग स्नान करके तीर्थोंको जो पाप दे देते हैं, अपने उन पापोंका भी प्रक्षालन करनेके लिये सब तीर्थ वैष्णव महात्माओंका स्पर्श प्राप्त करना चाहते हैं।*

अहो! भारतवर्षमें श्रीहरिके मन्त्रका उपदेश देने और लेनेमात्रसे कितने ही मनुष्य अपने करोड़ों पूर्वजोंके साथ मुक्त हो गये हैं। मन्त्र ग्रहण करनेमात्रसे मनुष्य करोड़ों जन्मोंके पापसे मुक्त एवं शुद्ध हो जाते हैं और पहलेके कर्मको समूल नष्ट कर देते हैं। जो गुरुपुत्रों, पत्नियों, शिष्यों, सेवकों और भाई-बन्धुओंको उपदेश दे उन्हें सन्मार्गका दर्शन कराता है, उसे निश्चय ही उत्तम गति प्राप्त होती है। परंतु जो गुरु शिष्योंका विश्वासपात्र होकर उन्हें असन्मार्गका दर्शन कराता है—कुमार्गपर चलनेके लिये प्रेरित करता है, वह तबतक कुम्भीपाक नरकमें निवास करता है, जबतक सूर्य और चन्द्रमाका अस्तित्व रहता है। वह कैसा गुरु, कैसा पिता, कैसा स्वामी और कैसा पुत्र है, जो भगवान् श्रीकृष्णके चरणारविन्दोंकी भक्ति देनेमें समर्थ न हो।† चतुरानन! आपने बिना किसी अपराधके ही मुझे शाप दे दिया है। अतः बदलेमें मैं भी शाप दूँ तो अनुचित न होगा; मेरे शापसे सम्पूर्ण लोकोंमें कवच, स्तोत्र और पूजासहित आपके मन्त्रका निश्चय ही लोप हो जाय। पिताजी! जबतक तीन कल्प न बीत जायँ, तबतक तीनों लोकोंमें आप अपूज्य बने रहें। तीन कल्प बीत जानेपर आप पूजनीयोंके भी पूजनीय होंगे। सुव्रत! इस समय आपका यज्ञभाग बंद हो जाय। व्रत आदिमें भी आपका पूजन न हो। केवल एक ही बात रहे—आप देवता आदिके वन्दनीय बने रहें।

पिताके सामने ऐसा कहकर नारदजी चुप हो गये और ब्रह्माजी संतप्त-हृदयसे सभामें सुस्थिर भावसे बैठे रहे। शौनकजी! पिताके दिये हुए उस शापके ही कारण नारदजी उपबर्हण नामक गन्धर्व तथा दासीपुत्र हुए। तदनन्तर पितासे ज्ञान प्राप्त करके वे फिर महर्षि नारद हो गये। इस प्रसंगका अभी मैं आगे चलकर वर्णन करूँगा।

(अध्याय ८)

---

* जातिस्मरो हरेर्भक्तियुक्तः शूकरयोनिषु। जनिर्लभेत् स प्रसवी गोलोकं याति कर्मणा॥
गोविन्दचरणाम्भोजभक्तिमाध्वीकमीप्सितम्। पिबतां वैष्णवादीनां स्पर्शपूता वसुन्धरा॥
तीर्थानि स्पर्शमिच्छन्ति वैष्णवानां पितामह। पापानां पापिदत्तानां क्षालनायात्मनामपि॥
(ब्रह्मखण्ड ८। ५४—५६)

† स किं गुरुः स किं तातः स किं स्वामी स किं सुतः। यः श्रीकृष्णपदाम्भोजे भक्तिं दातुमनीश्वरः॥
(ब्रह्मखण्ड ८। ६१)

मरीचि आदि ब्रह्मकुमारों तथा दक्षकन्याओंकी संततिका वर्णन, दक्षके शापसे पीड़ित चन्द्रमाका भगवान् शिवकी शरणमें जाना, अपनी कन्याओंके अनुरोधपर दक्षका चन्द्रमाको लौटा लानेके लिये जाना, शिवकी शरणागतवत्सलता तथा विष्णुकी कृपासे दक्षको चन्द्रमाकी प्राप्ति

सौति कहते हैं—विप्रवर शौनक! तदनन्तर ब्रह्माजीने अपने पुत्रोंको सृष्टि करनेकी आज्ञा दी। नारदको छोड़कर शेष सभी पुत्र सृष्टिके कार्यमें संलग्न हो गये। मरीचिके मनसे प्रजापति कश्यपका प्रादुर्भाव हुआ। अत्रिके नेत्रमलसे क्षीरसागरमें चन्द्रमा प्रकट हुए। प्रचेताके मनसे भी गौतमका प्राकट्य हुआ। मैत्रावरुण पुलस्त्यके मानस पुत्र हैं। मनुसे शतरूपाके गर्भसे तीन कन्याओंका जन्म हुआ—आकूति, देवहूति और प्रसूति। वे तीनों ही पतिव्रता थीं। मनु-शतरूपासे दो मनोहर पुत्र भी हुए, जिनके नाम थे—प्रियव्रत और उत्तानपाद। उत्तानपादके पुत्र ध्रुव हुए, जो बड़े धर्मात्मा थे। मनुने अपनी पुत्री आकूतिका विवाह प्रजापति रुचिके साथ तथा प्रसूतिका विवाह दक्षके साथ कर दिया। इसी तरह देवहूतिका विवाह-सम्बन्ध उन्होंने कर्दममुनिके साथ किया, जिनके पुत्र साक्षात् भगवान् कपिल हैं। दक्षके वीर्य और प्रसूतिके गर्भसे साठ कन्याओंका जन्म हुआ। उनमेंसे आठ कन्याओंका विवाह दक्षने धर्मके साथ किया, ग्यारह कन्याओंको ग्यारह रुद्रोंके हाथमें दे दिया। एक कन्या सती भगवान् शिवको सौंप दी। तेरह कन्याएँ कश्यपको दे दीं तथा सत्ताईस कन्याएँ चन्द्रमाको अर्पित कर दीं।

विप्रवर! अब मुझसे धर्मकी पत्नियोंके नाम सुनिये—शान्ति, पुष्टि, धृति, तुष्टि, क्षमा, श्रद्धा, मति और स्मृति। शान्तिका पुत्र संतोष और पुष्टिका पुत्र महान् हुआ। धृतिसे धैर्यका जन्म हुआ। तुष्टिसे दो पुत्र हुए—हर्ष और दर्प। क्षमाका पुत्र सहिष्णु था और श्रद्धाका पुत्र धार्मिक। मतिसे ज्ञान नामक पुत्र हुआ और स्मृतिसे महान् जातिस्मरका जन्म हुआ। धर्मकी जो पहली पत्नी मूर्ति थी, उससे नर-नारायण नामक दो ऋषि उत्पन्न हुए। शौनकजी! धर्मके ये सभी पुत्र बड़े धर्मात्मा हुए।

अब आप सावधान होकर रुद्रपत्नियोंके नाम सुनिये। कला, कलावती, काष्ठा, कालिका, कलहप्रिया, कन्दली, भीषणा, रास्ना, प्रमोचा, भूषणा और शुकी। इन सबके बहुत-से पुत्र हुए, जो भगवान् शिवके पार्षद हैं। दक्षपुत्री सतीने यज्ञमें अपने स्वामीकी निन्दा होनेपर शरीरको त्याग दिया और पुनः हिमवान्‌की पुत्री पार्वतीके रूपमें अवतीर्ण हो भगवान् शंकरको ही पतिरूपमें प्राप्त किया। धर्मात्मन्! अब कश्यपकी पत्नियोंके नाम सुनिये। देवमाता अदिति, दैत्यमाता दिति, सर्पमाता कद्रू, पक्षियोंकी जननी विनता, गौओं और भैंसोंकी माता सुरभि, सारमेय (कुत्ते) आदि जन्तुओंकी माता सरमा, दानवजननी दनु तथा अन्य पत्नियाँ भी इसी तरह अन्यान्य संतानोंकी जननी हैं। मुने! इन्द्र आदि बारह आदित्य तथा उपेन्द्र (वामन) आदि देवता अदितिके पुत्र कहे गये हैं, जो महान् बल-पराक्रमसे सम्पन्न हैं। ब्रह्मन्! इन्द्रका पुत्र जयन्त हुआ, जिसका जन्म शचीके गर्भसे हुआ था। आदित्य (सूर्य)-की पत्नी तथा विश्वकर्माकी पुत्री सवर्णाके गर्भसे शनैश्चर और यम नामक दो पुत्र तथा कालिन्दी नामवाली एक कन्या हुई। उपेन्द्रके वीर्य और पृथ्वीके गर्भसे मङ्गल नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

तदनन्तर भगवान् उपेन्द्रके अंश और धरणीके गर्भसे मङ्गलके जन्मका प्रसंग सुनाकर सौति बोले—मङ्गलकी पत्नी मेधा हुई, जिसके पुत्र महान् घंटेश्वर तथा विष्णुतुल्य तेजस्वी

व्रणदाता हुए। दितिसे महाबली हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष नामक पुत्र तथा सिंहिका नामवाली कन्याका जन्म हुआ। सैंहिकेय (राहु) सिंहिकाका ही पुत्र है। सिंहिकाका दूसरा नाम निर्ऋति भी था। इसीलिये राहुको नैर्ऋत कहते हैं। हिरण्याक्षको कोई संतान नहीं थी। वह युवावस्थामें ही भगवान् वाराहके हाथों मारा गया। हिरण्यकशिपुके पुत्र प्रह्लाद हुए, जो वैष्णवोंमें अग्रगण्य माने गये हैं। उनके पुत्र विरोचन हुए और विरोचनके पुत्र साक्षात् राजा बलि। बलिका पुत्र बाणासुर हुआ, जो महान् योगी, ज्ञानी तथा भगवान् शंकरका सेवक था। यहाँतक दितिका वंश बताया गया। अब कद्रूके वंशका परिचय सुनिये। अनन्त, वासुकि, कालिय, धनञ्जय, कर्कोटक, तक्षक, पद्म, ऐरावत, महापद्म, शंकु, शंख, संवरण, धृतराष्ट्र, दुर्धर्ष, दुर्जय, दुर्मुख, बल, गोक्ष, गोकामुख तथा विरूप आदिको कद्रूने जन्म दिया था। शौनकजी! जितनी सर्प-जातियाँ हैं, उन सबमें प्रधान ये ही हैं। लक्ष्मीके अंशसे प्रकट हुई मनसादेवी कद्रूकी कन्या हैं। ये तपस्विनी स्त्रियोंमें श्रेष्ठ, कल्याणस्वरूपा और महातेजस्विनी हैं। इन्हींका दूसरा नाम जरत्कारु है। इन्हींके पति मुनिवर जरत्कारु थे, जो नारायणकी कलासे प्रकट हुए थे। विष्णुतुल्य तेजस्वी आस्तीक इन्हीं मनसादेवीके पुत्र हैं। इन सबके नाममात्रसे मनुष्योंका नागोंसे भय दूर हो जाता है। यहाँतक कद्रूके वंशका परिचय दिया गया। अब विनताके वंशका वर्णन सुनिये।

विनताके दो पुत्र हुए—अरुण और गरुड। दोनों ही विष्णु-तुल्य पराक्रमी थे। उन्हीं दोनोंसे क्रमशः सारी पक्षी-जातियाँ प्रकट हुईं। गाय, बैल और भैंसे—ये सुरभिकी श्रेष्ठ संतानें हैं। समस्त सारमेय (कुत्ते) सरमाके वंशज हैं। दनुके वंशमें दानव हुए तथा अन्य स्त्रियोंके वंशज अन्यान्य जातियाँ। यहाँतक कश्यप-वंशका वर्णन किया गया। अब चन्द्रमाका आख्यान सुनिये।

पहले चन्द्रमाकी पत्नियोंके नामोंपर ध्यान दीजिये। फिर पुराणोंमें जो उनका अत्यन्त अपूर्व पुरातन चरित्र है, उसको श्रवण कीजिये। अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पूजनीया साध्वी पुनर्वसु, पुष्या, आश्लेषा, मघा, पूर्वफाल्गुनी, उत्तरफाल्गुनी, हस्ता, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूला, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवणा, धनिष्ठा, शुभा शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा तथा रेवती—ये सत्ताईस चन्द्रमाकी पत्नियाँ हैं। इनमें रोहिणीके प्रति चन्द्रमाका विशेष आकर्षण होनेके कारण चन्द्रमाने अन्य सब पत्नियोंकी बड़ी अवहेलना की। तब उन सबने जाकर पिता दक्षको अपना दुःख सुनाया। दक्षने चन्द्रमाको क्षय-रोगसे ग्रस्त होनेका शाप दे दिया। चन्द्रमाने दुःखी होकर भगवान् शंकरकी शरण ली और शंकरने उन्हें आश्रय देकर अपने मस्तकमें स्थान दिया। तबसे उनका नाम 'चन्द्रशेखर' हो गया। देवताओं तथा अन्य लोगोंमें शिवसे बढ़कर शरणागतपालक दूसरा कोई नहीं है।

अपने पतिके रोगमुक्त और शिवके मस्तकमें स्थित होनेकी बात सुनकर दक्षकन्याएँ बारंबार रोने लगीं और तेजस्वी पुरुषोंमें श्रेष्ठ पिता दक्षकी शरणमें आयीं। वहाँ जाकर अपने अङ्गोंको बारंबार पीटती हुई वे उच्चस्वरसे रोने लगीं तथा दीनानाथ ब्रह्मपुत्र दक्षसे दीनतापूर्वक कातर वाणीमें बोलीं।

दक्षकन्याओंने कहा—पिताजी! हमें स्वामीका सौभाग्य प्राप्त हो, इसी उद्देश्यको लेकर हमने आपसे अपना दुःख निवेदन किया था। परंतु सौभाग्य तो दूर रहे, हमारे सद्गुणशाली स्वामी ही हमें छोड़कर चल दिये। तात! नेत्रोंके रहते हुए भी हमें सारा जगत् अन्धकारपूर्ण दिखायी देता है। आज यह बात समझमें आयी है कि स्त्रियोंका नेत्र वास्तवमें उनका पति ही है। पति ही स्त्रियोंकी गति है, पति ही प्राण तथा सम्पत्ति

है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्तिका हेतु तथा भवसागरका सेतु भी पति ही है। पति ही स्त्रियोंका नारायण है, पति ही उनका व्रत और सनातन धर्म है। जो पतिसे विमुख हैं, उन स्त्रियोंका सारा कर्म व्यर्थ है। समस्त तीर्थोंमें स्नान, सम्पूर्ण यज्ञोंमें दक्षिणा-वितरण, सम्पूर्ण दान, पुण्यमय व्रत एवं नियम, देवार्चन, उपवास और समस्त तप—ये पतिकी चरण-सेवाजनित पुण्यकी सोलहवीं कलाके बराबर भी नहीं हैं। स्त्रियोंके लिये समस्त बन्धु-बान्धवोंमें अपना पुत्र ही प्रिय होता है; क्योंकि वही स्वामीका अंश है। पति सौ पुत्रोंसे भी बढ़कर है। जो नीच कुलमें उत्पन्न हुई है, वही स्त्री सदा अपने स्वामीसे द्वेष रखती है। जिसका चित्त चञ्चल और दुष्ट है, वही सदा परपुरुषमें आसक्त होती है। पति रोगी, दुष्ट, पतित, निर्धन, गुणहीन, नवयुवक अथवा वृद्ध ही क्यों न हो, साध्वी स्त्रीको सदा उसीकी सेवा करनी चाहिये। कभी भी उसे त्यागना नहीं चाहिये। जो नारी गुणवान् या गुणहीन पतिसे द्वेष रखती या उसे त्याग देती है, वह तबतक कालसूत्र नरकमें पकायी जाती है, जबतक चन्द्रमा और सूर्यकी सत्ता रहती है। वहाँ पक्षीके समान कीड़े रात-दिन उसे खाते रहते हैं। वह भूख लगनेपर मुर्देका मांस और मज्जा खाती है तथा प्यास लगनेपर मूत्रका पान करती है। तदनन्तर कोटि-सहस्र जन्मोंतक गीध, सौ जन्मोंतक सूअर, फिर सौ जन्मोंतक शिकारी जीव और उसके बाद बन्धु-हत्यारिन होती है। तत्पश्चात् पहलेके सत्कर्मके प्रभावसे यदि कभी मनुष्य-जन्म पाती है तो निश्चय ही विधवा, धनहीन और रोगिणी होती है। ब्रह्मकुमार! आप हमें पतिदान दीजिये; क्योंकि वह सम्पूर्ण कामनाओंका पूरक होता है। आप ब्रह्माजीके समान फिरसे जगत्की सृष्टि करनेमें समर्थ हैं।

कन्याओंका यह वचन सुनकर प्रजापति दक्ष भगवान् शंकरके समीप गये। शंकरजीने उन्हें देखते ही उठकर प्रणाम किया। शिवको प्रणाम करते देख दक्षने दुर्धर्ष क्रोधको त्याग दिया और आशीर्वाद देकर कृपानिधान शंकरसे कहा—आप चन्द्रमाको लौटा दें। शिवने शरणागत चन्द्रमाको त्याग देना स्वीकार नहीं किया, तब दक्ष उन्हें शाप देनेको तैयार हो गये। यह देख शिवने भगवान् विष्णुका स्मरण किया। विष्णु वृद्ध ब्राह्मणके वेषमें आये और शिवसे बोले—'सुरेश्वर! आप चन्द्रमाको लौटा दें और दक्षके शापसे अपनी रक्षा करें।'

शिवने कहा—प्रभो! मैं अपने तप, तेज, सम्पूर्ण सिद्धि, सम्पदा तथा प्राणोंको भी दे दूँगा, परंतु शरणागतका त्याग करनेमें असमर्थ हूँ। जो भयसे ही शरणागतको त्याग देता है, उसे भी धर्म त्याग देता है और अत्यन्त कठोर शाप देकर चला जाता है। जगदीश्वर! मैं सब कुछ त्याग देनेमें समर्थ हूँ, परंतु स्वधर्मका त्याग नहीं कर सकता। जो स्वधर्मसे हीन है, वह सबसे बहिष्कृत है। जो सदा धर्मकी रक्षा करता है, धर्म भी उसकी रक्षा करता है। भगवन्! आप तो धर्मको जानते हैं; फिर क्यों अपनी मायासे मोहित करते हुए मुझसे ऐसी बात कहते हैं। आप सबके स्रष्टा, पालक और अन्ततोगत्वा संहारक हैं। जिसकी आपमें सुदृढ़ भक्ति है, उसे किससे भय हो सकता है।

शंकरजीकी यह बात सुनकर सबके भावको जाननेवाले भगवान् श्रीहरिने चन्द्रमासे चन्द्रमाको खींचकर दक्षको दे दिया। आधे चन्द्रमा भगवान् शिवके मस्तकपर चले गये और वहाँ रोगमुक्त होकर रहने लगे। दूसरे चन्द्रमाको प्रजापति दक्षने ग्रहण किया, जिसे भगवान् विष्णुने दिया था। उस चन्द्रमाको राज-यक्ष्मा रोगसे ग्रस्त देख दक्षने माधवका स्तवन किया। तब श्रीहरिने स्वयं यह

व्यवस्था की कि एक पक्षमें चन्द्रमा क्रमशः क्षीण होंगे और दूसरे पक्षमें क्रमशः पुष्ट होते हुए परिपूर्ण हो जायँगे। ब्रह्मन्! उन सबको वर देकर श्रीहरि अपने धामको चले गये और दक्षने चन्द्रमाको लेकर उन्हें अपनी कन्याओंको सौंप दिया। चन्द्रमा उन सबको पाकर दिन-रात उनके साथ विहार करने लगे और उसी दिनसे उनको समभावसे देखने लगे। मुने! इस प्रकार मैंने यहाँ सम्पूर्ण सृष्टि-क्रमका कुछ वर्णन किया है। इस प्रसङ्गको पुष्कर-तीर्थमें मुनियोंकी मण्डलीके बीच गुरुजीके मुखसे मैंने सुना था। (अध्याय ९)

जाति और सम्बन्धका निर्णय

तदनन्तर सौतिने मुनिश्रेष्ठ बालखिल्यादि, बृहस्पति, उतथ्य, पराशर, विश्रवा, कुबेर, रावण, कुम्भकर्ण, महात्मा विभीषण, वात्स्य, शाण्डिल्य, सावर्णि, कश्यप तथा भरद्वाज आदिकी; ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अनेकानेक वर्णसंकर जातियोंकी उत्पत्तिके प्रसंग सुनाकर कहा—अश्विनीकुमारके द्वारा एक ब्राह्मणीके गर्भसे पुत्रकी उत्पत्ति हुई। इससे उस ब्राह्मणीके पतिने पुत्रसहित पत्नीका त्याग कर दिया। ब्राह्मणी दुःखित हो योगके द्वारा देह त्यागकर गोदावरी नामकी नदी हो गयी। सूर्यनन्दन अश्विनीकुमारने स्वयं उस पुत्रको यत्नपूर्वक चिकित्सा-शास्त्र, नाना प्रकारके शिल्प तथा मन्त्र पढ़ाये। किंतु वह ब्राह्मण निरन्तर नक्षत्रोंकी गणना करने और वेतन लेनेसे वैदिक धर्मसे भ्रष्ट हो इस भूतलपर गणक हो गया। उस लोभी ब्राह्मणने ग्रहणके समय तथा मृतकोंके दान लेनेके समय शूद्रोंसे भी अग्रदान ग्रहण किया था; इसलिये 'अग्रदानी' हुआ। एक पुरुष किसी ब्राह्मणके यज्ञमें यज्ञकुण्डसे प्रकट हुआ। वह धर्मवक्ता 'सूत' कहलाया। वही हम लोगोंका पूर्वपुरुष माना गया है। कृपानिधान ब्रह्माजीने उसे पुराण पढ़ाया। इस प्रकार यज्ञकुण्डसे उत्पन्न सूत पुराणोंका वक्ता हुआ। सूतके वीर्य और वैश्याके गर्भसे एक पुरुषकी उत्पत्ति हुई, जो अत्यन्त वक्ता था। लोकमें उसकी भट्ट (भाट) संज्ञा हुई। वह सभीके लिये स्तुतिपाठ करता है।

यह मैंने भूतलपर जो जातियाँ हैं, उनके निर्णयके विषयमें कुछ बातें बतायी हैं। वर्णसंकर-दोषसे और भी बहुत-सी जातियाँ हो गयी हैं। सभी जातियोंमें जिनका जिनके साथ सर्वथा सम्बन्ध है, उनके विषयमें मैं वेदोक्त तत्त्वका वर्णन करता हूँ—जैसा कि पूर्वकालमें ब्रह्माजीने कहा था। पिता, तात और जनक—ये शब्द जन्मदाताके अर्थमें प्रयुक्त होते हैं। अम्बा, माता, जननी और प्रसू—इनका प्रयोग गर्भधारिणीके अर्थमें होता है। पिताके पिताको पितामह कहते हैं और पितामहके पिताको प्रपितामह। इनसे ऊपरके जो कुटुम्बीजन हैं, उन्हें सगोत्र कहा गया है। माताके पिताको मातामह कहते हैं, मातामहके पिताकी संज्ञा प्रमातामह है और प्रमातामहके पिताको वृद्धप्रमातामह कहा गया है। पिताकी माताको पितामही और पितामहीकी सासको प्रपितामही कहते हैं। प्रपितामहीकी सासको वृद्धप्रपितामही जानना चाहिये। माताकी माता मातामही कही गयी है। वह माताके समान ही पूजित होती है। प्रमातामहकी पत्नीको प्रमातामही समझना चाहिये। प्रमातामहके पिताकी स्त्री वृद्धप्रमातामही जानने योग्य है। पिताके भाईको पितृव्य (ताऊ, चाचा) और माताके भाईको मातुल (मामा) कहते हैं। पिताकी बहिन पितृष्वसा (फुआ) कही गयी है और माताकी बहिन मासुरी (मातृष्वसा या मौसी)। सूनु, तनय, पुत्र, दायाद

और आत्मज—ये बेटेके अर्थमें परस्पर पर्यायवाची शब्द हैं। अपनेसे उत्पन्न हुए पुरुष (पुत्र)-के अर्थमें धनभाक् और वीर्यज शब्द भी प्रयुक्त होते हैं। उत्पन्न की गयी पुत्रीके अर्थमें दुहिता, कन्या और आत्मजा शब्द प्रचलित हैं। पुत्रकी पत्नीको वधू (बहू) जानना चाहिये और पुत्रीके पतिको जामाता (दामाद)। प्रियतम पतिके अर्थमें पति, प्रिय, भर्ता और स्वामी आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं। पतिके भाईको देवर कहा गया है और पतिकी बहिनको ननान्दा (ननद), पतिके पिताको श्वशुर और पतिकी माताको श्वश्रू (सास) कहते हैं। भार्या, जाया, प्रिया, कान्ता और स्त्री—ये पत्नीके अर्थमें प्रयुक्त होते हैं। पत्नीके भाईको श्यालक (साला) और पत्नीकी बहिनको श्यालिका (साली) कहते हैं। पत्नीकी माताको श्वश्रू (सास) तथा पत्नीके पिताको श्वशुर कहा गया है। सगे भाईको सोदर और सगी बहिनको सोदरा या सहोदरा कहते हैं। बहिनके बेटेको भागिनेय (भगिना या भानजा) कहते हैं और भाईके बेटेको भ्रातृज (भतीजा)। बहनोईके अर्थमें आबुत्त (भगिनीकान्त और भगिनीपति) आदि शब्दोंका प्रयोग होता है। सालीका पति (साढ़ू) भी अपना भाई ही है; क्योंकि दोनोंके ससुर एक हैं। मुने! श्वशुरको भी पिता जानना चाहिये। वह जन्मदाता पिताके ही तुल्य है। अन्नदाता, भयसे रक्षा करनेवाला, पत्नीका पिता, विद्यादाता और जन्मदाता—ये पाँच मनुष्योंके पिता हैं। अन्नदाताकी पत्नी, बहिन, गुरु-पत्नी, माता, सौतेली माँ, बेटी, बहू, नानी, दादी, सास, माताकी बहिन, पिताकी बहिन, चाची और मामी—ये चौदह माताएँ हैं। पुत्रके पुत्रके अर्थमें पौत्र शब्दका प्रयोग होता है तथा उसके भी पुत्रके अर्थमें प्रपौत्र शब्दका। प्रपौत्रके भी जो पुत्र आदि हैं, वे वंशज तथा कुलज कहे गये हैं। कन्याके पुत्रको दौहित्र कहते हैं और उसके जो पुत्र आदि हैं, वे बान्धव कहे गये हैं। भानजेके जो पुत्र आदि पुरुष हैं, उनकी भी बान्धव संज्ञा है। भतीजेके जो पुत्र आदि हैं, वे ज्ञाति माने गये हैं। गुरुपुत्र तथा भाई—इन्हें पोष्य एवं परम बान्धव कहा गया है। मुने! गुरुपुत्री और बहिनको भी पोष्या तथा मातृतुल्या माना गया है। पुत्रके गुरुको भी भ्राता मानना चाहिये। वह पोष्य तथा सुस्निग्ध बान्धव कहा गया है। पुत्रके श्वशुरको भी भाई समझना चाहिये। वह वैवाहिक बन्धु माना गया है। बेटीके श्वशुरके साथ भी यही सम्बन्ध बताया गया है। कन्याका गुरु भी अपना भाई ही है। वह सुस्निग्ध बान्धव माना गया है। गुरु और श्वशुरके भाइयोंका भी सम्बन्ध गुरुतुल्य ही कहा गया है। जिसके साथ बन्धुत्व (भाईका-सा व्यवहार) हो, उसे मित्र कहते हैं। जो सुख देनेवाला है, उसे मित्र जानना चाहिये और जो दुःख देनेवाला है, वह शत्रु कहलाता है। दैववश कभी बान्धव भी दुःख देनेवाला हो जाता है और जिससे कोई भी सम्बन्ध नहीं है, वह सुखदायक बन जाता है। विप्रवर! इस भूतलपर मनुष्योंके विद्याजनित, योनिजनित और प्रीतिजनित—ये तीन प्रकारके सम्बन्ध कहे गये हैं। मित्रताके सम्बन्धको प्रीतिजनित सम्बन्ध जानना चाहिये। वह सम्बन्ध परम दुर्लभ है। मित्रकी माता और मित्रकी पत्नी—ये माताके तुल्य हैं, इसमें संशय नहीं है। मित्रके भाई और पिता मनुष्योंके लिये चाचा, ताऊके समान आदरणीय हैं। (अध्याय १०)

सूर्यके अनुरोधसे सुतपाका अश्विनीकुमारोंको शापमुक्त करना तथा संध्यानिरत वैष्णव ब्राह्मणकी प्रशंसा

शौनकजीने पूछा—महाभाग सूतनन्दन! उस ब्राह्मणने अपनी पत्नीका त्याग करके शेष जीवनमें कौन-सा कार्य किया? अश्विनीकुमारोंके नाम क्या हैं? वे दोनों किसके वंशज हैं?

सौति बोले—ब्रह्मन्! उन ब्राह्मणदेवताका नाम सुतपा था। वे भरद्वाजकुलमें उत्पन्न बहुत बड़े मुनि थे। उन्होंने पहले हिमालयपर रहकर भगवान् श्रीकृष्ण (विष्णु)-की प्रसन्नताके लिये दीर्घकालतक तपस्या की थी। उस समय वे महातपस्वी और तेजस्वी मुनि ब्रह्मतेजसे जाज्वल्यमान दिखायी देते थे। एक दिन उन्हें सहसा आकाशमें क्षणभरके लिये श्रीकृष्ण-ज्योतिका दर्शन हुआ। उस बेलामें उन्होंने भगवान्से यह वर माँगा—'प्रभो! मैं आत्मनिष्ठ हो प्रकृतिसे परे सर्वथा निर्लिप्त रहूँ।' उन्होंने मोक्ष नहीं माँगा, भगवान्से उनकी अविचल दास्य-भक्तिके लिये याचना की। तब आकाशवाणी हुई—'ब्रह्मन्! पहले स्त्री-परिग्रह (विवाह) करो। उसके बाद भोग-सम्बन्धी प्रारब्धके क्षीण हो जानेपर मैं तुम्हें अपनी दास्य-भक्ति दूँगा।' तदनन्तर स्वयं ब्रह्माजीने उन्हें पितरोंकी मानसी कन्या प्रदान की। मुनिप्रवर शौनक! उसके गर्भसे 'कल्याणमित्र' नामक पुत्रका जन्म हुआ। उस बालकके स्मरणमात्रसे किसीको अपने ऊपर वज्र या बिजली गिरनेका भय नहीं रहता। इतना ही नहीं, कल्याणमित्रके स्मरणसे निश्चय ही उन बन्धुजनोंकी भी प्राप्ति हो जाती है, जिनका दर्शन असम्भव होता है।

तदनन्तर महामुनि सुतपाने किसी कारणवश कल्याणमित्रकी माताका परित्याग करके उसी समय सहसा पूर्वापराधका स्मरण हो आनेसे सूर्यपुत्र अश्विनीकुमारको भी शाप दिया—'देवाधम! तू अपने भाईके साथ यज्ञभागसे वञ्चित और अपूज्य हो जा। तेरा अङ्ग व्याधिग्रस्त और जड हो जाय। तू अकीर्तिमान् (कलंकयुक्त) हो जा।' यों कहकर सुतपा अपने पुत्र कल्याणमित्रके साथ घर चले गये। तब सूर्यदेवता दोनों अश्विनीकुमारोंके साथ उनके निकट गये। शौनक! त्रिलोकीनाथ सूर्यने अपने रोगग्रस्त पुत्रोंके साथ मुनिवर सुतपाका दर्शन करके उनकी स्तुति करते हुए कहा।

सूर्य बोले—भगवन्! युग-युगमें प्रकट होनेवाले विष्णुस्वरूप ब्राह्मणदेवता! मुनीश्वर भारद्वाज! आप मेरे पुत्रोंका अपराध क्षमा करें। ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वर आदि सब देवता सदा ब्राह्मणके ही दिये हुए फल, फूल और जल आदिका उपभोग करते हैं। ब्राह्मणोंद्वारा ही आवाहित हुए देवता सदा सब लोकोंमें पूजित होते हैं। ब्राह्मणसे बढ़कर दूसरा कोई देवता नहीं है। ब्राह्मणके रूपमें साक्षात् श्रीहरि ही प्रकट होते हैं। ब्राह्मणके संतुष्ट होनेपर साक्षात् नारायणदेव संतुष्ट होते हैं तथा नारायणदेवके संतुष्ट होनेपर सम्पूर्ण देवता संतुष्ट हो जाते हैं। गङ्गाजीके समान कोई तीर्थ नहीं है। भगवान् श्रीकृष्ण (विष्णु)- से बढ़कर कोई देवता नहीं है। शंकरजीसे बड़ा वैष्णव नहीं है और पृथ्वीसे बढ़कर कोई सहनशील नहीं है। सत्यसे बड़ा कोई धर्म नहीं है। पार्वतीजीसे बढ़कर सती-साध्वी स्त्री नहीं है। दैवसे बड़ा कोई बलवान् नहीं है तथा पुत्रसे अधिक दूसरा कोई प्रिय नहीं है। रोगके समान शत्रु, गुरुसे बढ़कर पूजनीय, माताके तुल्य बन्धु तथा पितासे बढ़कर दूसरा कोई मित्र नहीं है।

सूर्यका यह वचन सुनकर भारद्वाज सुतपा मुनिने उनको प्रणाम किया और अपनी तपस्याके फलसे उनके दोनों पुत्रोंको रोगमुक्त कर दिया। फिर कहा—'देवेश्वर! आगे चलकर आपके दोनों पुत्र यज्ञभागके अधिकारी होंगे।' यों कह सुतपा-

मुनिने भगवान् सूर्यको प्रणाम किया और तपस्याके क्षीण होनेके भयसे भयभीत हो श्रीहरिकी सेवामें मन लगाकर गङ्गातटको प्रस्थान किया। तत्पश्चात् भगवान् सूर्य दोनों पुत्रोंके साथ अपने धामको चले गये।

विद्वान् हो या विद्याहीन, जो ब्राह्मण प्रतिदिन संध्यावन्दन करके पवित्र होता है, वही भगवान् विष्णुके समान वन्दनीय है। यदि वह भगवान्से विमुख हो तो आदरका पात्र नहीं है। जो एकादशीको भोजन नहीं करता और प्रतिदिन श्रीकृष्णकी आराधना करता है, उस ब्राह्मणका चरणोदक पाकर कोई भी स्थान निश्चय ही तीर्थ बन जाता है। जो नित्यप्रति भगवान्को भोग लगाकर उनका उच्छिष्ट भोजन करता है तथा उनके नैवेद्यको मुखमें ग्रहण करता है, वह इस भूतलपर परम पवित्र एवं जीवन्मुक्त है। कुलीन द्विजोंका जो अन्न-जल भगवान् विष्णुको अर्पित नहीं किया गया, वह मल-मूत्रके समान है—ऐसा ब्रह्माजीका कथन है। ब्रह्माजी तथा उनके पुत्र सनकादि—सभी विष्णुपरायण हैं; फिर उन्हींके कुलमें उत्पन्न हुआ ब्राह्मण श्रीहरिसे विमुख कैसे हो सकता है? माता-पिता, नाना आदि अथवा गुरुके संसर्ग-दोषसे भी जो ब्राह्मण श्रीहरिसे विमुख हो जाते हैं, वे जीते-जी ही मुर्देके समान हैं। वह कैसा गुरु, कैसा पिता, कैसा पुत्र, कैसा मित्र, कैसा राजा तथा कैसा बन्धु है, जो श्रीहरिके भजनकी बुद्धि (सलाह) नहीं देता? विप्रवर! अवैष्णव ब्राह्मणसे वैष्णव चाण्डाल श्रेष्ठ है; क्योंकि वह वैष्णव चाण्डाल अपने बन्धुगणोंसहित संसार-बन्धनसे मुक्त हो जाता है और वह अवैष्णव ब्राह्मण नरकमें पड़ता है*। ब्रह्मन्! जो प्रतिदिन संध्या-वन्दन नहीं करता अथवा भगवान् विष्णुसे विमुख रहता है, वह सदा अपवित्र माना गया है। जैसे विषहीन सर्पको सर्पाभासमात्र कहा गया है, उसी तरह संध्याकर्म तथा भगवद्भक्तिसे हीन ब्राह्मण ब्राह्मणाभासमात्र है। वैष्णव पुरुष अपने कुलकी करोड़ों और नाना आदिकी सैकड़ों पीढ़ियोंके साथ भगवान् विष्णुके धाममें जाता है। वैष्णवजन सदा गोविन्दके चरणारविन्दोंका ध्यान करते हैं और भगवान् गोविन्द सदा उन वैष्णवोंके निकट रहकर उन्हींका ध्यान किया करते हैं।† भक्तोंकी रक्षाके लिये सुदर्शनचक्रको नियुक्त करके भी श्रीहरि निश्चिन्त नहीं होते हैं; इसलिये स्वयं भी उनके पास मौजूद रहते हैं। (अध्याय ११)

ब्रह्माजीकी अपूज्यताका कारण, गन्धर्वराजकी तपस्यासे संतुष्ट हुए भगवान् शंकरका उन्हें अभीष्ट वर देना तथा नारदजीका उनके पुत्ररूपसे उत्पन्न हो उपबर्हण नामसे प्रसिद्ध होना

तदनन्तर शौनकजीके पूछनेपर सौतिने कहा—ब्रह्मन्! हंस, यति, अरणि, वोढु, पञ्चशिख, अपान्तरतमा तथा सनक आदि—इन सबको छोड़कर अन्य सभी ब्रह्मकुमार, जिनकी संख्या बहुत अधिक थी, सदा सांसारिक कार्योंमें संलग्न हो प्रजाकी सृष्टि करके गुरुजनों (पिता आदि)-

* स किं गुरुः स किं तातः स किं पुत्रः स किं सखा। स किं राजा स किं बन्धुर्न दद्याद् यो हरौ मतिम्॥
अवैष्णवाद् द्विजाद् विप्र चण्डालो वैष्णवो नरः। सगणः श्वपचो मुक्तो ब्राह्मणो नरकं व्रजेत्॥
(ब्रह्मखण्ड ११। ३८-३९)

† ध्यायन्ते वैष्णवाः शश्वत् गोविन्दपदपङ्कजम्। ध्यायते तांश्च गोविन्दः शश्वत् तेषां च संनिधौ॥
(ब्रह्मखण्ड ११। ४४)

की आज्ञाका पालन करने लगे। स्वयं प्रजापति ब्रह्मा अपने पुत्र नारदके शापसे अपूज्य हो गये। इसीलिये विद्वान् पुरुष ब्रह्माजीके मन्त्रकी उपासना नहीं करते। नारदजी अपने पिताके शापसे उपबर्हण नामक गन्धर्व हो गये। उनके वृत्तान्तका विस्तारपूर्वक वर्णन करता हूँ; सुनिये।

इन दिनों जो गन्धर्वराज थे, वे सब गन्धर्वोंमें श्रेष्ठ और महान् थे, उच्चकोटिके ऐश्वर्यसे सम्पन्न थे, परंतु किसी कर्मवश पुत्र-सुखसे वञ्चित थे। एक समय गुरुकी आज्ञा लेकर वे पुष्करतीर्थमें गये और वहाँ उत्तम समाधि लगाकर (अथवा अत्यन्त एकाग्रतापूर्वक) भगवान् शिवकी प्रसन्नताके लिये तप करने लगे। उस समय उनके मनमें बड़ी दीनता थी, वे दयनीय हो रहे थे। कृपानिधान वसिष्ठ मुनिने गन्धर्वराजको शिवके कवच, स्तोत्र तथा द्वादशाक्षर-मन्त्रका उपदेश दिया। दीर्घकालतक निराहार रहकर उपासना एवं जप-तप करनेपर भगवान् शिवने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिये। नित्य तेजःस्वरूप सनातन भगवान् शिव ब्रह्मतेजसे जाज्वल्यमान हो दसों दिशाओंको प्रकाशित कर रहे थे। उनके प्रसन्न मुखपर मन्द हास्यकी छटा छा रही थी। भक्तोंपर अनुग्रह करनेवाले वे भगवान् तपोरूप हैं, तपस्याके बीज हैं, तपका फल देनेवाले हैं और स्वयं ही तपस्याके फल हैं। शरणमें आये हुए भक्तको वे समस्त सम्पत्तियाँ प्रदान करते हैं। उस समय वे दिगम्बर-वेषमें वृषभपर आरूढ थे, उन्होंने हाथोंमें त्रिशूल और पट्टिश ले रखे थे। उनकी अङ्गकान्ति शुद्ध स्फटिकके समान निर्मल थी। उनके तीन नेत्र थे और उन्होंने मस्तकपर चन्द्रमाका मुकुट धारण कर रखा था। उनका जटाजूट तपाये हुए सुवर्णकी प्रभाको छीने लेता था। कण्ठमें नील चिह्न और कंधेपर नागका यज्ञोपवीत शोभा दे रहा था। सर्वज्ञ शिव सबके संहारक हैं। वे ही काल और मृत्युञ्जय हैं। वे परमेश्वर ग्रीष्म-ऋतुकी दोपहरीके करोड़ों सूर्योंके समान तेजस्वी थे। शान्तस्वरूप शिव तत्त्वज्ञान, मोक्ष तथा हरिभक्ति प्रदान करनेवाले हैं।

उन्हें देखते ही गन्धर्वने सहसा दण्डकी भाँति पृथ्वीपर पड़कर प्रणाम किया और वसिष्ठजीके दिये हुए स्तोत्रसे उन परमेश्वरका स्तवन किया। तब कृपानिधान शिव उससे बोले—'गन्धर्वराज! तुम कोई वर माँगो।' तब गन्धर्वने उनसे भगवान् श्रीहरिकी भक्ति तथा परम वैष्णव पुत्रकी प्राप्तिका वर माँगा। गन्धर्वकी बात सुनकर दीनोंके स्वामी दीनबन्धु सनातन भगवान् चन्द्रशेखर हँसे और उस दीन सेवकसे बोले।

श्रीमहादेवजीने कहा—गन्धर्वराज! तुमने जो एक वर (हरिभक्ति)-को माँगा है, उसीसे तुम कृतार्थ होओगे। दूसरा वर तो चबाये हुएको चबानामात्र है। वत्स! जिसकी श्रीहरिमें सुदृढ़ एवं सर्वमङ्गलमयी भक्ति है, वह खेल-खेलमें ही सब कुछ करनेमें समर्थ है। भगवद्भक्त पुरुष अपने कुलकी और नानाके कुलकी असंख्य पीढ़ियोंका उद्धार करके निश्चय ही गोलोकमें जाता है। करोड़ों जन्मोंमें उपार्जित त्रिविध

पापोंका नाश करके वह अवश्य ही पुण्यभोग तथा श्रीहरिकी सेवाका सौभाग्य पाता है। मनुष्योंको तभीतक पत्नीकी इच्छा होती है, तभीतक पुत्र प्यारा लगता है, तभीतक ऐश्वर्यकी प्राप्ति अभीष्ट होती है और तभीतक सुख-दुःख होते हैं, जबतक कि उनका मन श्रीकृष्णमें नहीं लगता। श्रीकृष्णमें मन लगते ही भक्तिरूपी दुर्लङ्घ्य खड्ग मानवोंके कर्ममय वृक्षोंका मूलोच्छेद कर डालता है। जिन पुण्यात्माओंके पुत्र परम वैष्णव होते हैं, उनके वे पुत्र लीलापूर्वक कुलकी बहुसंख्यक पीढ़ियोंका उद्धार कर देते हैं। अहो! एक वरसे ही कृतार्थ हुआ पुरुष यदि दूसरा वर चाहता है तो मुझे आश्चर्य होता है। दूसरे वरकी क्या आवश्यकता है? लोगोंको मङ्गलकी प्राप्तिसे तृप्ति नहीं होती है। हमारे पास वैष्णवोंके लिये परम दुर्लभ धन संचित है। श्रीकृष्णकी भक्ति एवं दास्य-सुख हम लोग दूसरोंको देनेके लिये उत्सुक नहीं होते। वत्स! जो तुम्हारे मनमें अभीष्ट हो, ऐसा कोई दूसरा वर माँगो अथवा इन्द्रत्व, अमरत्व या दुर्लभ ब्रह्मपद प्राप्त करो। मैं तुम्हें सम्पूर्ण सिद्धियाँ, महान् योग और मृत्युञ्जय आदि ज्ञान यह सब कुछ सुखपूर्वक दे दूँगा, किंतु यहाँ श्रीहरिका दासत्व माँगनेका आग्रह छोड़ दो, क्षमा करो।

भगवान् शंकरकी यह बात सुनकर गन्धर्वके कण्ठ, ओठ और तालु सूख गये। वह अत्यन्त दीनभावसे सम्पूर्ण सम्पत्तियोंके दाता दीनेश्वर शिवसे बोला।

गन्धर्वने कहा—प्रभो! जिसका ब्रह्माजीकी दृष्टि पड़ते ही पतन हो जाता है, वह ब्रह्मपद स्वप्नके समान मिथ्या एवं क्षणभङ्गुर है। श्रीकृष्णभक्त उसे नहीं पाना चाहता। शिव! इन्द्रत्व, अमरत्व, सिद्धियोग आदि अथवा मृत्युञ्जय आदि ज्ञानकी प्राप्ति भी श्रीकृष्णभक्तको अभीष्ट नहीं है। श्रीहरिके सालोक्य, सार्ष्टि, सामीप्य और सायुज्यको तथा निर्वाणमोक्षको भी वैष्णवजन नहीं लेना चाहते।* भगवान्‌की अविचल भक्ति तथा उनका परम दुर्लभ दास्य प्राप्त हो—यही सोते, जागते हर समय भक्तोंकी इच्छा रहती है। अतः यही हमारे लिये श्रेष्ठ वर है। प्रभो! आप याचकोंके लिये कल्पवृक्ष हैं; अतः मुझे वरके रूपमें श्रीहरिका दास्य-सुख तथा वैष्णव पुत्र प्रदान कीजिये। आपको संतुष्ट पाकर जो दूसरा कोई वर माँगता है, वह बर्बर है। शम्भो! यदि आप मुझे दुष्कर्मी मानकर यह उपर्युक्त वर नहीं देंगे तो मैं अपना मस्तक काटकर अग्निमें होम दूँगा।

गन्धर्वकी यह बात सुनकर भक्तोंके स्वामी तथा भक्तपर अनुग्रह करनेवाले कृपानिधान भगवान् शंकर उस दीन भक्तसे इस प्रकार बोले।

भगवान् शंकरने कहा—गन्धर्वराज! भगवान् विष्णुकी भक्ति, उनके दास्य-सुख तथा परम वैष्णव पुत्रकी प्राप्ति—इस श्रेष्ठ वरको उपलब्ध करो, खिन्न न होओ। तुम्हारा पुत्र वैष्णव होनेके साथ ही दीर्घायु, सद्गुणशाली, नित्य सुस्थिर यौवनसे सम्पन्न, ज्ञानी, परम सुन्दर, गुरुभक्त तथा जितेन्द्रिय होगा।

मुने! ऐसा कहकर भगवान् शंकर वहाँसे अपने धामको चले गये और गन्धर्वराज संतुष्ट होकर अपने घरको लौटे। अपने कर्ममें सफलता प्राप्त होनेपर सभी मानवोंके मानस-पङ्कज खिल उठते हैं। उस गन्धर्वराजकी पत्नीके गर्भसे भारतवर्षमें नारदजीने ही जन्म लिया। उस वृद्धा गन्धर्वपत्नीने गन्धमादन पर्वतपर अपने पुत्रका प्रसव किया था। उस समय गुरुदेव भगवान् वसिष्ठने यथोचित रीतिसे बालकका नामकरण-संस्कार किया। उस बालकका वह मङ्गलमय

* सालोक्यसार्ष्टिसामीप्यसायुज्यं श्रीहरेरपि । तत्र निर्वाणमोक्षं च न हि वाञ्छन्ति वैष्णवाः॥
(ब्रह्मखण्ड १२। ३५)

संस्कार मङ्गलके दिन सम्पन्न हुआ। 'उप' शब्द अधिक अर्थका बोधक है और पुँल्लिङ्ग 'बर्हण' शब्द पूज्य-अर्थमें प्रयुक्त होता है। यह बालक पूज्य पुरुषोंमें सबसे अधिक है; इसलिये इसका नाम 'उपबर्हण' होगा—ऐसा वसिष्ठजीने कहा।

(अध्याय १२)

ब्रह्माजीके शापसे उपबर्हणका योगधारणाद्वारा अपने शरीरको त्याग देना, मालावतीका विलाप एवं प्रार्थना करना, देवताओंको शाप देनेके लिये उद्यत होना, आकाशवाणीद्वारा भगवान्‌का आश्वासन पाकर देवताओंका कौशिकीके तटपर मालावतीके दर्शन करना

सौति कहते हैं—शौनक! अपने यहाँ पुत्र-जन्मके उत्सवमें गन्धर्वराजने बड़ी प्रसन्नताके साथ ब्राह्मणोंको नाना प्रकारके रत्न और धन दिये। समयानुसार बड़े होनेपर उपबर्हणने वसिष्ठजीके द्वारा परम दुर्लभ हरि-मन्त्रकी दीक्षा पाकर दुष्कर तपस्या प्रारम्भ की। एक समयकी बात है, वे गण्डकीके तटपर विराजमान थे। उन्हें युवावस्था प्राप्त हो चुकी थी। उस समय पचास गन्धर्वकन्याओंने उन्हें देखा। देखते ही वे सब-की-सब मोहित हो गयीं। उन सबने उपबर्हणको पतिरूपमें प्राप्त करनेका संकल्प ले योगशक्तिसे प्राणोंको त्याग दिया और चित्ररथ गन्धर्वके घर जन्म लेकर पिताकी आज्ञासे उनके साथ विवाह कर लिया। उपबर्हणने दीर्घकालतक उन सबके साथ विहार किया। चिरकालतक निरन्तर उनके साथ राज्य करके एक दिन वे ब्रह्माजीके स्थानपर गये और वहाँ श्रीहरिका यशोगान करने लगे। वहीं रम्भाको नृत्य करते देख उपबर्हणके मनमें वासना जाग उठी और उनका वीर्य स्खलित हो गया। इससे उनकी बड़ी हँसी हुई और ब्रह्माजीने उन्हें शाप देते हुए कहा—'तुम गन्धर्व-शरीरको त्याग दो और शूद्रयोनिको प्राप्त हो जाओ। फिर समयानुसार वैष्णवोंका संसर्ग प्राप्त कर तुम पुनः मेरे पुत्रके रूपमें प्रतिष्ठित हो जाओगे। बेटा! विपत्तिका सामना किये बिना पुरुषोंकी महत्ता प्रकट नहीं होती। संसारमें सभीको बारी-बारीसे सुख और दुःख प्राप्त होते हैं।'

ऐसा कहकर ब्रह्माजी पुष्करसे अपने धामको चले गये और उपबर्हण गन्धर्वने तत्काल उस शरीरको इस प्रकारसे त्याग दिया—मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञा नामवाले छः चक्रोंका क्रमशः भेदन करके उन्होंने इडा आदि नाड़ियोंका भेदन आरम्भ किया। इडा, सुषुम्णा, मेधा, पिङ्गला, प्राणहारिणी, सर्वज्ञानप्रदा, मनःसंयमनी, विशुद्धा, निरुद्धा, वायुसंचारिणी, तेजः-शुष्ककरी, बलपुष्टिकरी, बुद्धिसंचारिणी, ज्ञानजृम्भन-कारिणी, सर्वप्राणहरा तथा पुनर्जीवनकारिणी—इन सोलह नाड़ियोंका भेदन करके मनसहित जीवात्माको ब्रह्मरन्ध्रमें लाकर वे योगासनसे बैठ गये और दो घड़ीतक उन्होंने आत्माको आत्मामें ही लगाया। तत्पश्चात् वे जातिस्मर (पूर्वजन्मकी बातोंको याद रखनेवाले) योगिराज उपबर्हण ब्रह्मभावको प्राप्त हो गये। तीन तारवाली दुर्लभ वीणाको बायें कंधेपर रखकर दाहिने हाथमें शुद्ध स्फटिककी माला लिये वे वेदके सारतत्त्व तथा उद्धारके उत्तम बीजरूप परात्पर परब्रह्ममय (कृष्ण) इन दो अक्षरोंका जप करने लगे। उन्होंने कुशकी चटाईपर पूर्वकी ओर सिरहाना करके पश्चिम दिशाकी ओर दोनों चरण फैला दिये और इस तरह सो गये, मानो कोई पुरुष सो रहा हो।

उनके पिता गन्धर्वराजने उन्हें इस प्रकार देहत्याग करते देख स्वयं भी अपनी पत्नीके साथ

मन-ही-मन श्रीकृष्णका स्मरण करते हुए योगधारणाद्वारा प्राण त्याग दिये और परब्रह्म परमात्माको प्राप्त कर लिया। उस समय उपबर्हणके सभी भाई-बन्धु और पत्नियाँ बारंबार विलाप करते हुए जोर-जोरसे रोने लगे। विष्णुकी मायासे मोहित होनेके कारण शोकसे पीड़ित हो वे उनके शरीरके पास गये। उपबर्हणकी पचास पत्नियोंमें जो उनकी परम प्रेयसी तथा प्रधान पटरानी थी, वह सती साध्वी मालावती अपने प्रियतमको छातीसे लगाकर अत्यन्त उच्च-स्वरसे रोदन करने लगी।

भाँति-भाँतिसे करुण विलाप करके मालावती बोली—कमलोद्भव ब्रह्माजीका यह कथन है कि मुझ सती-साध्वी, कुलीन नारियोंके लिये उसके पतिके सिवा दूसरा कोई विशिष्ट बान्धव नहीं दिखायी देता। अतः हे दिशाओंके स्वामी दिक्पालो! हे धर्म! हे प्रजापते! हे गिरीश शंकर! तथा हे कमलाकान्त नारायण! आप लोग मुझे पति-दान दीजिये।

ऐसा कहकर विरहसे आतुर हुई चित्ररथकी कन्या मालावती वहीं उस दुर्गम गहन वनमें मूर्च्छित हो गयी। प्रियतमको अपने वक्षःस्थलसे लगाकर पूरे एक दिन और एक रात वह अचेत-अवस्थामें वहाँ पड़ी रही। उस समय सम्पूर्ण देवताओंने उसकी रक्षा की। प्रातःकाल फिर होशमें आनेपर वह पुनः जोर-जोरसे विलाप करने लगी। उस सतीने श्रीहरिको सम्बोधित करके पुनः वहाँ इस प्रकार कहा।

मालावती बोली—हे श्रीकृष्ण! आप सम्पूर्ण जगत्के नाथ (स्वामी तथा संरक्षक) हैं। नाथ! मैं जगत्से बाहर नहीं हूँ। प्रभो! आप ही जगत्के पालक हैं। फिर मेरा पालन क्यों नहीं कर रहे हैं! 'यह पति है और मैं इसकी स्त्री हूँ'। इस प्रकार जो '**इदम्**' और '**मम**' का भाव उत्पन्न होता है, वह आपकी मायाकी ही करामात है। आप ही सबके स्वामी हैं और ऐसा होना ही अधिक सम्भव है; क्योंकि आप ही सबके कारण हैं। कर्मके फलसे गन्धर्व उपबर्हण मेरे प्रियतम पति हुए और कर्मवश ही मैं उनकी प्रियतमा पत्नी हुई। अब कर्मभोगके अन्तमें वे मुझ प्रियाको किस स्थानमें रखकर कहाँ चले गये? अथवा प्रभो! कौन किसका पति या पुत्र है? तथा कौन किसकी प्रिया है? विधाता ही कर्मके अनुसार प्राणियोंको एक-दूसरेसे संयुक्त और वियुक्त करता रहता है। संयोगमें परम आनन्द मिलता है और वियोगमें प्राणोंपर संकट उपस्थित हो जाता है। संसारमें सदा मूर्ख और अज्ञानीके ही जीवनमें ऐसी बात देखी जाती है। आत्माराम महात्माके हृदयपर निश्चय ही संयोग-वियोगका वैसा प्रभाव नहीं पड़ता। विषय नाशवान् हैं, यह बात सर्वथा सत्य है, तथापि भूतलपर विषयभोग ही बान्धव बना हुआ है। यदि विषयभोगको स्वयं त्याग दिया जाय तो वह सुखका ही कारण होता है। परंतु जब दूसरे लोग बलपूर्वक उसका त्याग करवाते हैं, तब वह दुःखदायी जान पड़ता है। इसीलिये साधु पुरुष महान्-से-महान् मनोवाञ्छित ऐश्वर्यको स्वयं त्यागकर भगवान् श्रीकृष्णके चरणारविन्दोंका, जहाँ आपत्ति या विपत्तिकी पहुँच नहीं है, सदा चिन्तन करते हैं। ज्ञानवान् संत पुरुष तो सर्वत्र हैं, परंतु भूतलपर ज्ञानवती स्त्री कौन है? अतः मुझ मूढ़ अबलाको आप मनोवाञ्छित पति प्रदान करें। मैं अमरत्व नहीं चाहती, इन्द्रपदकी इच्छा नहीं रखती और मोक्षके मार्गमें भी मेरी रुचि नहीं है; अतः आप मेरे इन श्रेष्ठ प्राणवल्लभको ही मुझे लौटा दें; क्योंकि ये मेरे लिये धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंकी प्राप्ति करानेवाले श्रेष्ठ देवता हैं।

जगदीश्वर! पृथ्वीपर जितनी भी स्त्री-जातियाँ हैं, उनमेंसे किसीको भी विधाताने इन गन्धर्वकुमारके समान गुणवान् पति नहीं दिया है।

इसके अनन्तर मालावती अपने स्वामीके गुणोंका बखान करने लगी और अन्तमें सहसा कुपित हो नारायण, ब्रह्मा, महादेव तथा धर्म आदि समस्त देवताओंको सम्बोधित करके उन्हें शाप देनेको उद्यत हो गयी। तब ब्रह्मा आदि देवताओंने क्षीरसागरके तटपर जाकर भगवान् विष्णुकी शरण ली और मालावतीके भीषण शापसे बचानेकी उनसे प्रार्थना की। देवताओंके प्रार्थना कर चुकनेपर आकाशवाणी हुई—'देवताओ! अब तुम लोग जाओ। यज्ञके मूल हैं भगवान् विष्णु, वे ही ब्राह्मणका रूप धारण करके मालावतीको शान्त करने तथा तुमलोगोंको शापके संकटसे बचानेके लिये जायँगे।'

आकाशवाणीका यह कथन सुनकर सब देवताओंका हृदय प्रसन्नतासे खिल उठा। वे सब-के-सब उत्कण्ठित हो कौशिकीके तटपर मालावतीके स्थानमें गये। वहाँ पहुँचकर देवताओंने उस सती मालावती देवीको देखा। वह रत्नोंके सारभूत इन्द्रनील आदि मणियोंके आभूषणोंसे उद्दीप्त हो भगवती लक्ष्मीकी कला-सी जान पड़ती थी। उसके अङ्गोंको अग्निमें तपाकर शुद्ध की हुई सुनहरी साड़ी सुशोभित कर रही थी। भालदेशमें सिन्दूरकी बेंदी शोभा दे रही थी। वह शरत्कालके चन्द्रमाकी शान्त प्रभा-सी प्रकाशित होती और अपनी दीप्तिसे सम्पूर्ण दिशाओंको उद्भासित करती थी। पतिसेवारूप महान् धर्मका अनुष्ठान करके चिरकालसे संचित किये हुए तेजसे अग्निकी उत्तम एवं प्रज्वलित शिखा-सी उद्दीप्त हो रही थी। पतिके शवको छातीसे लगाकर योगासन लगाये बैठी थी और स्वामीकी सुरम्य वीणाको दाहिने हाथमें लिये हुए थी। प्राणवल्लभके प्रति भक्ति तथा स्नेहके कारण योगमुद्रापूर्वक तर्जनी और अङ्गुष्ठ अंगुलियोंके अग्रभागसे शुद्ध स्फटिक मणिकी माला धारण किये थी। मनोहर चम्पाकी-सी अङ्ग-कान्ति, बिम्बफलके सदृश

अरुण ओष्ठ और गलेमें रत्नोंकी माला शोभा पाती थी। वह सुन्दरी सोलह वर्षकी-सी अवस्थासे युक्त तथा नित्य सुस्थिर यौवनसे सम्पन्न थी। वह सती अपने स्वामीके शवको बारंबार शुभदृष्टिसे देख रही थी।

इस रूपमें मालावतीको देखकर उन सब देवताओंको बड़ा विस्मय हुआ। वे सभी धर्मात्मा और धर्मभीरु थे; अतः क्षणभर वहाँ अपनेको छिपाये खड़े रहे।

(अध्याय १३)

ब्राह्मण-बालकरूपधारी विष्णुका मालावतीके साथ संवाद, ब्राह्मणके पूछनेपर मालावतीका अपने दुःख और इच्छाको व्यक्त करना तथा ब्राह्मणका कर्मफलके विवेचनपूर्वक विभिन्न देवताओंकी आराधनासे प्राप्त होनेवाले फलका वर्णन करना, श्रीकृष्ण एवं उनके भजनकी महिमा बताना

सौति कहते हैं—मुने! क्षणभर वहाँ खड़े रहकर परम मङ्गलदायक ब्रह्मा और शिव आदि देवता मालावतीके निकट गये। देवताओंको आया देख पतिव्रता मालावतीने अपने प्राणवल्लभको उनके समीप रखकर उन सबको प्रणाम किया। तत्पश्चात् वह फूट-फूटकर रोने लगी। इसी बीचमें वहाँ उस देवसमाजके भीतर कोई ब्राह्मण-बालक आया। उसकी आकृति बड़ी मनोहर थी। दण्ड, छत्र, श्वेत वस्त्र और उज्ज्वल तिलक धारण किये तथा हाथमें एक बड़ी-सी पुस्तक लिये वह ब्राह्मण-कुमार अपने तेजसे प्रज्वलित-सा हो रहा था। उसके सम्पूर्ण अङ्ग चन्दनसे चर्चित थे। वह परम शान्त जान पड़ता था और मन्द-मन्द मुस्करा रहा था। विष्णुकी मायासे विस्मित हुए देवताओंकी अनुमति ले वह वहीं देवसभाके मध्यभागमें बैठ गया और तारामण्डलके बीचमें प्रकाशित होनेवाले चन्द्रमाकी भाँति शोभा पाने लगा। वह ब्राह्मण-बालक समस्त देवताओं तथा मालती (मालावती)-से इस प्रकार बोला।

ब्राह्मणने कहा—यहाँ ब्रह्मा और शिव आदि सम्पूर्ण देवता किसलिये पधारे हैं? जगत्की सृष्टि करनेवाले साक्षात् विधाता यहाँ किस कार्यसे आये हैं? समस्त ब्रह्माण्डोंका संहार करनेवाले स्वयं सर्वव्यापी शम्भु भी यहाँ विराज रहे हैं। इसका क्या कारण है? तीनों लोकोंके समस्त कर्मोंके साक्षी धर्म भी यहाँ उपस्थित हैं, यह महान् आश्चर्य है। सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, काल, मृत्युकन्या तथा यम आदिका समागम ही यहाँ किसलिये सम्भव हुआ है? हे मालावति! तुम्हारी गोदमें अत्यन्त सूखा हुआ शव कौन है? जीती-जागती स्त्रीके पास मरा हुआ पुरुष क्यों है?

उस सभामें देवताओं तथा मालावतीसे ऐसा प्रश्न करके वे ब्राह्मण देवता जब चुप हो गये, तब मालावती उन विद्वान् ब्राह्मणको प्रणाम करके यों बोली।

मालावतीने कहा—मैं ब्राह्मणरूपधारी भगवान् विष्णुको प्रसन्नतापूर्वक प्रणाम करती हूँ, जिनके दिये हुए जल और पुष्पमात्रसे सम्पूर्ण देवता तथा श्रीहरि भी संतुष्ट होते हैं। प्रभो! मैं शोकसे आतुर हूँ। आप मेरे इस निवेदनपर ध्यान दीजिये; क्योंकि योग्य और अयोग्यपर भी कृपा करनेवाले संत-महात्माओंका अनुग्रह सदा सबपर समानरूपसे प्रकट होता है। विप्रवर! मैं उपबर्हणकी पत्नी तथा चित्ररथकी कन्या हूँ। मुझे सब लोग मालावती कहते हैं। मैंने लक्ष दिव्य वर्षोंतक अपने इन स्वामीके साथ प्रत्येक सुरम्य तथा मनोहर स्थानपर स्वच्छन्द क्रीडा की है। द्विजेन्द्र! आप विद्वान् हैं। साध्वी युवतियोंका अपने प्रियतमके प्रति जितना स्नेह होता है, वह सब आपको शास्त्रके अनुसार विदित है। मेरे पतिने अकस्मात् ब्रह्माजीका शाप प्राप्त होनेसे अपने प्राणोंको त्याग दिया है। अतः मैं देवताओंसे यह उद्देश्य रखकर विलाप करती हूँ कि मेरे पति जीवित हो जायँ। पृथ्वीपर सब लोग अपने-अपने कार्यकी सिद्धिके लिये व्यग्र रहते हैं। वे लाभ-हानिको नहीं जानते। केवल स्वार्थ-साधनमें तत्पर रहते हैं। सुख, दुःख, भय, शोक, संताप, ऐश्वर्य, परमानन्द, जन्म, मृत्यु और मोक्ष—ये सब मनुष्योंको अपने कर्म एवं प्रयत्नके अनुसार प्राप्त होते हैं। देवता सबके जनक हैं। वे ही कर्मोंका फल देते हैं। साथ ही वे लीलापूर्वक

कर्मरूपी वृक्षोंका मूलोच्छेद करनेमें भी समर्थ होते हैं। देवतासे बढ़कर कोई बन्धु नहीं है। देवतासे बढ़कर कोई बलवान् नहीं है। देवतासे बढ़कर दयालु और दाता भी दूसरा कोई नहीं है। मैं समस्त देवताओंसे याचना करती हूँ कि वे मुझे पतिदान दें। यही मुझे अभीष्ट है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्षके फल देनेवाले देवता कल्पवृक्षरूप हैं। इसलिये मैं इनसे याचना करती हूँ, ये मेरा मनोरथ सफल करें। यदि देवतालोग मुझे अभीष्ट पतिदान देंगे, तब तो इनका भला है; अन्यथा मैं इन सबको निश्चय ही स्त्रीके वधका पाप दूँगी। इतना ही नहीं, मैं इन सबको दारुण एवं दुर्निवार शाप भी दे सकती हूँ। सतीके शापको टालना बहुत कठिन होता है। किस तपस्यासे उसका निवारण किया जायगा?

शौनक! ऐसा कहकर शोकातुर पतिव्रता मालावती उस देवसभामें चुप हो गयी। तब उन श्रेष्ठ ब्राह्मणने उससे कहा।

ब्राह्मण बोले—मालावती! इसमें संदेह नहीं कि देवतालोग कर्मोंका फल देनेवाले हैं; परंतु वह फल तत्काल नहीं, देरसे मिलता है। ठीक वैसे ही, जैसे किसान बोये हुए अनाजका फल तुरंत नहीं, देरसे पाता है। पतिव्रते! गृहस्थ पुरुष हलवाहेके द्वारा अपने खेतमें जो अनाज बोता है, उसका समयानुसार अङ्कुर प्रकट होता है। फिर समय आनेपर वह वृक्ष होता और फलता भी है। तत्पश्चात् अन्य समयमें वह पकता है और अन्य समयमें गृहस्थ पुरुष उसके फलको पाता है। इसी प्रकार सबके विषयमें समझ लेना चाहिये। प्रत्येक कर्मका फल देरसे ही मिलता है। संसारमें गृहस्थ पुरुष जो बीज बोता है, वही भगवान् विष्णुकी मायासे समयानुसार अङ्कुर और वृक्ष होता है और यथासमय गृहस्थ पुरुषको उसके फलकी उपलब्धि होती है। पुण्यात्मा पुरुष पुण्यभूमिमें चिरकालतक जो तप करता है, उसका फल देनेवाले सचमुच देवता ही हैं; इसमें संशय नहीं है। ब्राह्मणोंके मुखमें तथा ऊसर भूमिसे रहित उत्तम खेतमें मनुष्य भक्तिभावसे जो आहुति डालता है, उसका फल उसे निश्चय ही प्राप्त होता है। बल, सौन्दर्य, ऐश्वर्य, धन, पुत्र, स्त्री और उत्तम पति—कोई भी पदार्थ तपस्याके बिना नहीं मिलता। अतः तपके बिना क्या हो सकता है? जो भक्तिभावसे प्रकृति (दुर्गादेवी)-का सेवन करता है, वह प्रत्येक जन्ममें विनयशील सद्गुणवती तथा सुन्दरी प्राणवल्लभा पत्नीको प्राप्त करता है। प्रकृतिके ही वरसे भक्त पुरुष लीलापूर्वक अविचल लक्ष्मी, पुत्र-पौत्र, भूमि, धन और संततिको पाता है। भगवान् शिव कल्याणस्वरूप, कल्याणदाता और कल्याणप्राप्तिके कारण हैं। वे ज्ञानानन्दस्वरूप, महात्मा, परमेश्वर एवं मृत्युञ्जय हैं। जो भक्तिभावसे उन महेश्वरका सेवन करता है, वह पुरुष प्रत्येक जन्ममें सुन्दरी पत्नी पाता है और उनकी आराधना करनेवाली स्त्री प्रत्येक जन्ममें उत्तम पति पाती है। भगवान् हरके वरसे मनुष्यको विद्या, ज्ञान, उत्तम कविता, पुत्र-पौत्र, उत्कृष्ट लक्ष्मी, धन, बल और पराक्रमकी प्राप्ति होती है। जो मानव ब्रह्माजीका भजन करता है, वह भी संतान और लक्ष्मीको पाता है। ब्रह्माजीके वरदानसे मनुष्यको विद्या, ऐश्वर्य और आनन्दकी प्राप्ति होती है। जो मनुष्य भक्तिभावसे दीननाथ, दिनेश्वर सूर्यकी आराधना करता है, वह निश्चय ही यहाँ विद्या, आरोग्य, आनन्द, धन और पुत्र पाता है। जो सबसे प्रथम पूजने योग्य, सर्वेश्वर, सनातन, देवाधिदेव गणेशजीकी भक्तिभावसे पूजा करता है, उसके जन्म-जन्ममें समस्त विघ्नोंका नाश होता है। वह सोते-जागते हर समय परम आनन्दका अनुभव करता है। गणेशजीके वरदानसे उसको ऐश्वर्य, पुत्र, पौत्र, धन, प्रजा, ज्ञान, विद्या और उत्तम कवित्वकी प्राप्ति होती है। जो देवताओंके स्वामी लक्ष्मीपति भगवान् विष्णुका भजन करता है, वह यदि वर पानेका इच्छुक

हो तो उसे वह सम्पूर्ण वर प्राप्त हो जाता है। अन्यथा अवश्य ही उसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। शान्तस्वरूप जगत्पालक श्रीविष्णुकी सेवा करके सचमुच ही मनुष्य समस्त तप, सम्पूर्ण धर्म तथा परम उत्तम यश एवं कीर्तिको प्राप्त कर लेता है। जो मूढ़ सर्वेश्वर विष्णुका सेवन करके उसके बदलेमें कोई वर लेना चाहता है, उसे विधाताने ठग लिया और विष्णुकी मायाने मोहमें डाल दिया। नारायणकी माया सब कुछ करनेमें समर्थ, सबकी कारणभूता और परमेश्वरी है। वह जिसपर कृपा करती है, उसे विष्णु-मन्त्र देती है।

जो धर्मात्मा मनुष्य धर्मका भजन करता है, वह निश्चय ही सम्पूर्ण धर्मका फल पाता है और इहलोकमें सुख भोगकर परलोकमें विष्णुके परमपदको प्राप्त कर लेता है। जो मनुष्य जिस देवताकी भक्तिभावसे आराधना करता है, वह पहले उसीको पाता है, फिर समयानुसार उस देवताके साथ ही वह उत्तम विष्णुधाममें चला जाता है।

भगवान् श्रीकृष्ण प्रकृतिसे परे तथा तीनों गुणोंसे अतीत—निर्गुण हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदिके सेव्य, उनके आदिकारण, परात्पर अविनाशी परब्रह्म एवं सनातन भगवान् हैं। साकार, निराकार, ज्योतिःस्वरूप, स्वेच्छामय, सर्वव्यापी, सर्वाधार, सर्वेश्वर, परमानन्दमय, ईश्वर, निर्लिप्त तथा साक्षिरूप हैं। वे भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये ही दिव्य विग्रह धारण करते हैं। जो उनकी आराधना करता है, वह सचमुच ही जीवन्मुक्त है। वह बुद्धिमान् पुरुष कोई वर नहीं ग्रहण करता। सालोक्य आदि चारों प्रकारकी मुक्तियोंको भी वह तुच्छ समझने लगता है। ब्रह्मत्व, अमरत्व और मोक्ष भी उसके लिये तुच्छ-सा हो जाता है। ऐश्वर्यको वह मिट्टीके ढेलेके समान नश्वर मानता है। इन्द्रत्व, मनुत्व और चिरजीवीत्वको भी पानीके बुलबुलेके समान क्षणभङ्गुर समझकर अत्यन्त तुच्छ गिनने लगता है। सोते-जागते हर समय श्रीकृष्णकी सेवा ही चाहता है। उनकी दासताके सिवा दूसरा कोई पद नहीं मानता। श्रीकृष्णके चरणारविन्दोंमें निरन्तर एवं अविचल भक्ति पाकर वह पूर्णकाम हो जाता है। श्रीकृष्णका भक्त उन परिपूर्णतम ब्रह्मका सेवन करके सदा सुस्थिर रहता है। वह अपने कुलकी करोड़ों, नानाके कुलकी सैकड़ों तथा श्वशुरके कुलकी सैकड़ों पूर्व पीढ़ियोंका लीलापूर्वक उद्धार करके दास, दासी, माता और पत्नीका तथा पुत्रके बादकी भी सैकड़ों पीढ़ियोंका उद्धार कर देता है और स्वयं निश्चय ही गोलोकमें जाता है। मनुष्य तभीतक कामासक्त होकर गर्भमें निवास करता है, तभीतक यमयातना भोगता है और गृहस्थ पुरुष तभीतक भोगोंकी इच्छा रखता है, जबतक कि श्रीकृष्णका सेवन नहीं करता। यमराज उस भक्तके कर्मसम्बन्धी लेखको तत्काल भयके मारे दूर कर देता है। ब्रह्माजी पहलेसे ही उसके स्वागतके लिये मधुपर्क आदि तैयार करके रखते हैं और सोचते हैं कि अहो! वह मेरे लोकको लाँघकर इसी मार्गसे यात्रा करेगा। कोटिशत कल्पोंमें भी उसका वहाँसे निष्कासन नहीं होगा। जैसे सर्प गरुड़को देखते ही भाग जाते हैं, उसी तरह करोड़ों जन्मोंके किये हुए पाप भी श्रीकृष्ण-भक्तसे भयभीत हो उसे छोड़कर पलायन कर जाते हैं। श्रीकृष्ण-भक्त मानव-शरीरको छोड़नेके बाद निर्भय हो गोलोकमें जाता है। वहाँ जानेपर दिव्य शरीर धारण करके सदा श्रीकृष्णकी सेवा करता है। श्रीकृष्ण जबतक गोलोकमें निवास करते हैं, तबतक भक्त पुरुष निरन्तर वहाँ उनकी सेवामें रहता है। श्रीकृष्णका दास ब्रह्माकी नश्वर आयुको एक निमेषभरका मानता है।

(अध्याय १४)

ब्राह्मणद्वारा अपनी शक्तिका परिचय, मृतकको जीवित करनेका आश्वासन, मालावतीका पतिके महत्त्वको बताना और काल, यम, मृत्युकन्या आदिको ब्राह्मणद्वारा बुलवाकर उनसे बात करना, यम आदिका अपनेको ईश्वरकी आज्ञाका पालक बताना और उसे 'श्रीकृष्णचिन्तन' के लिये प्रेरित करना

ब्राह्मण बोले—पतिव्रते ! इस समय तुम्हारे प्रियतम किस रोगसे मरे हैं? मैं चिकित्सक भी हूँ। अतः समस्त रोगोंकी चिकित्सा भी जानता हूँ। सती मालावति! कोई रोगसे मृतकतुल्य हो गया हो अथवा मर गया हो, किंतु यदि एक सप्ताहके भीतरकी ही घटना हो तो मैं उस जीवको चिकित्सा-सम्बन्धी महान् ज्ञानके द्वारा चुटकी बजाते हुए जीवित कर सकता हूँ। जैसे व्याध पशुको बाँधकर सामने ला देता है, उसी प्रकार मैं जरा, मृत्यु, यम, काल तथा व्याधियोंको बाँधकर तुम्हारे सामने लाने और तुम्हें सौंप देनेकी शक्ति रखता हूँ। सुन्दरि! जिस उपायसे रोग देहधारियोंके शरीरोंमें न फैले, वह तथा रोगोंका जो-जो कारण है, वह सब मैं अच्छी तरह जानता हूँ। मैं शास्त्रके तत्त्वज्ञानके अनुसार उस उपायको भी जानता हूँ, जिससे व्याधियोंका दुष्ट एवं अमङ्गलकारी बीज अङ्कुरित ही न हो। जो योगसे अथवा रोगजनित कष्टसे देह-त्याग करता है, उसके जीवित होनेका उपाय क्या है ? इसे भी मैं योगधर्मके प्रभावसे जानता हूँ।

ब्राह्मणकी यह बात सुनकर सती मालावतीके मनमें उत्साह हुआ। वह मुस्करायी। उसके चित्तमें स्नेह उमड़ आया और वह हर्षसे भरकर बोली।

मालावतीने कहा—अहो! इस बालकके मुखसे कैसी आश्चर्यजनक बात सुनी गयी है? यह अवस्थामें तो बहुत छोटा दिखायी देता है; परंतु इसका ज्ञान योगवेत्ताओंके समान उच्च कोटिका है। ब्रह्मन्! आपने मेरे प्रियतम पतिको जीवित कर देनेकी प्रतिज्ञा की है। सत्पुरुषोंका वचन कभी मिथ्या नहीं होता। अतः उसी क्षण मुझे विश्वास हो गया कि मेरे पति जीवित हो गये। वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ ब्राह्मण! आप मेरे प्राणवल्लभको पीछे जिलाइयेगा। पहले मै संदेहवश जो-जो पूछती हूँ, उसी-उसी बातको आप बतानेकी कृपा करें। इस सभामें जब मेरे प्राणनाथ जीवित हो जायँगे और जीवित होकर यहाँ मौजूद रहेंगे, तब मैं उनके निकट आपसे कोई बात पूछ नहीं सकूँगी; क्योंकि उनका स्वभाव बड़ा तीखा है। इस सभामें ये ब्रह्मा आदि देवता विद्यमान हैं। वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ आप भी यहाँ उपस्थित हैं। परंतु आप सब लोगोंमेंसे कोई भी मेरा स्वामी नहीं है। यदि स्वामी अपनी पत्नीकी रक्षा करता है तो कोई भी उसका खण्डन नहीं कर सकता तथा यदि वह उसका शासन करता या उसे दण्ड देता है तो इस भूतलपर दूसरा कोई स्वामीसे उसकी रक्षा करनेवाला नहीं है। इसी प्रकार देवताओंमें, इन्द्रमें अथवा ब्रह्मा और रुद्रमें भी ऐसी शक्ति नहीं है। स्वामी और स्त्रीमें पति-पत्नीभाव-सम्बन्ध जानना चाहिये।

स्वामी ही स्त्रियोंका कर्ता, हर्ता, शासक, पोषक, रक्षक, इष्टदेव तथा पूज्य है। नारीके लिये पतिसे बढ़कर दूसरा कोई गुरु नहीं है। जो उत्तम कुलमें उत्पन्न हुई कन्या है, वह सदा अपने प्राणवल्लभके वशमें रहती है। जो स्वतन्त्र होती है वह स्वभावसे ही दुष्टा है। उसे निश्चय ही 'कुलटा' कहा गया है। जो दुष्टा है, मनुष्योंमें अधम है तथा पर-पुरुषका सेवन करती है, वही सदा अपने पतिकी निन्दा करती है। अवश्य ही वह किसी नीच कुलकी कन्या होती है। ब्रह्मन्! मैं उपबर्हणकी पत्नी, चित्ररथकी पुत्री और गन्धर्वराजकी पुत्रवधू हूँ। मैंने सदा अपने प्रियतम पतिमें भक्ति-भाव रखा है। वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ ब्राह्मण! आप सबको

यहाँ बुलानेमें समर्थ हैं, अतः काल, यम तथा मृत्युकन्याको मेरे पास ले आइये।

मालावतीकी यह बात सुनकर वेदवेत्ताओंमें उत्तम ब्राह्मणने उस सभामें उन सबको बुलाकर प्रत्यक्ष खड़ा कर दिया। सती मालावतीने सबसे पहले मृत्युकन्याको देखा। उसका रूप-रंग काला था, वह देखनेमें भयंकर थी। उसने लाल रंगके कपड़े पहन रखे थे। वह मन्द-मन्द मुसकरा रही थी। उसके छः भुजाएँ थीं। वह शान्त, दयालु और महासती थी तथा अपने स्वामी कालके वाम-भागमें चौंसठ पुत्रोंके साथ खड़ी थी। तत्पश्चात् सती मालावतीने नारायणके अंशभूत कालको भी सामने खड़ा देखा। उसका रूप बड़ा ही उग्र, विकट तथा ग्रीष्म-ऋतुके सूर्यकी भाँति प्रचण्ड तेजसे युक्त था। उसके छः मुख, सोलह भुजाएँ और चौबीस नेत्र थे। पैरोंकी संख्या भी छः ही थी। शरीरका रंग काला था। उसने भी लाल वस्त्र पहन रखे थे। वह देवताओंका भी देवता है। उसकी विकराल आकृति है। वह सर्वसंहाररूपी, कालका अधिदेवता, सर्वेश्वर एवं सनातन भगवान् है। उसके मुखपर मन्द मुस्कान-जनित प्रसन्नता दृष्टिगोचर होती थी, उसने हाथमें अक्षमाला धारण कर रखी थी और वह अपने स्वामी तथा आत्मा परम ब्रह्म श्रीकृष्णका नाम जप रहा था।

इसके बाद सतीने अपने सामने अत्यन्त दुर्जय व्याधिसमूहोंको देखा, जो अवस्थामें अत्यन्त बड़े-बूढ़े होनेपर भी अपनी माताके निकट दूध पीते बच्चोंके समान दिखायी देते थे। तदनन्तर उसने यमको सामने देखा, जो धर्माधर्मके विचारको जाननेवाले परम धर्मस्वरूप तथा पापियोंके भी शासक हैं। उनके पैर स्थूल थे। शरीरकी कान्ति श्याम थी। धर्मनिष्ठ सूर्यनन्दन यम परब्रह्मस्वरूप सनातन भगवान् श्रीकृष्णका मन्त्र जप रहे थे। उन सबको देख महासाध्वी मालावतीके मुख और नेत्र प्रसन्नतासे खिल उठे। उसने निःशंक होकर पहले यमसे पूछा।

मालावती बोली—धर्मशास्त्रविशारद! धर्मनिष्ठ धर्मराज! प्रभो! आप समयका उल्लङ्घन करके मेरे प्राणनाथको कैसे लिये जाते हैं?

यमराजने कहा—पतिव्रते! समय पूरा हुए बिना तथा ईश्वरकी आज्ञा मिले बिना इस भूतलपर किसीकी मृत्यु नहीं होती। जो मरा नहीं है, ऐसे पुरुषको मैं नहीं ले जाता। मैं, काल, मृत्युकन्या तथा अत्यन्त दुर्जय व्याधिसमूह—ये आयु पूर्ण होनेपर, जिसके मरणका समय आ पहुँचता है, उसीको ईश्वरकी आज्ञासे ले जाते हैं। मृत्युकन्या विचारशील है। यह आयु निःशेष होनेपर जिसको प्राप्त होती है, उसीको मैं ले जाता हूँ। तुम उसीसे पूछो। वह किस कारणसे जीवको प्राप्त होती है ?

मालावती बोली—मृत्युकन्ये! स्वामीके वियोगसे होनेवाली वेदनाको जानती हो। अतः प्यारी सखी! बताओ, मेरे जीते-जी तुम मेरे प्राणवल्लभको क्यों हर ले जाती हो ?

मृत्युकन्या बोली—पूर्वकालमें विश्वस्रष्टा ब्रह्माजीने इस कर्मके लिये मेरी ही सृष्टि की। पतिव्रते! मैं बड़ी भारी तपस्या करके भी इस कार्यको त्यागनेमें असमर्थ हूँ। सुन्दरि! इस संसारमें यदि कोई सतियोंमें सबसे श्रेष्ठ और तेजस्विनी सती हो तथा वह मुझे ही अपने तेजसे भस्म कर डालनेमें समर्थ हो जाय, तब तो यहाँ सारी ही आपत्तियोंकी शान्ति हो जायगी। फिर मेरे पुत्रों और स्वामीकी जो दशा होनी होगी सो हो जायगी। कालसे प्रेरित होकर ही मैं और मेरे पुत्र व्याधिगण किसी प्राणीका स्पर्श करते हैं। अतः इसमें मेरा तथा मेरे पुत्रोंका कोई दोष नहीं है। अब तुम मेरा निश्चित विचार सुनो। भद्रे! धर्मसभामें बैठनेवाले जो धर्मज्ञ महात्मा काल हैं, उनसे इस विषयमें पूछो। फिर जो उचित हो वह अवश्य करना।

मालावतीने कहा—हे काल! आप कर्मोंके साक्षी हैं, कर्मस्वरूप हैं तथा नारायणके सनातन अंश हैं। भगवन्! आप परमेश्वरको नमस्कार है। प्रभो! मैं जीवित हूँ। फिर मेरे प्रियतमको आप क्यों हर ले जाते हैं ? कृपानिधे! आप सर्वज्ञ हैं। अतः सबके दुःखको भी जानते हैं।

कालपुरुष बोले—पतिव्रते! मैं अथवा यमराज किस गिनतीमें हैं। मृत्युकन्या और व्याधियोंकी क्या बिसात है। हम सब लोग सदा ईश्वरकी आज्ञाका पालन करनेके लिये भ्रमण करते हैं। जिन्होंने प्रकृतिकी सृष्टि की है; ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवताओंको प्रकट किया है; मुनीन्द्र, मनु और मानव आदि समस्त जन्तु जिनसे उत्पन्न हुए हैं, योगिजन जिनके चरणारविन्दका चिन्तन करते हैं, बुद्धिमान् मनुष्य जिन परमात्माके पवित्र नामोंका सदा जप करते हैं, जिनके भयसे हवा चलती है और सूर्य तपता है, जिनकी आज्ञासे ब्रह्मा सृष्टि और विष्णु पालन करते हैं, जिनके आदेशसे शंकर सम्पूर्ण जगत्का संहार करते हैं, कर्मोंके साक्षी धर्म जिनकी आज्ञाके परिपालक हैं, राशिचक्र और समस्त ग्रह जिनका शासन शिरोधार्य करके आकाशमें चक्कर लगाते हैं, दिशाओंके स्वामी दिक्पाल जिनकी आज्ञाका पालन करते हैं। सती मालावति! जिनकी आज्ञासे वृक्ष समयपर फूल और फल धारण करते और देते हैं, जिनके आदेशसे पृथ्वी जलका तथा समस्त चराचर प्राणियोंका आधार बनी हुई है, क्षमाशील वसुधा जिनके भयसे कभी-कभी सहसा कम्पित हो उठती है, जिनकी मायासे माया भी सदा मोहित रहती है, सबको जन्म देनेवाली प्रकृति जिनके भयसे भीत रहती है, वस्तुओंकी सत्ताको बतानेवाले वेद भी जिनका अन्त नहीं जानते, समस्त पुराण जिनकी ही स्तुतिका पाठ करते हैं, जिन तेजोमय सर्वव्यापी भगवान्की सोलहवीं कलास्वरूप ब्रह्मा, विष्णु और महाविराट् पुरुष उन्हींके नामका जप करते हैं, वे ही सबके ईश्वर, काल-के-काल, मृत्यु-की-मृत्यु तथा परात्पर परमात्मा हैं। उन्हीं श्रीकृष्णका तुम चिन्तन करो। वे कृपानिधान श्रीकृष्ण तुम्हें सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तु तथा पति भी प्रदान करेंगे। ये सब देवता जिनकी आज्ञाके अधीन हैं, वे सर्वेश्वर श्रीकृष्ण ही सम्पूर्ण सम्पत्तियोंके दाता हैं।

शौनक! ऐसा कहकर कालपुरुष चुप हो गये। तत्पश्चात् ब्राह्मणने पुनः वार्ता आरम्भ की।

(अध्याय १५)

मालावतीके पूछनेपर ब्राह्मणद्वारा वैद्यकसंहिताका वर्णन, आयुर्वेदकी आचार्यपरम्परा, उसके सोलह प्रमुख विद्वानों तथा उनके द्वारा रचित तन्त्रोंका नाम-निर्देश, ज्वर आदि चौंसठ रोग, उनके हेतुभूत वात, पित्त, कफकी उत्पत्तिके कारण और उनके निवारणके उपायोंका विवेचन

ब्राह्मण बोले—शुभे! तुमने काल, यम, मृत्युकन्या तथा व्याधिगणोंका साक्षात्कार कर लिया। अब तुम्हारे मनमें क्या संदेह है? उसे पूछो।

ब्राह्मणकी बात सुनकर सती मालावतीको बड़ा हर्ष हुआ। उसके मनमें जो प्रश्न था उसे उसने उन जगदीश्वरके समक्ष प्रस्तुत किया।

मालावतीने कहा—ब्रह्मन्! आपने जो यह कहा कि रोग प्राणियोंके प्राणोंका अपहरण करता है, रोगके जो नाना प्रकारके कारण हैं, उन सबका वेद (आयुर्वेद)-में निरूपण किया गया है, उसके

सम्बन्धमें मेरा निवेदन यों है—जिसका निवारण करना कठिन है, वह अमङ्गलकारी रोग जिस उपायसे शरीरमें न फैले, उसका आप वर्णन करनेकी कृपा करें। मैंने जो-जो बात पूछी है या नहीं पूछी है तथा जो ज्ञात है अथवा नहीं ज्ञात है, वह सब कल्याणकी बात आप मुझे बताइये; क्योंकि आप दीनोंपर दया करनेवाले गुरु हैं।

मालावतीका वचन सुनकर ब्राह्मणरूपधारी भगवान् विष्णुने वहाँ 'वैद्यकसंहिता' का वर्णन आरम्भ किया।

ब्राह्मण बोले—जो सम्पूर्ण तत्त्वोंके ज्ञाता, समस्त कारणोंके भी कारण तथा वेद-वेदाङ्गोंके बीजके भी बीज हैं, उन परमेश्वर श्रीकृष्णकी मैं वन्दना करता हूँ। समस्त मङ्गलोंके भी मङ्गलकारी बीजस्वरूप उन सनातन परमेश्वरने मङ्गलके आधारभूत चार वेदोंको प्रकट किया। उनके नाम हैं—ऋक्, यजु, साम और अथर्व। उन वेदोंको देखकर और उनके अर्थका विचार करके प्रजापतिने आयुर्वेदका संकलन किया। इस प्रकार पञ्चम वेदका निर्माण करके भगवान्ने उसे सूर्यदेवके हाथमें दे दिया। उससे सूर्यदेवने एक स्वतन्त्र संहिता बनायी। फिर उन्होंने अपने शिष्योंको वह अपनी 'आयुर्वेदसंहिता' दी और पढ़ायी। तत्पश्चात् उन शिष्योंने भी अनेक संहिताओंका निर्माण किया। पतिव्रते! उन विद्वानोंके नाम और उनके रचे हुए तन्त्रोंके नाम, जो रोगनाशके बीजरूप हैं, मुझसे सुनो। धन्वन्तरि, काशिराज, दिवोदास, दोनों अश्विनीकुमार, नकुल, सहदेव, सूर्यपुत्र यम, च्यवन, जनक, बुध, जाबाल, जाजलि, पैल, करथ और अगस्त्य—ये सोलह विद्वान् वेद-वेदाङ्गोंके ज्ञाता तथा रोगोंके नाशक (वैद्य) हैं। पतिव्रते! सबसे पहले भगवान् धन्वन्तरिने 'चिकित्सा-तत्त्वविज्ञान' नामक एक मनोहर तन्त्रका निर्माण किया। फिर दिवोदासने 'चिकित्सा-दर्पण' नामक ग्रन्थ बनाया। काशिराजने 'दिव्य चिकित्सा-कौमुदी' का प्रणयन किया। दोनों अश्विनीकुमारोंने 'चिकित्सा-सारतन्त्र' की रचना की, जो भ्रमका निवारण करनेवाला है। नकुलने 'वैद्यकसर्वस्व' नामक तन्त्र बनाया। सहदेवने 'व्याधिसिन्धुविमर्दन' नामक ग्रन्थ तैयार किया। यमराजने 'ज्ञानार्णव' नामक महातन्त्रकी रचना की। भगवान् च्यवन मुनिने 'जीवदान' नामक ग्रन्थ बनाया। योगी जनकने 'वैद्यसंदेहभञ्जन' नामक ग्रन्थ लिखा। चन्द्रकुमार बुधने 'सर्वसार,' जाबालने 'तन्त्रसार' और जाजलि मुनिने 'वेदाङ्ग-सार' नामक तन्त्रकी रचना की। पैलने 'निदान-तन्त्र', करथने उत्तम 'सर्वधर-तन्त्र' तथा अगस्त्यजीने 'द्वैधनिर्णय' तन्त्रका निर्माण किया। ये सोलह तन्त्र चिकित्सा-शास्त्रके बीज हैं, रोग-नाशके कारण हैं तथा शरीरमें बलका आधान करनेवाले हैं। आयुर्वेदके समुद्रको ज्ञानरूपी मथानीसे मथकर विद्वानोंने उससे नवनीत-स्वरूप ये तन्त्र-ग्रन्थ प्रकट किये हैं। सुन्दरि! इन सबको क्रमशः देखकर तुम दिव्य भास्कर-संहिताका तथा सर्वबीजस्वरूप आयुर्वेदका पूर्णतया ज्ञान प्राप्त कर लोगी। आयुर्वेदके अनुसार रोगोंका परिज्ञान करके वेदनाको रोक देना—इतना ही वैद्यका वैद्यत्व है। वैद्य आयुका स्वामी नहीं है—वह उसे घटा अथवा बढ़ा नहीं सकता। चिकित्सक आयुर्वेदका ज्ञाता, चिकित्साकी क्रियाको यथार्थरूपसे जाननेवाला धर्मनिष्ठ और दयालु होता है; इसलिये उसे 'वैद्य' कहा गया है।

दारुण ज्वर समस्त रोगोंका जनक है। उसे रोकना कठिन होता है। वह शिवका भक्त और योगी है। उसका स्वभाव निष्ठुर होता है और आकृति विकृत (विकराल)। उसके तीन पैर, तीन सिर, छः हाथ और नौ नेत्र हैं। वह भयंकर ज्वर काल, अन्तक और यमके समान विनाशकारी होता है। भस्म ही उसका अस्त्र है तथा रुद्र उसके देवता हैं। मन्दाग्नि उसका जनक है।

मन्दाग्निके जनक तीन हैं—वात, पित्त और कफ। ये ही प्राणियोंको दुःख देनेवाले हैं। वातज, पित्तज और कफज—ये ज्वरके तीन भेद हैं। एक चौथा ज्वर भी होता है, जिसे त्रिदोषज भी कहते हैं। पाण्डु, कामल, कुष्ठ, शोथ, प्लीहा, शूलक, ज्वर, अतिसार, संग्रहणी, खाँसी, व्रण (फोड़ा), हलीमक, मूत्रकृच्छ्र, रक्तविकार या रक्तदोषसे उत्पन्न होनेवाला गुल्म, विषमेह, कुब्ज, गोद, गलगंड (घेघा), भ्रमरी, सन्निपात, विसूचिका (हैजा) और दारुणी आदि अनेक रोग हैं। इन्हींके भेद और प्रभेदोंको लेकर चौंसठ रोग माने गये हैं। ये चौंसठ रोग मृत्युकन्याके पुत्र हैं और जरा उसकी पुत्री है। जरा अपने भाइयोंके साथ सदा भूतलपर भ्रमण किया करती है।

ये सब रोग उस मनुष्यके पास नहीं जाते, जो इनके निवारणका उपाय जानता है और संयमसे रहता है। उसे देखकर वे रोग उसी तरह भागते हैं, जैसे गरुड़को देखकर साँप। नेत्रोंको जलसे धोना, प्रतिदिन व्यायाम करना, पैरोंके तलवोंमें तेल मलवाना, दोनों कानोंमें तेल डालना और मस्तकपर भी तेल रखना—यह प्रयोग जरा और व्याधिका नाश करनेवाला है। जो वसंत-ऋतुमें भ्रमण, स्वल्पमात्रामें अग्निसेवन तथा नयी अवस्थावाली भार्याका यथासमय उपभोग करता है, उसके पास जरा-अवस्था नहीं जाती। ग्रीष्म-ऋतुमें जो तालाब या पोखरेके शीतल जलमें स्नान करता, घिसा हुआ चन्दन लगाता और वायुसेवन करता है, उसके निकट जरा-अवस्था नहीं जाती। वर्षा-ऋतुमें जो गरम जलसे नहाता है, वर्षाके जलका सेवन नहीं करता और ठीक समयपर परिमित भोजन करता है, उसे वृद्धावस्था नहीं प्राप्त होती। जो शरद्-ऋतुकी प्रचण्ड धूपका सेवन नहीं करता, उसमें घूमना-फिरना छोड़ देता है, कुएँ, बावड़ी या तालाबके जलमें नहाता है और परिमित भोजन करता है, उसके पास वृद्धावस्था नहीं फटकने पाती। जो हेमन्त-ऋतुमें प्रातःकाल अथवा पोखरे आदिके जलमें स्नान करता, यथासमय आग तापता, तुरंतकी तैयार की हुई गरम-गरम रसोई खाता है, उसके पास जरा-अवस्था नहीं जाती है। जो शिशिर-ऋतुमें गरम कपड़े, प्रज्वलित अग्नि और नये बने हुए गरम-गरम अन्नका सेवन करता है तथा गरम जलसे ही स्नान करता है, उसके समीप वृद्धावस्थाकी पहुँच नहीं होती।

जो तुरंतके बने हुए ताजे अन्नका, खीर और घृतका तथा समयानुसार तरुणी स्त्रीका उचित सेवन करता है, वृद्धावस्था उसके निकट नहीं जाती। जो भूख लगनेपर ही उत्तम अन्न खाता, प्यास लगनेपर ठंडा जल पीता और प्रतिदिन ताम्बूलका सेवन करता है, उसके पास वृद्धावस्था नहीं पहुँचती। जो प्रतिदिन दही, ताजा मक्खन और गुड़ खाता तथा संयमसे रहता है, उसके समीप जरावस्था नहीं जाती है।

जो मांस, वृद्धा स्त्री, नवोदित सूर्य तथा तरुण दधि (पाँच दिनके रखे हुए दही)-का सेवन करता है, उसपर जरावस्था अपने भाइयोंके साथ हर्षपूर्वक आक्रमण करती है। सुन्दरि! जो रातको दही खाते हैं, कुलटा एवं रजस्वला स्त्रीका सेवन करते हैं, उनके पास भाइयोंसहित जरावस्था बड़े हर्षके साथ आती है। रजस्वला, कुलटा, विधवा, जारदूती, शूद्रके पुरोहितकी पत्नी तथा ऋतुहीना जो स्त्रियाँ हैं, उनका अन्न भोजन करनेवाले लोगोंको बड़ा पाप लगता है। उस पापके साथ ही जरावस्था उनके पास आती है। रोगोंके साथ पापोंकी सदा अटूट मैत्री होती है। पाप ही रोग, वृद्धावस्था तथा नाना प्रकारके विघ्नोंका बीज है। पापसे रोग होता है, पापसे बुढ़ापा आता है और पापसे ही दैन्य, दुःख एवं भयंकर शोककी उत्पत्ति होती है। इसलिये भारतके संत पुरुष सदा भयातुर हो कभी पापका

आचरण नहीं करते*। क्योंकि वह महान् वैर उत्पन्न करनेवाला, दोषोंका बीज और अमङ्गलकारी होता है।

जो अपने धर्मके आचरणमें लगा हुआ है, भगवान्‌के मन्त्रकी दीक्षा ले चुका है, श्रीहरिकी समाराधनामें संलग्न है, गुरु, देवता और अतिथियोंका भक्त है, तपस्यामें आसक्त है, व्रत और उपवासमें लगा रहता है और सदा तीर्थसेवन करता है, उसे देखकर रोग उसी तरह भाग जाते हैं, जैसे गरुड़को देखकर साँप। ऐसे पुरुषोंके पास जरा-अवस्था नहीं जाती है और न दुर्जय रोगसमूह ही उसपर आक्रमण करते हैं।

पतिव्रते मालावति! वात, पित्त और कफ—ये तीन ज्वरके जनक हैं। ये जिस प्रकार देहधारियोंमें संचार करते और स्वयं जाते हैं, उसके विविध कारणों तथा उपायोंको मुझसे सुनो। जब भूखकी आग प्रज्वलित हो रही हो और उस समय आहार न मिले तो प्राणियोंके शरीरमें—मणिपूरक[1] चक्रमें पित्तका प्रकोप होता है। ताड़ और बेलका फल खाकर तत्काल जल पी लिया जाय तो वही सद्यः प्राणनाशक पित्त हो जाता है। जो दैवका मारा हुआ पुरुष शरद्-ऋतुमें गरम पानी पीता और भादोंमें तिक्त भोजन करता है, उसका पित्त बढ़ जाता है। धनिया पीसकर उसे शक्करके साथ ठंडे जलमें घोल दिया जाय तो उसको पीनेसे पित्तकी शान्ति होती है। चना सब प्रकारका, गव्य पदार्थ, तक्ररहित दही, पके हुए बेल और तालके फल, ईखके रससे बनी हुई सब वस्तुएँ, अदरख, मूँगकी दालका जूस तथा शर्करामिश्रित तिलका चूर्ण—ये सब पित्तका नाश करनेवाली ओषधियाँ हैं, जो तत्काल बल और पुष्टि प्रदान करती हैं पित्तका कारण और उसके नाशका उपाय बताया गया।

अब दूसरी बात मुझसे सुनो। भोजनके बाद तुरंत स्नान करना, बिना प्यासके जल पीना, सारे शरीरमें तिलका तेल मलना, स्निग्ध तैल तथा स्निग्ध आँवलेके द्रवका सेवन, बासी अन्नका भोजन, तक्रपान, केलेका पका हुआ फल, दही, वर्षाका जल, शक्करका शर्बत, अत्यन्त चिकनाईसे युक्त जलका सेवन, नारियलका जल, बासी पानीसे रूखा स्नान (बिना तेल लगाये नहाना), तरबूजके पके फल खाना, ककड़ीके अधिक पके हुए फलका सेवन करना, वर्षा-ऋतुमें तालाबमें नहाना और मूली खाना—इन सबसे कफकी वृद्धि होती है। वह कफ ब्रह्मरन्ध्रमें उत्पन्न होता है, जो महान् वीर्यनाशक माना गया है। गन्धर्वनन्दिनि! आग तापकर शरीरसे पसीना निकालना, भूजी भाँगका सेवन करना, पकाये हुए तेल-विशेषको काममें लाना, घूमना, सूखे पदार्थ खाना, सूखी पकी हर्रेका सेवन करना, कच्चा पिण्डारक[2] (पिण्डारा), कच्चा केला, बेसवार[3] (पीसा हुआ जीरा, मिर्च, लौंग आदि

---

* पापेन जायते व्याधिः पापेन जायते जरा। पापेन जायते दैन्यं दुःखं शोको भयंकरः॥
तस्मात् पापं महावैरं दोषबीजममङ्गलम्। भारते संततं सन्तो नाचरन्ति भयातुराः॥
(ब्रह्मखण्ड १६। ५१-५२)

१. तन्त्रके अनुसार छः चक्रोंमेंसे तीसरा चक्र, जिसकी स्थिति नाभिके पास मानी जाती है। यह तेजोमय और विद्युत्‌के समान आभावाला है। इसका रंग नीला है। इसमें दस दल होते हैं और उन अक्षरोंपर 'ड' से लेकर 'फ' तकके अक्षर अंकित हैं। वह चक्र शिवका निवासस्थान माना जाता है। उसपर ध्यान लगानेसे सब विषयोंका ज्ञान हो जाता है।

२. एक प्रकारका फल-शाक।

३. एक जड़ीका पौधा। भावप्रकाशके अनुसार यह पौधा हिमालयके शिखरोंपर होता है। इसका कन्द लहसुनके कन्दके समान और इसकी पत्तियाँ महीन सारहीन होती हैं। इसकी टहनियोंमें बारीक काँटे होते हैं और

मसाला), सिन्धुवार (सिन्दुवार या निर्गुंडी), अनाहार (उपवास), अपानक (पानी न पीना), घृतमिश्रित रोचना-चूर्ण, घी मिलाया हुआ सूखा शक्कर, काली मिर्च, पिप्पल, सूखा अदरक, जीवक (अष्टवर्गान्तर्गत औषधविशेष) तथा मधु—ये द्रव्य तत्काल कफको दूर करनेवाले तथा बल और पुष्टि देनेवाले हैं।

अब वातके प्रकोपका कारण सुनो। भोजनके बाद तुरंत पैदल यात्रा करना, दौड़ना, आग तापना, सदा घूमना और मैथुन करना, वृद्धा स्त्रीके साथ सहवास करना, मनमें निरन्तर संताप रहना, अत्यन्त रूखा खाना, उपवास करना, किसीके साथ जूझना, कलह करना, कटु वचन बोलना, भय और शोकसे अभिभूत होना—ये सब केवल वायुकी उत्पत्तिके कारण हैं। आज्ञा नामक चक्रमें वायुकी उत्पत्ति होती है। अब उसकी ओषधि सुनो। केलेका पका हुआ फल, बिजौरा नीबूके फलके साथ चीनीका शर्बत, नारियलका जल, तुरंतका तैयार किया हुआ तक्र, उत्तम पिट्ठी (पूआ, कचौरी आदि), भैंसका केवल मीठा दही या उसमें शक्कर मिला हो, तुरंतका बासी अन्न, सौवीर (जौकी काँजी), ठंडा पानी, पकाया हुआ तेलविशेष अथवा केवल तिलका तेल, नारियल, ताड़, खजूर, आँवलेका बना हुआ उष्ण द्रव पदार्थ, ठंडे और गरम जलका स्नान, सुस्निग्ध चन्दनका द्रव, चिकने कमलपत्रकी शय्या और स्निग्ध व्यञ्जन—वत्से! ये सब वस्तुएँ तत्काल ही वायुदोषका नाश करनेवाली हैं। मनुष्योंमें तीन प्रकारके वायु-दोष होते हैं। शारीरिक क्लेशजनित, मानसिक संतापजनित और कामजनित। मालावति! इस प्रकार मैंने तुम्हारे समक्ष रोगसमूहका वर्णन किया तथा उन रोगोंके नाशके लिये श्रेष्ठ विद्वानोंने जो नाना प्रकारके तन्त्र बनाये हैं, उनकी भी चर्चा की। वे सभी तन्त्र रोगोंका नाश करनेवाले हैं। उनमें रोगनिवारणके लिये रसायन आदि परम दुर्लभ उपाय बताये गये हैं। साध्वि! विद्वानोंद्वारा रचे गये उन सब तन्त्रोंका यथावत् वर्णन कोई एक वर्षमें भी नहीं कर सकता। शोभने! बताओ, तुम्हारे प्राणवल्लभकी मृत्यु किस रोगसे हुई है। मैं उसका उपाय करूँगा, जिससे ये जीवित हो जायँगे।

सौति कहते हैं—ब्राह्मणकी यह बात सुनकर गन्धर्वकुमारी चित्ररथ-पुत्री मालावतीने प्रसन्न होकर इस प्रकार कहना आरम्भ किया।

मालावती बोली—विप्रवर! सुनिये। सभामें लज्जित हुए मेरे प्रियतमने ब्रह्माजीके शापके कारण योगबलसे प्राणोंका परित्याग किया है। मैंने आपके मुँहसे निकले हुए अपूर्व, शुभ एवं मनोहर आख्यानको पूर्णरूपसे सुना है। इस संसारमें विपत्तिके बिना कब, किसको, कहाँ आप-जैसे महात्माओंका संग प्राप्त हुआ है? विद्वन्! अब मुझे मेरे प्राणनाथको जीवित करके दे दीजिये। मैं आप सब लोगोंके चरणोंमें नमस्कार करके स्वामीके साथ अपने घरको जाऊँगी।

मालावतीका यह वचन सुनकर ब्राह्मणरूप-धारी भगवान् विष्णु उसके पाससे उठकर शीघ्र ही देवताओंकी सभामें गये।

(अध्याय १६)

दूध निकलता है। यह अष्टवर्ग औषधके अन्तर्गत है और इसका कंद मधुर, बलकारक, कामोद्दीपक होता है। ऋषभ और जीवक दोनों एक ही जातिके गुल्म हैं, भेद केवल इतना ही है कि ऋषभकी आकृति बैलके सींगकी तरह होती है और जीवककी झाड़ूकी-सी।

ब्राह्मण-बालकके साथ क्रमशः ब्रह्मा, महादेवजी तथा धर्मकी बातचीत, देवताओंद्वारा श्रीविष्णुकी तथा ब्राह्मणद्वारा भगवान् श्रीकृष्णकी उत्कृष्ट महत्ताका प्रतिपादन

सौति कहते हैं—ब्राह्मणको आया देख देवसमुदाय उठकर खड़ा हो गया था। फिर वहाँ सभामें उन सबकी परस्पर बातचीत हुई। ये ब्राह्मणरूपधारी साक्षात् भगवान् विष्णु हैं, यह बात देवताओंकी समझमें नहीं आयी। भगवान् विष्णुकी मायासे मोहित होनेके कारण वे पूर्वापरकी सारी बातें भूल गये थे। शौनकजी! उस समय ब्राह्मणने सब देवताओंको सम्बोधित करके मधुर वाणीमें वह सत्य बात कही, जो प्राणियोंके लिये परम कल्याणकारक थी।

ब्राह्मण बोले—देवताओ! यह उपबर्हणकी भार्या और चित्ररथकी कन्या है। पतिशोकसे पीड़ित होकर इसने स्वामीके जीवनदानके लिये याचना की है। अब इस कार्यके लिये निश्चितरूपसे किस उपायका अवलम्बन करना चाहिये? सब देवता मिलकर मुझे वह उपाय बतायें, जो सदा काममें लाने योग्य और समयोचित हो। मालावती श्रेष्ठ सती एवं तेजस्विनी है। वह अपना मनोरथ सफल न होनेपर समस्त देवताओंको शाप देनेके लिये उद्यत है। अतः आप लोगोंके कल्याणके लिये मैं यहाँ आया हूँ और मैंने सतीको समझा-बुझाकर शान्त किया है। सुना है, आप लोगोंने श्वेतद्वीपमें श्रीहरिकी भी स्तुति की थी; परंतु आप लोगोंके वे स्वामी भगवान् विष्णु यहाँ आये कैसे नहीं? आकाशवाणी हुई थी कि तुम लोग चलो, पीछेसे भगवान् विष्णु भी जायँगे। आकाशवाणीकी बात तो अटल होती है; फिर वह विपरीत कैसे हो गयी?

ब्राह्मणकी यह बात सुनकर साक्षात् जगद्गुरु ब्रह्माने यह परम मङ्गलमय सत्य एवं हितकर बात कही।

ब्रह्माजी बोले—मेरे पुत्र नारद ही शापवश उपबर्हण नामक गन्धर्व हुए थे। फिर मेरे ही शापसे उन्होंने योगधारणाद्वारा प्राणोंको त्याग दिया। भूतलपर उपबर्हणकी स्थिति एक लाख युगतक नियत की गयी थी। इसके बाद वे शूद्रयोनिमें पहुँचकर उस शरीरको त्यागनेके बाद फिर मेरे पुत्रके रूपमें प्रतिष्ठित हो जायँगे। भूतलपर उनके रहनेका जो समय नियत था, उसका कुछ भाग अभी शेष है। उसके अनुसार इस समय इनकी आयु अभी एक सहस्र वर्षतक और बाकी है। मैं स्वयं भगवान् विष्णुकी कृपासे उपबर्हणको जीवन-दान दूँगा। जिससे इस देवसमुदायको शापका स्पर्श न हो, वह उपाय मैं अवश्य करूँगा। ब्रह्मन्! आपने जो यह कहा कि यहाँ भगवान् विष्णु क्यों नहीं आये, सो ठीक नहीं है; क्योंकि भगवान् विष्णु तो सर्वत्र विद्यमान हैं। वे ही सबके आत्मा हैं। आत्माका पृथक् शरीर कहाँ होता है? वे स्वेच्छामय परब्रह्म परमात्मा भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये ही दिव्य शरीर धारण करते हैं। वे सनातनदेव सर्वत्र हैं, सर्वज्ञ हैं और सबको देखते हैं। 'विष्' धातु व्याप्तिवाचक है और 'णु' का अर्थ सर्वत्र है। वे सर्वात्मा श्रीहरि सर्वत्र व्यापक हैं; इसलिये विष्णु कहे गये हैं। कोई अपवित्र हो या पवित्र अथवा किसी भी अवस्थामें क्यों न हो, जो कमलनयन भगवान् विष्णुका स्मरण करता है, वह बाहर-भीतरसहित पूर्णतः पवित्र हो जाता है*। ब्रह्मन्! कर्मके

---

*अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥ (ब्रह्मखण्ड १७। १७)

आरम्भ, मध्य और अन्तमें जो श्रीविष्णुका स्मरण करता है, उसका वैदिक कर्म साङ्गोपाङ्ग पूर्ण हो जाता है*। जगत्‌की सृष्टि करनेवाला मैं विधाता, संहारकारी हर तथा कर्मोंके साक्षी धर्म—ये सब जिनकी आज्ञाके परिपालक हैं, जिनके भय और आज्ञासे काल समस्त लोकोंका संहार करता है, यम पापियोंको दण्ड देता है और मृत्यु सबको अपने अधिकारमें कर लेती है। सर्वेश्वरी, सर्वाद्या और सर्वजननी प्रकृति भी जिनके सामने भयभीत रहती तथा जिनकी आज्ञाका पालन करती है। वे भगवान् विष्णु ही सबके आत्मा और सर्वेश्वर हैं।

महेश्वर बोले—ब्रह्मन्! ब्रह्माजीके जो सुप्रसिद्ध पुत्र हैं, उनमेंसे किसके वंशमें तुम्हारा जन्म हुआ है? वेदोंका अध्ययन करके तुमने कौन-सा सार तत्त्व जाना है? विप्रवर! तुम किस मुनीन्द्रके शिष्य हो? और तुम्हारा नाम क्या है? तुम अभी बालक हो तो भी सूर्यसे बढ़कर तेज धारण करते हो। तुम अपने तेजसे देवताओंको भी तिरस्कृत करते हो; परंतु सबके हृदयमें अन्तर्यामी आत्मारूपसे विराजमान हमारे स्वामी सर्वेश्वर परमात्मा विष्णुको नहीं जानते हो, यह आश्चर्यकी बात है। उन परमात्माके ही त्याग देनेपर देहधारियोंका यह शरीर गिर जाता है और सभी सूक्ष्म इन्द्रियवर्ग एवं प्राण उसके पीछे उसी तरह निकल जाते हैं, जैसे राजाके पीछे उसके सेवक जाते हैं। जीव उन्हींका प्रतिबिम्ब है। वह तथा मन, ज्ञान, चेतना, प्राण, इन्द्रियवर्ग, बुद्धि, मेधा, धृति, स्मृति, निद्रा, दया, तन्द्रा, क्षुधा, तृष्णा, पुष्टि, श्रद्धा, संतुष्टि, इच्छा, क्षमा और लज्जा आदि भाव उन्हींके अनुगामी माने गये हैं। वे परमात्मा जब जानेको उद्यत होते हैं, तब उनकी शक्ति आगे-आगे जाती है। उपर्युक्त सभी भाव तथा शक्ति उन्हीं परमात्माके आज्ञापालक हैं। देहमें जबतक ईश्वरकी स्थिति है, तभीतक देहधारी जीव सब प्रकारके कर्म करनेमें समर्थ होता है। उन ईश्वर (या उनके अंशभूत जीव)-के निकल जानेपर शरीर शव होकर अस्पृश्य एवं त्याज्य हो जाता है। ऐसे सर्वेश्वर शिवको कौन देहधारी नहीं मानता? सबकी सृष्टि करनेवाले साक्षात् जगत्-विधाता ब्रह्मा निरन्तर उन भगवान्‌के चरणारविन्दोंका चिन्तन करते हैं, परंतु उनका दर्शन नहीं कर पाते। ब्रह्माजीने श्रीकृष्णकी प्रसन्नताके लिये जब एक लाख युगोंतक तप किया, तब इन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ और ये संसारकी सृष्टि करनेमें समर्थ हुए। मैंने भी श्रीहरिकी आराधना करते हुए सुदीर्घ कालतक, जिसकी कोई गणना नहीं है, तप किया; परंतु मेरा मन नहीं भरा। भला, मङ्गलकी प्राप्तिसे कौन तृप्त होता है? अब मैं समस्त कर्मोंसे निःस्पृह हो अपने पाँच मुखोंसे उनके नाम और गुणोंका कीर्तन एवं गान करता हुआ सर्वत्र घूमता रहता हूँ। उनके नाम और गुणोंके कीर्तनका ही यह प्रभाव है कि मृत्यु मुझसे दूर भागती है। निरन्तर भगवन्नामका जप करनेवाले पुरुषको देखकर मृत्यु पलायन कर जाती है। चिरकालतक तपस्यापूर्वक उनके नाम और गुणोंका कीर्तन करनेसे ही मैं समस्त ब्रह्माण्डोंका संहार करनेमें समर्थ एवं मृत्युञ्जय हुआ हूँ। समय आनेपर मैं उन्हीं श्रीहरिमें लीन होता हूँ तथा पुनः उन्हींसे मेरा प्रादुर्भाव होता है। उन्हींकी कृपासे काल मेरा संहार नहीं कर सकता और मौत मुझे मार नहीं सकती। ब्रह्मन्! जो श्रीकृष्ण गोलोकधाममें निवास करते हैं, वे ही वैकुण्ठ और श्वेतद्वीपमें भी हैं। जैसे आग और उसकी चिनगारियोंमें कोई अन्तर नहीं है, उसी प्रकार अंशी और अंशमें भेद नहीं होता। इकहत्तर दिव्य युगोंका एक मन्वन्तर होता है। (प्रत्येक मन्वन्तरमें दो इन्द्र

* कर्मारम्भे च मध्ये वा शेषे विष्णुं च यः स्मरेत्। परिपूर्णं तस्य कर्म वैदिकं च भवेद् द्विज॥
(ब्रह्मखण्ड १७। १८)

व्यतीत होते हैं।) अट्ठाईसवें* इन्द्रके गत होनेपर ब्रह्माजीका एक दिन होता है। इसी संख्यासे विशिष्ट सौ वर्षकी आयुवाले ब्रह्माजीका जब पतन होता है, तब परमात्मा विष्णुके नेत्रकी एक पलक गिरती है। मैं परमात्मा श्रीकृष्णकी एक श्रेष्ठ कलामात्र हूँ। अतः उनकी महिमाका पार कौन पा सकता है? मैं तो कुछ भी नहीं जानता।

शौनक! ऐसा कहकर भगवान् शंकर वहाँ चुप हो गये। तब समस्त कर्मोंके साक्षी धर्मने अपना प्रवचन आरम्भ किया।

धर्म बोले—जिनके हाथ-पैर तथा सबको देखनेवाले नेत्र सर्वत्र विद्यमान हैं; जो सबके अन्तरात्मारूपसे प्रत्यक्ष हैं, तथापि दुरात्मा पुरुष जिन्हें नहीं देख या समझ पाते; उन सर्वव्यापी प्रभुके सब देश,काल और वस्तुओंमें विद्यमान होनेपर भी जो तुमने यह कहा कि 'अभीतक भगवान् विष्णु इस सभामें नहीं आये', ऐसा किस बुद्धिसे निश्चय किया? तुम्हारी बात सुनकर मुनियोंको भी मतिभ्रम हो सकता है। जहाँ महापुरुषकी निन्दा होती हो, वहाँ साधु पुरुष उस निन्दाको नहीं सुनते; क्योंकि निन्दक श्रोताओंके साथ ही कुम्भीपाक नरकमें जाता है और वहाँ एक युगतक कष्ट भोगता रहता है। यदि दैववश महापुरुषोंकी निन्दा सुनायी पड़ जाय तो विद्वान् पुरुष श्रीविष्णुका स्मरण करनेपर समस्त पापोंसे मुक्त होता और दुर्लभ पुण्य पाता है। जो इच्छा या अनिच्छासे भी भगवान् विष्णुकी निन्दा करता है तथा जो नराधम सभाके बीचमें बैठकर उस निन्दाको सुनता और हँसता है, वह ब्रह्माजीकी आयुपर्यन्त कुम्भीपाक नरकमें पकाया जाता है। जहाँ श्रीहरिकी निन्दा होती है, वह स्थान मदिरापात्रकी भाँति अपवित्र माना जाता है। वहाँ जाकर यदि भगवन्निन्दा सुनी गयी तो सुननेवाला प्राणी निश्चय ही नरकमें पड़ता है। ब्रह्माजीने पूर्वकालमें विष्णु-निन्दाके तीन भेद बताये थे। एक तो वह जो परोक्षमें निन्दा करता है, दूसरा वह जो श्रीहरिको मानता ही नहीं है तथा तीसरी कोटिका निन्दक वह ज्ञानहीन नराधम है, जो दूसरे देवताओंके साथ उनकी तुलना करता है। सौ ब्रह्माओंकी आयुपर्यन्त उस निन्दकका नरकसे उद्धार नहीं होता। जो नराधम गुरु एवं पिताकी निन्दा करता है, वह चन्द्रमा और सूर्यकी स्थितिपर्यन्त कालसूत्र नरकमें पड़ा रहता है। भगवान् विष्णु तीनों लोकोंमें सबके गुरु, पिता, ज्ञानदाता, पोषक, पालक, भयसे रक्षक तथा वरदाता हैं।

इन तीनोंकी बात सुनकर वे ब्राह्मणशिरोमणि हँसने लगे। फिर उन देवताओंसे मधुर वाणीमें बोले।

ब्राह्मणने कहा—हे धर्मशाली देवताओ! मैंने भगवान् विष्णुकी क्या निन्दा की है? श्रीहरि यहाँ नहीं आये इसलिये आकाशवाणीकी बात व्यर्थ हो गयी, यही तो मैंने कहा है। देवेश्वरो! धर्मके लिये सच बोलो। जो सभामें बैठकर पक्षपात करते हैं वे अपनी सौ पीढ़ियोंका नाश कर डालते हैं। आप लोग भावुक हैं, बताइये तो सही, यदि विष्णु सदा और सर्वत्र व्यापक हैं तो आप लोग उनसे वर माँगनेके लिये

* विष्णुपुराण प्रथम अंश अध्याय ३ के श्लोक १५ से १७ तक यह बात बतायी गयी है कि 'एक सहस्र चतुर्युग बीतनेपर ब्रह्माजीका एक दिन पूरा होता है। ब्रह्माजीके एक दिनमें चौदह मनु होते हैं। सप्तर्षि, देवगण, इन्द्र, मनु तथा मनुपुत्र—ये एक ही कालमें उत्पन्न होते हैं और एक ही कालमें उनका संहार होता है।' इससे सूचित होता है कि चौदहवें इन्द्रके बीतनेपर ब्रह्माका दिन पूरा होता है; परंतु यहाँ २८ वें इन्द्रके गत होनेपर ब्रह्माका एक दिन बताया गया है। इसकी संगति तभी लग सकती है, जब एक मन्वन्तरमें दो इन्द्रकी सृष्टि और संहार माने जायँ। परंतु ऐसा माननेपर अन्य पुराणोंसे एकवाक्यता नहीं होगी।

श्वेतद्वीपमें क्यों गये थे? अंश और अंशीमें भेद नहीं है तथा आत्मामें भी भेदका अभाव है, यदि यही आपका निश्चित मत है तो बताइये श्रेष्ठ पुरुष कला (अंश)-का त्याग करके पूर्णतम (अंशी)-की उपासना क्यों करते हैं? यद्यपि पूर्णतम भगवान् श्रीकृष्णकी कोटि जन्मोंतक आराधना करके भी उन्हें वशमें कर लेना अत्यन्त कठिन है और असाधु पुरुषोंके लिये तो वे सर्वथा असाध्य हैं, तथापि लोगोंकी बलवती आशा उन्हींकी सेवा करना चाहती है। क्या छोटे और क्या बड़े, सभी परम पदको पाना चाहते हैं। जैसे बावना अपने दोनों हाथोंसे चन्द्रमाको छूना चाहे, उसी तरह लोग उन पूर्णतम परमात्माको हस्तगत करना चाहते हैं। जो विष्णु हैं, वे एक विषय (देश)-में रहते हैं। विश्वके अन्तर्गत श्वेतद्वीपमें निवास करते हैं। आप, ब्रह्मा, महादेव, धर्म तथा दिशाओंके स्वामी दिक्पाल भी एक देशके निवासी हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवेश्वर, देवसमूह और चराचर प्राणी—ये सब भिन्न-भिन्न ब्रह्माण्डोंमें अनेक हैं। उन ब्रह्माण्डों और देवताओंकी गणना करनेमें कौन समर्थ है? उन सबके एकमात्र स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण हैं, जो भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये दिव्य विग्रह धारण करते हैं। जिसे सभी पाना चाहते हैं, वह सत्यलोक या नित्य वैकुण्ठधाम समस्त ब्रह्माण्डसे ऊपर है। उससे भी ऊपर गोलोक है, जिसका विस्तार पचास करोड़ योजन है। वैकुण्ठधाममें वे सनातन श्रीहरि चार भुजाधारी लक्ष्मीपतिके रूपमें निवास करते हैं। वहाँ सुनन्द, नन्द और कुमुद आदि पार्षद उन्हें घेरे रहते हैं। गोलोकमें वे सनातनदेव दो भुजाओंसे युक्त राधावल्लभ श्रीकृष्णरूपसे निवास करते हैं। वहाँ बहुत-सी गोपाङ्गनाएँ, गौएँ तथा द्विभुज गोप-पार्षद उनकी सेवामें उपस्थित रहते हैं। वे गोलोकाधिपति श्रीकृष्ण ही परिपूर्णतम ब्रह्म हैं। वे ही समस्त देहधारियोंके आत्मा हैं। वे सदा स्वेच्छामय रूप धारण करके दिव्य वृन्दावनके अन्तर्गत रासमण्डलमें विहार करते हैं। दिव्य तेजोमण्डल ही उनकी आकृति है। वे करोड़ों सूर्योंके समान कान्तिमान् हैं। योगी एवं संत-महात्मा सदा उन्हीं निरामय परमात्माका ध्यान करते हैं। नूतन जलधरके समान उनकी श्याम कान्ति है। दो भुजाएँ हैं। श्रीअङ्गोंपर दिव्य पीताम्बर शोभा पाता है। उनका लावण्य करोड़ों कन्दर्पोंसे भी अधिक है। वे लीलाधाम हैं। उनका रूप अत्यन्त मनोहर है। किशोर अवस्था है। वे नित्य शान्त-स्वरूप परमात्मा मुखसे मन्द-मन्द मुस्कानकी आभा बिखेरते रहते हैं। वैष्णव संत उन्हीं सत्यस्वरूप श्यामसुन्दरका सदा भजन और ध्यान करते हैं। आप लोग भी वैष्णव ही हैं और मुझसे पूछ रहे हैं कि 'तुम्हारा जन्म किसके वंशमें हुआ है? तथा तुम किस मुनीन्द्रके शिष्य हो?' ऐसा प्रश्न मुझसे बार-बार किया गया है। देवताओ! मैं जिसके वंशमें उत्पन्न हूँ और जिसका बालक—शिष्य हूँ, उन्हींका यह ज्ञानमय वचन है। तुम लोग इसे सुनो और समझो। देवेश्वर सुरेश! गन्धर्वको शीघ्र जीवित करो। विचार व्यक्त करनेपर स्वतः ज्ञात हो जाता है कि कौन मूर्ख है और कौन विद्वान्? अतः यहाँ वाग्युद्धका क्या प्रयोजन है?

शौनक! ऐसा कहकर वे ब्राह्मणरूपधारी भगवान् विष्णु चुप हो गये और जोर-जोरसे हँसने लगे। (अध्याय १७)

ब्रह्मा आदि देवताओंद्वारा उपबर्हणको जीवित करनेकी चेष्टा, मालावतीद्वारा भगवान् श्रीकृष्णका स्तवन, शक्तिसहित भगवान्‌का गन्धर्वके शरीरमें प्रवेश तथा गन्धर्वका जी उठना, मालावतीद्वारा दान एवं मङ्गलाचार तथा पूर्वोक्त स्तोत्रके पाठकी महिमा

सौति कहते हैं—भगवान् विष्णुकी मायासे मोहित हुए ब्रह्मा और शिव आदि देवता ब्राह्मणके साथ मालावतीके निकट गये। ब्रह्माजीने शवके शरीरपर कमण्डलुका जल छिड़क दिया और उसमें मनका संचार करके उसके शरीरको सुन्दर बना दिया। फिर ज्ञानानन्दस्वरूप साक्षात् शिवने उसे ज्ञान प्रदान किया। स्वयं धर्मने धर्म-ज्ञान और ब्राह्मणने जीव-दान दिया। अग्निकी दृष्टि पड़ते ही गन्धर्वके शरीरमें जठरानलका प्राकट्य हो गया। फिर कामकी दृष्टि पड़नेसे वह सम्पूर्ण कामनाओंसे सम्पन्न हो गया। जगत्‌के प्राणस्वरूप वायुका अधिष्ठान होनेसे उस शरीरके भीतर निःश्वास और प्राणोंका संचार होने लगा। फिर सूर्यके अधिष्ठित होनेसे गन्धर्वके नेत्रोंमें देखनेकी शक्ति आ गयी। वाणीकी दृष्टि पड़नेसे वाक्शक्ति और श्रीके दृष्टिपातसे शोभा प्रकट हुई। इतनेपर भी वह शव नहीं उठा। जडकी भाँति सोता ही रहा। आत्माका अधिष्ठान प्राप्त न होनेसे उसे विशिष्ट बोधकी प्राप्ति नहीं हुई। तब ब्रह्माजीके कहनेसे मालावतीने शीघ्र ही नदीके जलमें स्नान किया और दो धुले वस्त्र धारण करके उस सतीने परमेश्वरकी स्तुति प्रारम्भ की।

मालावती बोली—मैं समस्त कारणोंके भी कारणरूप उन परमात्माकी वन्दना करती हूँ, जिनके बिना भूतलके सभी प्राणी शवके समान हैं। वे निर्लिप्त हैं। सबके साक्षी हैं। समस्त कर्मोंमें सर्वत्र और सर्वदा विद्यमान हैं तो भी सबकी दृष्टि (जानकारी)-में नहीं आते हैं। जिन्होंने सबकी आधारभूता उस परात्परा प्रकृतिकी सृष्टि की है; जो ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदिकी भी जननी तथा त्रिगुणमयी है; साक्षात् जगत्स्रष्टा ब्रह्मा जिनकी सेवामें नियमित रूपसे लगे रहते हैं; पालक विष्णु और साक्षात् जगत्संहारक शिव भी जिनकी सेवामें निरन्तर तत्पर रहते हैं; सब देवता, मुनि, मनु, सिद्ध, योगी और संत-महात्मा सदा प्रकृतिसे परे विद्यमान जिन परमेश्वरका ध्यान करते हैं; जो साकार और निराकार भी हैं; स्वेच्छामय रूपधारी और सर्वव्यापी हैं। वर, वरेण्य, वरदायक, वर देनेके योग्य और वरदानके कारण हैं, तपस्याके फल, बीज और फलदाता हैं; स्वयं तपःस्वरूप तथा सर्वरूप हैं; सबके आधार, सबके कारण, सम्पूर्ण कर्म, उन कर्मोंके फल और उन फलोंके दाता हैं तथा जो कर्मबीजका नाश करनेवाले हैं, उन परमेश्वरको मैं प्रणाम करती हूँ। वे स्वयं तेजःस्वरूप होते हुए भी भक्तोंपर अनुग्रहके लिये ही दिव्य विग्रह धारण करते हैं; क्योंकि विग्रहके बिना भक्तजन किसकी सेवा और किसका ध्यान करेंगे। विग्रहके अभावमें भक्तोंसे सेवा और ध्यान बन ही नहीं सकते। तेजका महान् मण्डल ही उनकी आकृति है। वे करोड़ों सूर्योंके समान दीप्तिमान् हैं। उनका रूप अत्यन्त कमनीय और मनोहर है। नूतन मेघकी-सी श्याम कान्ति, शरद्-ऋतुके प्रफुल्ल कमलोंके समान नेत्र, शरत्पूर्णिमाके चन्द्रमाकी भाँति मन्द मुस्कानकी छटासे सुशोभित मुख और करोड़ों कन्दर्पोंको भी तिरस्कृत करनेवाला लावण्य उनकी सहज विशेषताएँ हैं। वे मनोहर लीलाधाम हैं। उनके सम्पूर्ण अङ्ग चन्दनसे चर्चित तथा रत्नमय आभूषणोंसे विभूषित हैं। दो बड़ी-बड़ी भुजाएँ हैं, हाथमें मुरली है, श्रीअङ्गोंपर रेशमी पीताम्बर शोभा पाता है, किशोर अवस्था है। वे शान्तस्वरूप राधाकान्त अनन्त आनन्दसे परिपूर्ण हैं। कभी निर्जन वनमें गोपाङ्गनाओंसे घिरे रहते हैं। कभी रासमण्डलमें विराजमान हो राधा-

रानीसे समाराधित होते हैं। कभी गोप-बालकोंसे घिरे हुए गोपवेषसे सुशोभित होते हैं। कभी सैकड़ों शिखरवाले गिरिराज गोवर्धनके कारण उत्कृष्ट शोभासे युक्त रमणीय वृन्दावनमें कामधेनुओंके समुदायको चराते हुए बालगोपालके रूपमें देखे जाते हैं। कभी गोलोकमें विरजाके तटपर पारिजातवनमें मधुर-मधुर वेणु बजाकर गोपाङ्गनाओंको मोहित किया करते हैं। कभी निरामय वैकुण्ठधाममें चतुर्भुज लक्ष्मीकान्तके रूपमें रहकर चार भुजाधारी पार्षदोंसे सेवित होते हैं। कभी तीनों लोकोंके पालनके लिये अपने अंशरूपसे श्वेतद्वीपमें विष्णुरूप धारण करके रहते हैं और पद्मा उनकी सेवा करती हैं। कभी किसी ब्रह्माण्डमें अपनी अंशकलाद्वारा ब्रह्मारूपसे विराजमान होते हैं। कभी अपने ही अंशसे कल्याणदायक मङ्गलरूप शिव-विग्रह धारण करके शिवधाममें निवास करते हैं। अपने सोलहवें अंशसे स्वयं ही सर्वाधार, परात्पर एवं महान् विराट्-रूप धारण करते हैं, जिनके रोम-रोममें अनन्त ब्रह्माण्डोंका समुदाय शोभा पाता है। कभी अपनी ही अंशकलाद्वारा जगत्की रक्षाके लिये लीलापूर्वक नाना प्रकारके अवतार धारण करते हैं। उन अवतारोंके वे स्वयं ही सनातन बीज हैं। कभी योगियों एवं संत-महात्माओंके हृदयमें निवास करते हैं। वे ही प्राणियोंके प्राणस्वरूप परमात्मा एवं परमेश्वर हैं। मैं मूढ़ अबला उन निर्गुण एवं सर्वव्यापी भगवान्की स्तुति करनेमें सर्वथा असमर्थ हूँ। वे अलक्ष्य, अनीह, सारभूत तथा मन और वाणीसे परे हैं। भगवान् अनन्त सहस्र मुखोंद्वारा भी उनकी स्तुति नहीं कर सकते। पञ्चमुख महादेव, चतुर्मुख ब्रह्मा, गजानन गणेश और षडानन कार्तिकेय भी जिनकी स्तुति करनेमें समर्थ नहीं हैं, माया भी जिनकी मायासे मोहित रहती है, लक्ष्मी भी जिनकी स्तुति करनेमें सफल नहीं होती, सरस्वती भी जडवत् हो जाती है और वेद भी जिनका स्तवन करनेमें अपनी शक्ति खो बैठते हैं, उन परमात्माका स्तवन दूसरा कौन विद्वान् कर सकता है? मैं शोकातुर अबला उन निरीह परात्पर परमेश्वरकी स्तुति क्या कर सकती हूँ।*

---

*मालावत्युवाच

वन्दे तं परमात्मानं सर्वकारणकारणम् । विना येन शवाः सर्वे प्राणिनो जगतीतले॥
निर्लिप्तं साक्षिरूपं च सर्वेषां सर्वकर्मसु । विद्यमानं न दृष्टं च सर्वैः सर्वत्र सर्वदा॥
येन सृष्टा च प्रकृतिः सर्वाधारा परात्परा । ब्रह्मविष्णुशिवादीनां प्रसूर्या त्रिगुणात्मिका॥
जगत्स्रष्टा स्वयं ब्रह्मा नियतो यस्य सेवया । पाता विष्णुश्च जगतां संहर्त्ता शंकरः स्वयम्॥
ध्यायन्ते यं सुराः सर्वे मुनयो मनवस्तथा । सिद्धाश्च योगिनः सन्तः सन्ततं प्रकृतेः परम्॥
साकारं च निराकारं परं स्वेच्छामयं विभुम् । वरं वरेण्यं वरदं वराहं वरकारणम्।
तपःफलं तपोबीजं तपसां च फलप्रदम् । स्वयं तपःस्वरूपं च सर्वरूपं च सर्वतः॥
सर्वाधारं सर्वबीजं कर्म तत्कर्मणां फलम् । तेषां च फलदातारं तद्बीजक्षयकारणम्॥
स्वयं तेजःस्वरूपं च भक्तानुग्रहविग्रहम् । सेवाध्यानं न घटते भक्तानां विग्रहं विना॥
तत्तेजो मण्डलाकारं सूर्यकोटिसमप्रभम् । अतीव कमनीयं च रूपं तत्र मनोहरम्॥
नवीननीरदश्यामं शरत्पङ्कजलोचनम् । शरत्पार्वणचन्द्रास्यमीषद्धास्यसमन्वितम् ॥
कोटिकन्दर्पलावण्यं लीलाधाम मनोहरम् । चन्दनोक्षितसर्वाङ्गं रत्नभूषणभूषितम्॥
द्विभुजं मुरलीहस्तं पीतकौशेयवाससम् । किशोरवयसं शान्तं राधाकान्तमनन्तकम्॥
गोपाङ्गनापरिवृतं कुत्रचिन्निर्जने वने । कुत्रचिद्रासमध्यस्थं राधया परिसेवितम्॥
कुत्रचिद् गोपवेशं च वेष्टितं गोपबालकैः । शतशृङ्गाचलोत्कृष्टे रम्ये वृन्दावने वने॥
निकरं कामधेनूनां रक्षन्तं शिशुरूपिणम् । गोलोके विरजातीरे पारिजातवने वने॥
वेणुं क्वणन्तं मधुरं गोपीसम्मोहकारणम् । निरामये च वैकुण्ठे कुत्रचिच्च चतुर्भुजम्॥

ऐसा कहकर गन्धर्व-कुमारी मालावती चुप हो गयी और फूट-फूटकर रोने लगी। भयसे पीड़ित हुई उस सतीने कृपानिधान भगवान् श्रीकृष्णको बारंबार प्रणाम किया। तब निराकार परमात्मा भगवान् श्रीकृष्ण अपनी शक्तियोंके साथ मालावतीके पति—गन्धर्व उपबर्हणके शरीरमें अधिष्ठित हुए। उनका आवेश होते ही गन्धर्व वीणा लिये उठ बैठा और शीघ्र ही स्नानके पश्चात् दो नवीन वस्त्र धारण करके उसने देव-समूहको तथा सामने खड़े हुए उन ब्राह्मणदेवताको प्रणाम किया। फिर तो देवता दुन्दुभि बजाने और फूलोंकी वर्षा करने लगे। उन गन्धर्व-दम्पतिपर दृष्टिपात करके उन

सबने उत्तम आशीर्वाद दिये। गन्धर्वने एक क्षणतक देवताओंके सामने नृत्य और गान किया। देवताओंके वरसे नया जीवन पाकर गन्धर्व उपबर्हण अपनी पत्नीके साथ पुनः गन्धर्व-नगरमें चला गया। सती मालावतीने ब्राह्मणोंको करोड़ों रत्न और नाना प्रकारके धन दिये तथा उन सबको भोजन कराया। उनसे वेदपाठ और मङ्गलकृत्य करवाये। भाँति-भाँतिके बड़े-बड़े उत्सव रचाये। उन सबमें एकमात्र हरिनामकीर्तनरूप मङ्गलकृत्यकी प्रधानता रही। देवता अपने-अपने स्थानको चले गये और ब्राह्मण-रूपधारी साक्षात् श्रीहरि भी अपने धामको पधारे। शौनक! यह सब प्रसंग मैंने तुम्हें कह सुनाया। साथ ही स्तवराजका भी वर्णन किया। जो वैष्णव पुरुष पूजाकालमें इस पुण्यमय स्तोत्रका पाठ करता है, वह श्रीहरिकी भक्ति एवं उनके दास्यका सौभाग्य पा लेता है। जो आस्तिक पुरुष वर-प्राप्तिकी कामना रखकर उत्तम आस्था और भक्तिभावसे इस स्तोत्रको पढ़ता है, वह धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष-सम्बन्धी फलको निश्चय ही पाता है। इस स्तोत्रके पाठसे विद्यार्थीको विद्याका, धनार्थीको धनका, भार्याकी इच्छावालेको भार्याका और पुत्रकी कामनावालेको पुत्रका लाभ होता है। धर्म चाहनेवाला धर्म और यशकी इच्छावाला यश पाता है। जिसका राज्य छिन गया है, वह राज्य और जिसकी संतान नष्ट हो गयी है, वह संतान पाता है। रोगी रोगसे और कैदी बन्धनसे मुक्त हो

लक्ष्मीकान्तं पार्षदैश्च सेवितं च चतुर्भुजैः।
श्वेतद्वीपे विष्णुरूपं पद्मया परिसेवितम्।
शिवस्वरूपं शिवदं स्वांशेन शिवरूपिणम्।
स्वयं महद्विराड्रूपं विश्वौघं यस्य लोमसु।
नानावतारं बिभ्रन्तं बीजं तेषां सनातनम्।
प्राणरूपं प्राणिनां च परमात्मानमीश्वरम्।
निर्लक्ष्यं च निरीहं च सारं वाङ्मनसोः परम्।
पञ्चवक्त्रश्चतुर्वक्त्रो गजवक्त्रः षडाननः।
यं स्तोतुं न क्षमा श्रीश्च जडीभूता सरस्वती।
किं स्तौमि तमनीहं च शोकार्ता स्त्री परात्परम्।
कुत्रचित् स्वांशरूपेण जगतां पालनाय च॥
कुत्रचित् स्वांशकलया ब्रह्माण्डे ब्रह्मरूपिणम्॥
स्वात्मनः षोडशांशेन सर्वाधारं परात्परम्॥
लीलया स्वांशकलया जगतां पालनाय च॥
वसन्तं कुत्रचित् सन्तं योगिनां हृदये सताम्॥
तं च स्तोतुमशक्ताहमबला निर्गुणं विभुम्॥
यं स्तोतुमक्षमोऽनन्तः सहस्रवदनेन च॥
यं स्तोतुं न क्षमा माया मोहिता यस्य मायया॥
वेदा न शक्ता यं स्तोतुं को वा विद्वांश्च वेदवित्॥
(ब्रह्मखण्ड १८। ९—३४$\frac{१}{२}$)

जाता है। भयभीत पुरुष भयसे छुटकारा पा जाता है। जिसका धन नष्ट हो गया है, उसे धनकी प्राप्ति होती है। जो विशाल वनमें डाकुओं अथवा हिंसक जन्तुओंसे घिर गया है, दावानलसे दग्ध होनेकी स्थितिमें आ गया है अथवा जलके समुद्रमें डूब रहा है, वह भी इस स्तोत्रका पाठ करके विपत्तिसे छुटकारा पा जाता है।

(अध्याय १८)

ब्रह्माण्डपावन नामक कृष्णकवच, संसारपावन नामक शिवकवच और शिवस्तवराजका वर्णन तथा इन सबकी महिमा

सौति कहते हैं—मालावती ब्राह्मणोंको धन देकर बहुत प्रसन्न हुई। उसने स्वामीकी सेवाके लिये नाना प्रकारसे अपना शृङ्गार किया। वह प्रतिदिन पतिकी सेवा-शुश्रूषा और समयोचित पूजा करने लगी। उत्तम व्रतका पालन करनेवाली उस पतिव्रताने स्वयं एकान्तमें पतिको भूले हुए महापुरुषके स्तोत्र, पूजन, कवच और मन्त्रका बोध कराया। पूर्वकालमें वसिष्ठजीने पुष्करतीर्थमें गन्धर्व और मालावतीको इस श्रीहरिके स्तोत्र, पूजन आदिका तथा एक मन्त्रका उपदेश दिया

था। इसी तरह शंकरजीका स्तोत्र और कवच भी गन्धर्वको भूल गया था। कृपानिधान वसिष्ठने एकान्तमें गन्धर्वराजको उसका भी बोध कराया। इस प्रकार बोधसम्पन्न हो परमानन्दमय गन्धर्वने अपने कुबेरभवनसदृश आश्रममें रहकर बन्धु-बान्धवोंके साथ राज्य किया। उपबर्हणकी अन्य स्त्रियाँ भी जैसे-तैसे वहाँ आयीं और आकर उन्होंने बड़े आनन्दके साथ पुनः अपने स्वामीको प्राप्त किया।

शौनकने पूछा—सूतनन्दन! पूर्वकालमें वसिष्ठजीने उन दोनों दम्पतिको भगवान् विष्णुके किस स्तोत्र, कवच, मन्त्र और पूजा-विधिका उपदेश किया था—यह आप बतानेकी कृपा करें। पूर्वकालमें वसिष्ठजीने गन्धर्वराजको भगवान् शिवके जिस द्वादशाक्षर-मन्त्र और कवच आदिका उपदेश दिया था, वह भी मुझे बताइये। यह सब सुननेके लिये मेरे मनमें बड़ा कौतूहल है; क्योंकि शंकरका स्तोत्र, कवच और मन्त्र दुर्गतिका नाश करनेवाला है।

सौति बोले—शौनकजी! मालतीने जिस स्तोत्रके द्वारा परमेश्वर श्रीकृष्णका स्तवन किया था, वही स्तोत्र वसिष्ठजीने उन गन्धर्व-दम्पतिको दिया था। अब उनके दिये हुए मन्त्र और कवचका वर्णन सुनिये।

'ॐ नमो भगवते रासमण्डलेशाय स्वाहा'

—यह षोडशाक्षर-मन्त्र उपासकोंके लिये कल्पवृक्ष-स्वरूप है। इसीका उपदेश वसिष्ठजीने दिया था। पूर्वकालमें श्रीहरिके पुष्करधाममें ब्रह्माजीने कुमारको यह मन्त्र दिया था तथा श्रीकृष्णने गोलोकमें भगवान् शंकरको इसका ज्ञान

प्रदान किया था। यहाँ भगवान् विष्णुके वेदवर्णित स्वरूपका ध्यान किया जाता है, जो सनातन एवं सबके लिये परम दुर्लभ है। पूर्वोक्त मूल मन्त्रसे उत्तम नैवेद्य आदि सभी उपचार समर्पित करने चाहिये। भगवान्‌का जो कवच है, वह अत्यन्त गुप्त है। उसे मैंने अपने पिताजीके मुखसे सुना था। विप्रवर! पूर्वकालमें त्रिशूलधारी भगवान् शंकरने ही पिताजीको गङ्गाके तटपर इसका उपदेश दिया था। भगवान् शंकरको, ब्रह्माजीको तथा धर्मको गोलोकके रासमण्डलमें गोपीवल्लभ श्रीकृष्णने कृपापूर्वक यह परम अद्भुत कवच प्रदान किया था।

ब्रह्मोवाच

राधाकान्त महाभाग कवचं यत् प्रकाशितम्।
ब्रह्माण्डपावनं नाम कृपया कथय प्रभो॥ १७॥
मां महेशं च धर्मं च भक्तं च भक्तवत्सल।
त्वत्प्रसादेन पुत्रेभ्यो दास्यामि भक्तिसंयुतः॥ १८॥

ब्रह्माजी बोले—महाभाग! राधावल्लभ! प्रभो! ब्रह्माण्डपावन नामक जो कवच आपने प्रकाशित किया है, उसका उपदेश कृपापूर्वक मुझको, महादेवजीको तथा धर्मको दीजिये। भक्तवत्सल! हम तीनों आपके भक्त हैं। आपकी कृपासे मैं अपने पुत्रोंको भक्तिपूर्वक इसका उपदेश दूँगा।

श्रीकृष्ण उवाच

शृणु वक्ष्यामि ब्रह्मेश धर्मेदं कवचं परम्।
अहं दास्यामि युष्मभ्यं गोपनीयं सुदुर्लभम्॥ १९॥
यस्मै कस्मै न दातव्यं प्राणतुल्यं ममैव हि।
यत्तेजो मम देहेऽस्ति तत्तेजः कवचेऽपि च॥ २०॥

श्रीकृष्णने कहा—ब्रह्मन्! महेश्वर! और धर्म! तुम लोग सुनो! मैं इस उत्तम कवचका वर्णन कर रहा हूँ। यद्यपि यह परम दुर्लभ और गोपनीय है तथापि तुम्हें इसका उपदेश दूँगा। परंतु ध्यान रहे, जिस-किसीको भी इसका उपदेश नहीं देना चाहिये; क्योंकि यह मेरे लिये प्राणोंके समान है। जो तेज मेरे शरीरमें है, वही इस कवचमें भी है।

कुरु सृष्टिमिमं धृत्वा धाता त्रिजगतां भव।
संहर्त्ता भव हे शम्भो मम तुल्यो भवे भव॥ २१॥
हे धर्म त्वमिमं धृत्वा भव साक्षी च कर्मणाम्।
तपसां फलदाता च यूयं भवत मद्वरात्॥ २२॥

ब्रह्मन्! तुम इस कवचको धारण करके सृष्टि करो और तीनों लोकोंके विधाताके पदपर प्रतिष्ठित रहो। शम्भो! तुम भी इस कवचको ग्रहण करके संहारका कार्य सम्पन्न करो और संसारमें मेरे समान शक्तिशाली हो जाओ। धर्म! तुम इस कवचको धारण करके कर्मोंके साक्षी बने रहो। तुम सब लोग मेरे वरसे तपस्याके फलदाता हो जाओ।

ब्रह्माण्डपावनस्यास्य कवचस्य हरिः स्वयम्।
ऋषिश्छन्दश्च गायत्री देवोऽहं जगदीश्वरः॥ २३॥
धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः।
त्रिलक्षवारपठनात् सिद्धिदं कवचं विधे॥ २४॥

इस ब्रह्माण्डपावन कवचके स्वयं श्रीहरि ऋषि हैं, गायत्री छन्द हैं, मैं जगदीश्वर श्रीकृष्ण ही देवता हूँ तथा धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी सिद्धिके लिये इसका विनियोग* कहा गया है। विधे! तीन लाख बार पाठ करनेपर यह कवच सिद्धिदायक होता है।

यो भवेत् सिद्धकवचो मम तुल्यो भवेत्तु सः।
तेजसा सिद्धियोगेन ज्ञानेन विक्रमेण च॥ २५॥
प्रणवो मे शिरः पातु नमो रासेश्वराय च।
भालं पायान्नेत्रयुग्मं नमो राधेश्वराय च॥ २६॥
कृष्णः पायाच्छ्रोत्रयुग्मं हे हरे घ्राणमेव च।
जिह्विकां वह्निजाया तु कृष्णायेति च सर्वतः॥ २७॥

---

* इस कवचका विनियोगवाक्य संस्कृतमें इस प्रकार है—
ॐ अस्य श्रीब्रह्माण्डपावनकवचस्य साक्षात् श्रीहरिः ऋषिः, गायत्री छन्दः, स एव जगदीश्वरः श्रीकृष्णो देवता धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः।

श्रीकृष्णाय स्वाहेति च कण्ठं पातु षडक्षरः।
ह्रीं कृष्णाय नमो वक्त्रं क्लीं पूर्वश्च भुजद्वयम्॥ २८॥
नमो गोपाङ्गनेशाय स्कन्धावष्टाक्षरोऽवतु।
दन्तपंक्तिमोष्ठयुग्मं नमो गोपीश्वराय च॥ २९॥
ॐ नमो भगवते रासमण्डलेशाय स्वाहा।
स्वयं वक्षःस्थलं पातु मन्त्रोऽयं षोडशाक्षरः॥ ३०॥
ऐं कृष्णाय स्वाहेति च कर्णयुग्मं सदाऽवतु।
ॐ विष्णवे स्वाहेति च कङ्कालं सर्वतोऽवतु॥ ३१॥
ॐ हरये नम इति पृष्ठं पादं सदाऽवतु।
ॐ गोवर्द्धनधारिणे स्वाहा सर्वशरीरकम्॥ ३२॥
प्राच्यां मां पातु श्रीकृष्ण आग्नेय्यां पातु माधवः।
दक्षिणे पातु गोपीशो नैर्ऋत्यां नन्दनन्दनः॥ ३३॥
वारुण्यां पातु गोविन्दो वायव्यां राधिकेश्वरः।
उत्तरे पातु रासेश ऐशान्यामच्युतः स्वयम्॥ ३४॥
सन्ततं सर्वतः पातु परो नारायणः स्वयम्।
इति ते कथितं ब्रह्मन् कवचं परमाद्भुतम्॥ ३५॥
मम जीवनतुल्यं च युष्मभ्यं दत्तमेव च।

जो इस कवचको सिद्ध कर लेता है, वह तेज, सिद्धियोंके योग, ज्ञान और बल-पराक्रममें मेरे समान हो जाता है।

प्रणव (ओंकार) मेरे मस्तककी रक्षा करे, 'नमो रासेश्वराय' (रासेश्वरको नमस्कार है) यह मन्त्र मेरे ललाटका पालन करे। 'नमो राधेश्वराय' (राधापतिको नमस्कार है) यह मन्त्र दोनों नेत्रोंकी रक्षा करे। 'कृष्ण' दोनों कानोंका पालन करें। 'हे हरे' यह नासिकाकी रक्षा करे। 'स्वाहा' मन्त्र जिह्वाको कष्टसे बचावे। 'कृष्णाय स्वाहा' यह मन्त्र सब ओरसे हमारी रक्षा करे। 'श्रीकृष्णाय स्वाहा' यह षडक्षर-मन्त्र कण्ठको कष्टसे बचावे। 'ह्रीं कृष्णाय नमः' यह मन्त्र मुखकी तथा 'क्लीं कृष्णाय नमः' यह मन्त्र दोनों भुजाओंकी रक्षा करे। 'नमो गोपाङ्गनेशाय' (गोपाङ्गनावल्लभ श्रीकृष्णको नमस्कार है) यह अष्टाक्षर-मन्त्र दोनों कंधोंका पालन करे। 'नमो गोपीश्वराय' (गोपीश्वरको नमस्कार है) यह मन्त्र दन्तपंक्ति तथा ओष्ठयुगलकी रक्षा करे। 'ॐ नमो भगवते रासमण्डलेशाय स्वाहा' (रासमण्डलके स्वामी सच्चिदानन्दस्वरूप भगवान् श्रीकृष्णको नमस्कार है। उनकी प्रसन्नताके लिये मैं अपने सर्वस्वकी आहुति देता हूँ—त्याग करता हूँ) यह षोडशाक्षर-मन्त्र मेरे वक्षःस्थलकी रक्षा करे। 'ऐं कृष्णाय स्वाहा' यह मन्त्र सदा मेरे दोनों कानोंको कष्टसे बचावे। 'ॐ विष्णवे स्वाहा' यह मन्त्र मेरे कङ्काल (अस्थिपञ्जर)-की सब ओरसे रक्षा करे। 'ॐ हरये नमः' यह मन्त्र सदा मेरे पृष्ठभाग और पैरोंका पालन करे। 'ॐ गोवर्द्धनधारिणे स्वाहा' यह मन्त्र मेरे सम्पूर्ण शरीरकी रक्षा करे। पूर्व दिशामें श्रीकृष्ण, अग्निकोणमें माधव, दक्षिण दिशामें गोपीश्वर तथा नैर्ऋत्यकोणमें नन्दनन्दन मेरी रक्षा करें। पश्चिम दिशामें गोविन्द, वायव्यकोणमें राधिकेश्वर, उत्तर दिशामें रासेश्वर और ईशानकोणमें स्वयं अच्युत मेरा संरक्षण करें तथा परमपुरुष साक्षात् नारायण सदा सब ओरसे मेरा पालन करें। ब्रह्मन्! इस प्रकार इस परम अद्भुत कवचका मैंने तुम्हारे सामने वर्णन किया। यह मेरे जीवनके तुल्य है। यह मैंने तुम लोगोंको अर्पित किया।

अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च।
कलां नार्हन्ति तान्येव कवचस्यैव धारणात्॥ ३६॥
गुरुमभ्यर्च्य विधिवद्वस्त्रालङ्कारचन्दनैः।
स्नात्वा तं च नमस्कृत्य कवचं धारयेत् सुधीः॥ ३७॥
कवचस्य प्रसादेन जीवन्मुक्तो भवेन्नरः।
यदि स्यात् सिद्धकवचो विष्णुरेव भवेद् द्विज॥ ३८॥

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते महापुराणे ब्रह्मखण्डे महापुरुषब्रह्माण्डपावनं नाम श्रीकृष्णकवचं सम्पूर्णम्।

इस कवचको धारण करनेसे जो पुण्य होता है, सहस्रों अश्वमेध और सैकड़ों वाजपेय-यज्ञ उसकी सोलहवीं कलाके भी बराबर नहीं हो सकते। विद्वान् पुरुषको चाहिये कि स्नान करके वस्त्र-अलङ्कार और चन्दनद्वारा विधिवत् गुरुकी पूजा और वन्दना करनेके पश्चात् कवच धारण

करे। इस कवचके प्रसादसे मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है। शौनकजी! यदि किसीने इस कवचको सिद्ध कर लिया तो वह विष्णुरूप ही हो जाता है।

इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्त महापुराणके ब्रह्मखण्डमें महापुरुषब्रह्माण्डपावन नामक श्रीकृष्णकवच पूरा हुआ।

सौति कहते हैं—शौनक! अब शिवका कवच और स्तोत्र सुनिये, जिसे वसिष्ठजीने गन्धर्वको दिया था। शिवका जो द्वादशाक्षर-मन्त्र है, वह इस प्रकार है, '**ॐ नमो भगवते शिवाय स्वाहा**'। प्रभो! इस मन्त्रको पूर्वकालमें वसिष्ठजीने पुष्करतीर्थमें कृपापूर्वक प्रदान किया था। प्राचीन कालमें ब्रह्माजीने रावणको यह मन्त्र दिया था और शंकरजीने पहले कभी बाणासुरको और दुर्वासाको भी इसका उपदेश दिया था। इस मूलमन्त्रसे इष्टदेवको नैवेद्य आदि सम्पूर्ण उत्तम उपचार समर्पित करना चाहिये। इस मन्त्रका वेदोक्त ध्यान '**ध्यायेन्नित्यं**[१] **महेशं**' इत्यादि श्लोकके अनुसार है, जो सर्वसम्मत है।

'**ॐ नमो महादेवाय**'

बाणासुर उवाच

महेश्वर महाभाग कवचं यत् प्रकाशितम्।
संसारपावनं नाम कृपया कथय प्रभो॥ ४३॥

सच्चिदानन्दस्वरूप श्रीमहादेवजीको नमस्कार है।

बाणासुरने कहा—महाभाग! महेश्वर! प्रभो! आपने संसारपावन नामक जो कवच प्रकाशित किया है, उसे कृपापूर्वक मुझसे कहिये।

महेश्वर उवाच

शृणु वक्ष्यामि हे वत्स! कवचं परमाद्भुतम्।
अहं तुभ्यं प्रदास्यामि गोपनीयं सुदुर्लभम्॥ ४४॥

पुरा दुर्वाससे दत्तं त्रैलोक्यविजयाय च।
ममैवेदं च कवचं भक्त्या यो धारयेत् सुधीः॥ ४५॥
जेतुं शक्नोति त्रैलोक्यं भगवानिव लीलया॥ ४६॥

महेश्वर बोले—बेटा! सुनो, उस परम अद्भुत कवचका मैं वर्णन करता हूँ। यद्यपि वह परम दुर्लभ और गोपनीय है तथापि तुम्हें उसका उपदेश दूँगा। पूर्वकालमें त्रैलोक्य-विजयके लिये वह कवच मैंने दुर्वासाको दिया था। जो उत्तम बुद्धिवाला पुरुष भक्तिभावसे मेरे इस कवचको धारण करता है, वह भगवान्‌की भाँति लीलापूर्वक

१. ध्यायेन्नित्यं महेशं' इत्यादि श्लोक इस प्रकार है—

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसं दिव्याकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्।
रत्नासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं सकलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥

'प्रतिदिन महेश्वरका ध्यान करे। उनकी अङ्गकान्ति चाँदीके पर्वत अथवा कैलासके समान है, मस्तकपर मनोहर चन्द्रमाका मुकुट शोभा पाता है, दिव्य वेशभूषा एवं शृङ्गारसे उनका प्रत्येक अङ्ग उज्ज्वल—जगमगाता हुआ जान पड़ता है, उनके एक हाथमें फरसा, दूसरेमें मृगछौना तथा शेष दो हाथोंपर अभयकी मुद्राएँ हैं, वे सदा प्रसन्न रहते हैं, रत्नमय सिंहासनपर विराजमान हैं, देवता लोग चारों ओरसे खड़े होकर उनकी स्तुति करते हैं। वे बाघम्बर पहने बैठे हैं, सम्पूर्ण विश्वके आदिकारण और वन्दनीय हैं, सबका भय दूर कर देनेवाले हैं, उनके पाँच मुख हैं और प्रत्येक मुखमें तीन-तीन नेत्र हैं।

तीनों लोकोंपर विजय पा सकता है।

संसारपावनस्यास्य कवचस्य प्रजापतिः।
ऋषिश्छन्दश्च गायत्री देवोऽहं च महेश्वरः।
धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः॥ ४७॥
पञ्चलक्षजपेनैव सिद्धिदं कवचं भवेत्॥ ४८॥
यो भवेत् सिद्धकवचो मम तुल्यो भवेद् भुवि।
तेजसा सिद्धियोगेन तपसा विक्रमेण च॥ ४९॥
शम्भुर्मे मस्तकं पातु मुखं पातु महेश्वरः।
दन्तपंक्तिं च नीलकण्ठोऽप्यधरोष्ठं हरः स्वयम्॥ ५०॥
कण्ठं पातु चन्द्रचूडः स्कन्धौ वृषभवाहनः।
वक्षःस्थलं नीलकण्ठः पातु पृष्ठं दिगम्बरः॥ ५१॥
सर्वाङ्गं पातु विश्वेशः सर्वदिक्षु च सर्वदा।
स्वप्ने जागरणे चैव स्थाणुर्मे पातु संततम्॥ ५२॥
इति ते कथितं बाण कवचं परमाद्भुतम्।
यस्मै कस्मै न दातव्यं गोपनीयं प्रयत्नतः॥ ५३॥
यत् फलं सर्वतीर्थानां स्नानेन लभते नरः।
तत् फलं लभते नूनं कवचस्यैव धारणात्॥ ५४॥
इदं कवचमज्ञात्वा भजेन्मां यः सुमन्दधीः।
शतलक्षप्रजप्तोऽपि न मन्त्रः सिद्धिदायकः॥ ५५॥

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते संसारपावनं नाम शंकरकवचं सम्पूर्णम्।

इस संसारपावन नामक शिवकवचके प्रजापति ऋषि, गायत्री छन्द तथा मैं महेश्वर देवता हूँ। धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्षके लिये इसका विनियोग है। (विनियोग-वाक्य यों समझना चाहिये—'ॐ **अस्य श्रीसंसारपावननामधेयस्य शिवकवचस्य प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्री छन्दो महेश्वरो देवता धर्मार्थकाममोक्षसिद्धौ विनियोगः।**') पाँच लाख बार पाठ करनेसे यह कवच सिद्धिदायक होता है। जो इस कवचको सिद्ध कर लेता है, वह तेज, सिद्धियोग, तपस्या और बल-पराक्रममें इस भूतलपर मेरे समान हो जाता है।

शम्भु मेरे मस्तककी और महेश्वर मुखकी रक्षा करें। नीलकण्ठ दाँतोंकी पाँतका और स्वयं हर अधरोष्ठका पालन करें। चन्द्रचूड कण्ठकी और वृषभवाहन दोनों कंधोंकी रक्षा करें। नीलकण्ठ वक्षःस्थलका और दिगम्बर पृष्ठभागका पालन करें। विश्वेश सदा सब दिशाओंमें सम्पूर्ण अङ्गोंकी रक्षा करें। सोते और जागते समय स्थाणुदेव निरन्तर मेरा पालन करते रहें।

बाण! इस प्रकार मैंने तुमसे इस परम अद्भुत कवचका वर्णन किया। इसका उपदेश जो ही आवे, उसीको नहीं देना चाहिये, अपितु प्रयत्नपूर्वक इसको गुप्त रखना चाहिये। मनुष्य सब तीर्थोंमें स्नान करके जिस फलको पाता है, उसको अवश्य इस कवचको धारण करनेमात्रसे पा लेता है। जो अत्यन्त मन्दबुद्धि मानव इस कवचको जाने बिना मेरा भजन करता है, वह सौ लाख बार जप करे तो भी उसका मन्त्र सिद्धिदायक नहीं होता।

इस प्रकार श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणमें संसारपावन नामक शिवकवचका वर्णन पूरा हुआ।

सौति कहते हैं—शौनक! यह तो कवच कहा गया। अब स्तोत्र सुनिये। मन्त्रराज कल्पवृक्ष-स्वरूप है। इसे पूर्वकालमें वसिष्ठजीने दिया था।

ॐ नमः शिवाय

बाणासुर उवाच

वन्दे सुराणां सारं च सुरेशं नीललोहितम्।
योगीश्वरं योगबीजं योगिनां च गुरोर्गुरुम्॥ ५६॥
ज्ञानानन्दं ज्ञानरूपं ज्ञानबीजं सनातनम्।
तपसां फलदातारं दातारं सर्वसम्पदाम्॥ ५७॥
तपोरूपं तपोबीजं तपोधनधनं वरम्।
वरं वरेण्यं वरदमीड्यं सिद्धगणैर्वरैः॥ ५८॥
कारणं भुक्तिमुक्तीनां नरकार्णवतारणम्।
आशुतोषं प्रसन्नास्यं करुणामयसागरम्॥ ५९॥
हिमचन्दनकुन्देन्दुकुमुदाम्भोजसंनिभम्।
ब्रह्मज्योतिःस्वरूपं च भक्तानुग्रहविग्रहम्॥ ६०॥
विषयाणां विभेदेन विभ्रन्तं बहुरूपकम्।
जलरूपमग्निरूपमाकाशरूपमीश्वरम्॥ ६१॥
वायुरूपं चन्द्ररूपं सूर्यरूपं महत्प्रभुम्।
आत्मनः स्वपदं दातुं समर्थमवलीलया॥ ६२॥

भक्तजीवनमीशं च भक्तानुग्रहकातरम्।
वेदा न शक्ता यं स्तोतुं किमहं स्तौमि तं प्रभुम्॥ ६३॥
अपरिच्छिन्नमीशानमहो वाङ्मनसोः परम्।
व्याघ्रचर्माम्बरधरं वृषभस्थं दिगम्बरम्।
त्रिशूलपट्टिशधरं सस्मितं चन्द्रशेखरम्॥ ६४॥
इत्युक्त्वा स्तवराजेन नित्यं बाणः सुसंयतः।
प्राणमच्छंकरं भक्त्या दुर्वासाश्च मुनीश्वरः॥ ६५॥

सच्चिदानन्दस्वरूप शिवको नमस्कार है।

बाणासुर बोला—जो देवताओंके सार-तत्त्वस्वरूप और समस्त देवगणोंके स्वामी हैं, जिनका वर्ण नील और लोहित है, जो योगियोंके ईश्वर, योगके बीज तथा योगियोंके गुरुके भी गुरु हैं, उन भगवान् शिवकी मैं वन्दना करता हूँ। जो ज्ञानानन्दस्वरूप, ज्ञानरूप, ज्ञानबीज, सनातन देवता, तपस्याके फलदाता तथा सम्पूर्ण सम्पदाओंको देनेवाले हैं, उन भगवान् शंकरको मैं प्रणाम करता हूँ। जो तपःस्वरूप, तपस्याके बीज, तपोधनोंके श्रेष्ठ धन, वर, वरणीय, वर-दायक तथा श्रेष्ठ सिद्धगणोंके द्वारा स्तवन करने-योग्य हैं, उन भगवान् शंकरको मैं नमस्कार करता हूँ। जो भोग और मोक्षके कारण, नरकसमुद्रसे पार उतारनेवाले, शीघ्र प्रसन्न होनेवाले, प्रसन्नमुख तथा करुणासागर हैं, उन भगवान् शिवको मैं प्रणाम करता हूँ। जिनकी अङ्गकान्ति हिम, चन्दन, कुन्द, चन्द्रमा, कुमुद तथा श्वेत कमलके सदृश उज्ज्वल है, जो ब्रह्मज्योतिःस्वरूप तथा भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये विभिन्न रूप धारण करनेवाले हैं, उन भगवान् शंकरको मैं प्रणाम करता हूँ। जो विषयोंके भेदसे बहुतेरे रूप धारण करते हैं, जल, अग्नि, आकाश, वायु, चन्द्रमा और सूर्य जिनके स्वरूप हैं, जो ईश्वर एवं महात्माओंके प्रभु हैं और लीलापूर्वक अपना पद देनेकी शक्ति रखते हैं, जो भक्तोंके जीवन हैं तथा भक्तोंपर कृपा करनेके लिये कातर हो उठते हैं, उन ईश्वरको मैं नमस्कार करता हूँ। वेद भी जिनका स्तवन करनेमें असमर्थ हैं, जो देश, काल और वस्तुसे परिच्छिन्न नहीं हैं तथा मन और वाणीकी पहुँचसे परे हैं, उन परमेश्वर प्रभुकी मैं क्या स्तुति करूँगा! जो बाघम्बरधारी अथवा दिगम्बर हैं, बैलपर सवार हो त्रिशूल और पट्टिश धारण करते हैं, उन मन्द मुस्कानकी आभासे सुशोभित मुखवाले भगवान् चन्द्रशेखरको मैं प्रणाम करता हूँ।

यों कहकर बाणासुर प्रतिदिन संयमपूर्वक रहकर स्तवराजसे भगवान्‌की स्तुति करता था और भक्तिभावसे शंकरजीके चरणोंमें मस्तक झुकाता था। मुनीश्वर दुर्वासा भी ऐसा ही करते थे।

मुने! वसिष्ठजीने पूर्वकालमें त्रिशूलधारी शिवके इस परम महान् अद्भुत स्तोत्रका गन्धर्वको उपदेश दिया था। जो मनुष्य भक्तिभावसे इस परम पुण्यमय स्तोत्रका पाठ करता है, वह निश्चय ही सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नानका फल पा लेता है। जो संयमपूर्वक हविष्य खाकर रहते हुए जगद्गुरु शंकरको प्रणाम करके एक वर्षतक इस स्तोत्रको सुनता है, वह पुत्रहीन हो तो अवश्य ही पुत्र प्राप्त कर लेता है। जिसको गलित कोढ़का रोग हो या उदरमें बड़ा भारी शूल उठता हो, वह यदि एक वर्षतक इस स्तोत्रको सुने तो अवश्य ही उस रोगसे मुक्त हो जाता है। यह बात मैंने व्यासजीके मुँहसे सुनी है। जो कैदमें पड़कर शान्ति न पाता हो, वह भी एक मासतक इस स्तोत्रको श्रवण करके अवश्य ही बन्धनसे मुक्त हो जाता है। जिसका राज्य छिन गया हो, ऐसा पुरुष यदि भक्तिपूर्वक एक मासतक इस स्तोत्रका श्रवण करे तो अपना राज्य प्राप्त कर लेता है। एक मासतक संयमपूर्वक इसका श्रवण करके निर्धन मनुष्य धन पा लेता है। राजयक्ष्मासे ग्रस्त होनेपर जो आस्तिक पुरुष एक वर्षतक इसका श्रवण करता है, वह भगवान् शंकरके प्रसादसे निश्चय ही रोगमुक्त हो

जाता है। द्विज शौनक! जो सदा भक्तिभावसे इस स्तवराजको सुनता है उसके लिये तीनों लोकोंमें कुछ भी असाध्य नहीं रह जाता। भारतवर्षमें उसको कभी अपने बन्धुओंसे वियोगका दुःख नहीं होता। वह अविचल एवं महान् ऐश्वर्यका भागी होता है, इसमें संशय नहीं है। जो पूर्ण संयमसे रहकर अत्यन्त भक्तिभावसे एक मासतक इस स्तोत्रका श्रवण करता है, वह यदि भार्याहीन हो तो अति विनयशील सती-साध्वी सुन्दरी भार्या पाता है। जो महान् मूर्ख और खोटी बुद्धिका है, ऐसा मनुष्य यदि इस स्तोत्रको एक मासतक सुनता है तो वह गुरुके उपदेशमात्रसे बुद्धि और विद्या पाता है। जो प्रारब्ध-कर्मसे दुःखी और दरिद्र मनुष्य भक्तिभावसे इस स्तोत्रका श्रवण करता है, उसे निश्चय ही भगवान् शंकरकी कृपासे धन प्राप्त होता है। जो प्रतिदिन तीनों संध्याओंके समय इस उत्तम स्तोत्रको सुनता है, वह इस लोकमें सुख भोगता, परम दुर्लभ कीर्ति प्राप्त करता और नाना प्रकारके धर्मका अनुष्ठान करके अन्तमें भगवान् शंकरके धामको जाता है, वहाँ श्रेष्ठ पार्षद होकर भगवान् शिवकी सेवा करता है।

(अध्याय १९)

गोपपत्नी कलावतीके गर्भसे एक शिशुके रूपमें उपबर्हणका जन्म, शूद्रयोनिमें उत्पन्न बालक नारदकी जीवनचर्या, नामकी व्युत्पत्ति, उसके द्वारा संतोंकी सेवा, सनत्कुमारद्वारा उसे उपदेशकी प्राप्ति, उसके द्वारा श्रीहरिके स्वरूपका ध्यान, आकाशवाणी तथा उस बालकके देह-त्यागका वर्णन

सौति कहते हैं—उपबर्हण गन्धर्व अपनी पत्नी मालावतीके साथ तथा अन्य पत्नियोंके साथ भी निर्जन वनमें आनन्दपूर्वक विहार करने लगे। उन्होंने अपनी आयुका शेष काल सानन्द बिताना आरम्भ किया। उपबर्हणके पिता गन्धर्वराज भी स्त्री-पुत्रोंके साथ प्रसन्नतापूर्वक रहने लगे। उन्होंने नाना प्रकारके श्रेष्ठ कर्म तथा बड़े-बड़े पुण्य कर्म किये। वे कुबेर-भवनके समान वैभवशाली गृहमें राजा होकर राजसुखका उपभोग करने लगे। उन्होंने अपनी सुस्थिरयौवना सुशीला पत्नीके साथ कुछ कालतक विहार किया। फिर समय आनेपर गङ्गाजीके मनोहर तटपर पत्नीसहित गन्धर्वराज प्राणोंका परित्याग करके सानन्द वैकुण्ठधामको चले गये। वे शैव थे, इसलिये उनपर शिवजीकी कृपा हुई तथा उनके पुत्रने श्रीविष्णुकी सेवा की थी, इसलिये भगवान् विष्णुकी भी उनपर कृपादृष्टि हुई। इससे वे वैकुण्ठमें श्रीविष्णुके श्याम-चतुर्भुजरूपधारी पार्षद हुए। माता-पिताका संस्कार करके गन्धर्व उपबर्हणने ब्राह्मणोंको नाना प्रकारके धन दिये। शौनकजी! फिर अन्तकाल आनेपर ब्रह्माजीके शापसे प्राणोंका परित्याग करके उस विद्वान् गन्धर्वने ब्राह्मणके वीर्य और शूद्राके गर्भसे जन्म ग्रहण किया। सती मालावतीने मनमें उत्तम संकल्प ले भारतभूमिके पुष्कर तीर्थमें अग्निकुण्डके भीतर अपने प्राणोंका परित्याग कर दिया। वह साध्वी मनुवंशी राजा सृंजयकी पत्नीसे उत्पन्न हुई। उसे पूर्वजन्मकी बातोंका स्मरण रहता था। उस सुन्दरीके मनमें यही संकल्प था कि उपबर्हण गन्धर्व मेरे पति हों।

शौनकजीने पूछा—सूतनन्दन! उपबर्हण गन्धर्व ब्राह्मणके वीर्य और शूद्र-पत्नीके गर्भसे किस प्रकार उत्पन्न हुए? यह आप बतानेकी कृपा करें।

शौनकजीके यों पूछनेपर सूतजीने 'गोपराज द्रुमिलकी पत्नी कलावतीने मुनिवर काश्यपके स्खलित शुक्रको ग्रहण कर लिया था, इससे उसको पुत्रकी प्राप्ति हुई थी'—इस प्रकार

उपबर्हणके जन्मकी कथा सुनाकर कहा कि गोपराज बदरिकाश्रममें जाकर योगबलसे शरीरको त्यागनेके पश्चात् विमानद्वारा वैकुण्ठधाममें चले गये। तत्पश्चात् शोकविह्वला कलावतीको अपनी माता कहकर एक दयालु ब्राह्मण अपने घर ले गये। साध्वी कलावतीने ब्राह्मणके ही घरमें रहकर एक श्रेष्ठ पुत्रको जन्म दिया, जिसकी अङ्गकान्ति तपाये हुए सुवर्णके समान दमक रही थी। वह ब्रह्मतेजसे जाज्वल्यमान हो रहा था। उस घरमें रहनेवाली सभी स्त्रियोंने उस सुन्दर बालकको देखा। वह अपने ब्रह्मतेजसे ग्रीष्म-ऋतुके मध्याह्नकालिक प्रचण्ड सूर्यकी प्रभाको पराजित कर रहा था। उसका रूप कामदेवसे भी अधिक सुन्दर तथा मुख चन्द्रमासे भी अधिक मनोहर था। उसके मुखकी शोभासे शरत्पूर्णिमाका चन्द्र लज्जित हो रहा था। उसके नेत्र शरद्-ऋतुके प्रफुल्ल कमलोंकी शोभाको छीने लेते थे। ललित हाथ-पैर, सुन्दर कपोल और मनोहर आकृति थी। पद्म और चक्रसे चिह्नित उसके चरणारविन्द अनुपम परम उज्ज्वल प्रतीत होते थे। उसके दोनों हाथोंकी भी कहीं तुलना नहीं थी। वह स्तन पीनेके लिये रो रहा था। स्त्रियाँ उस बालकको देखकर बड़ी प्रसन्नताके साथ अपने-अपने आश्रमको गयीं। पुत्र और स्त्रीसहित ब्राह्मण भी बड़े प्रसन्न हुए और नृत्य करने लगे। वह बालक शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी भाँति दिनोंदिन बढ़ने लगा। ब्राह्मण पुत्रसहित कलावतीका पुत्रीकी भाँति पालन करने लगा।

सौति कहते हैं—शौनकजी! समयके अनुसार क्रमशः बढ़ता हुआ वह बालक पाँच वर्षका हो गया। उसे पूर्वजन्मकी बातोंका स्मरण था। वह सदा ज्ञानसे सम्पन्न रहता था। उसे पूर्वजन्ममें जपे हुए मन्त्रका सदा स्मरण बना रहा। अतः वह निरन्तर श्रीकृष्णके नाम, यश और गुण आदिका गान किया करता था। क्षणभरमें रोने लगता और दूसरे ही क्षण नृत्य करते हुए उसका सारा शरीर रोमाञ्चित हो उठता था। वह बालक जहाँ-जहाँ श्रीकृष्णसे सम्बन्ध रखनेवाली गाथा तथा तत्सम्बन्धी पुराण सुनता, वहीं ठहरता था। उसके सारे अङ्ग धूलसे धूसरित रहते थे। वह धूलमें भगवान्‌की प्रतिमा बनाकर धूलसे ही श्रीहरिका पूजन करता और धूलका ही अभीष्ट नैवेद्य अर्पित करता था। मुने! यदि माता सबेरे कलेवेके लिये बेटेको बुलाती तो वह माताको यही उत्तर देता था कि 'मैं श्रीहरिका पूजन करता हूँ।'

शौनकने पूछा—सूतनन्दन! इस बालकका इस नये जन्ममें क्या नाम हुआ? संज्ञा और व्युत्पत्तिके साथ आप उसे बतानेकी कृपा करें।

सौतिने कहा—शौनकजी! अनावृष्टिके अन्तमें वह बालक उत्पन्न हुआ था। अतः जन्मकालमें जगत्‌को नार (जल) प्रदान किया। इसीसे उसका नाम 'नारद' हुआ। पूर्वजन्मकी बातोंका स्मरण रखनेवाला वह महाज्ञानी बालक दूसरे बालकोंको नार अर्थात् ज्ञान देता था, इसलिये भी नारद नामसे विख्यात हुआ। मुने! वह मुनीन्द्र नारदसे ही उत्पन्न हुआ था, इस कारण भी उसका नाम नारद रखा गया।

शौनकजीने पूछा—शिशुका जो नारद नाम रखा गया था, वह तो व्युत्पत्तिके अनुसार उचित जान पड़ा। परंतु उसके उत्पादक मुनीन्द्रका मङ्गलमय नाम नारद किस प्रकार हुआ?

सौतिने कहा—शौनकजी! धर्मपुत्र मुनिवर नरने पुत्रहीन ब्राह्मण कश्यपको पुत्र प्रदान किया था, अतः नरप्रदत्त होनेके कारण उसका नाम नारद हुआ।

शौनक बोले—सूतनन्दन! अब मैंने शिशुके भी नारद नामकी व्युत्पत्ति सुन ली। अब यह बताइये कि शूद्रयोनिमें तथा ब्रह्मपुत्र-अवस्थामें उनका नाम नारद कैसे सम्भव हुआ?

सौतिने कहा—कल्पान्तरमें ब्रह्माजीके कण्ठसे

बहुसंख्यक नर उत्पन्न हुए थे। उनके कण्ठने नरका दान किया था, इसलिये वह 'नरद' कहलाया। उस नरद अर्थात् कण्ठसे बालककी उत्पत्ति हुई, इसलिये ब्रह्माजीने उसका मङ्गलमय नाम नारद रखा। अब आप सावधान होकर उस शिशुका वृत्तान्त सुनिये। बालकके नारद नामकी उपलब्धिमें क्या रहस्य है, इस बातकी जानकारी होनेसे कौन-सा विशिष्ट प्रयोजन सिद्ध होता है। वह गोपीका बालक ब्राह्मणके घरमें प्रतिदिन बढ़ने और हृष्ट-पुष्ट होने लगा। ब्राह्मण पुत्रसहित उस गोपीका अपनी पुत्रीकी भाँति पालन करते थे, इसी बीचमें कुछ महातेजस्वी ब्राह्मण, जो देखनेमें पाँच वर्षके बालकोंकी भाँति जान पड़ते थे, उस ब्राह्मणके घर आये। वे अपने तेजसे ग्रीष्म-ऋतुके मध्याह्नकालिक सूर्यकी प्रभाको तिरस्कृत कर रहे थे। गृहस्थ ब्राह्मणने मधुपर्क आदि देकर उन सबको प्रणाम किया। भोजनके समय उन चारों मुनिवरोंने ब्राह्मणके दिये हुए फल-मूल आदिका आहार ग्रहण किया। उनकी जूँठन उस शिशुने खायी। उनमें जो चौथे मुनि थे, उन्होंने उस बालकको प्रसन्नतापूर्वक श्रीकृष्ण-मन्त्रका उपदेश दिया। ब्राह्मण और अपनी माताकी आज्ञासे वह बालक उन चारों महात्माओंका दास बनकर उनकी सेवा-टहल करता रहा। एक दिन उस शिशुकी माता रातके समय मार्गपर चल रही थी। इतनेहीमें एक साँपने उसे डँस लिया और वह श्रीहरिका स्मरण करती हुई तत्काल चल बसी। वह सती साध्वी गोपी उत्तम रत्नोंद्वारा निर्मित वैष्णव विमानपर बैठकर विष्णु-पार्षदोंके साथ उसी क्षण वैकुण्ठधाममें जा पहुँची। प्रातः-काल वह बालक उन ब्राह्मणोंके साथ गृहस्थ ब्राह्मणके घरसे चल दिया। उन कृपालु ब्राह्मणोंने उस बालकको तत्त्वज्ञान प्रदान किया। इसके बाद वे सब ब्रह्मकुमार उस शिशुको वहीं छोड़कर अपने स्थानको चले गये। वह शिशु बड़ा ज्ञानी था। अतः गङ्गाजीके मनोहर तटपर ठहर गया। वहाँ स्नान करके उसने ब्राह्मणोंके दिये हुए विष्णु-मन्त्रका जप किया, जो क्षुधा, पिपासा, रोग तथा शोकको हर लेनेवाला है और वेदोंमें भी दुर्लभ है। घोर विशाल वनमें पीपलके नीचे योगासन लगाकर वह बालक वहाँ सुदीर्घकालतक बैठा रहा।

शौनकने पूछा—सूतनन्दन! उस बालकको किस मन्त्रकी प्राप्ति हुई? बुद्धिमान् सनत्कुमारके दिये हुए श्रीहरिके उस उत्तम मन्त्रको आप मुझे बतानेकी कृपा करें।

सौति बोले—शौनकजी! पूर्वकालमें भगवान् श्रीकृष्णने गोलोक-धामके भीतर ब्रह्माजीको कृपापूर्वक जिस बाईस अक्षरवाले मन्त्रका उपदेश दिया था, वह वेदोंमें भी परम दुर्लभ है। ब्रह्माजीने बुद्धिमान् सनत्कुमारको उनके भक्तिभावसे प्रभावित होकर वह मन्त्र दिया तथा सनत्कुमारने उक्त गोपी-बालकको उस मन्त्रका उपदेश दिया। वह मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ श्रीं नमो भगवते रासमण्डलेश्वराय श्रीकृष्णाय स्वाहा।

—यह मन्त्र कल्पवृक्षस्वरूप है। इसके साथ ही महापुरुषस्तोत्र तथा पूर्वोक्त कवच भी दिया। इस मन्त्रके लिये उपयोगी जो सामवेदोक्त ध्यान है, उसका भी उपदेश कर दिया। करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशमान तेजोमण्डलस्वरूप जो अनिर्वचनीय चिन्मय प्रकाश है, उसमें ध्यान लगाकर योगी, सिद्धगण तथा देवता मनोवाञ्छित रूपका साक्षात्कार करते हैं। वैष्णवजन उस ज्योतिःपुञ्जके भीतर अपने निकट ही जिस रूपका ध्यान करते हैं, वह अत्यन्त कमनीय, अनिर्वचनीय एवं मनोहर है। नूतन जलधरके समान उसकी श्याम कान्ति है। नेत्र शरत्कालके प्रफुल्ल पङ्कजकी शोभाको छीने लेते हैं। मुख शरत्पूर्णिमाके चन्द्रमाकी भाँति आह्लादजनक है। अधर कटे हुए बिम्बफलसे भी अधिक अरुण है। मोतियोंकी पंक्तिको तिरस्कृत

करनेवाली दन्तावलीके कारण वे बड़े मनोहर जान पड़ते हैं। उनके मुखपर मुस्कराहट खेलती रहती है। उनके हाथमें मुरली शोभा पाती है। श्रीअङ्गोंमें करोड़ों कामदेवोंका लावण्य संचित है। वे लीलाके मनोहर धाम हैं। लाखों चन्द्रमाओंकी प्रभा उनके श्रीविग्रहकी सेवा करती है। उनका प्रत्येक अङ्ग परिपुष्ट तथा श्रीसम्पन्न है। वे त्रिभंगी छबिसे सुशोभित होते हैं, उनके दो बाँहें हैं। शरीरपर पीताम्बर शोभा पाता है। रत्नोंके बने हुए बाजूबंद और कंगन तथा रत्ननिर्मित नूपुर उनके विभिन्न अङ्गोंकी शोभा बढ़ाते हैं। दोनों कपोलोंपर रत्नमय कुण्डल झिलमिलाते रहते हैं। मस्तकपर मोरपंखका मुकुट शोभा पाता है। रत्नमयी माला कण्ठदेशको विभूषित करती है। मालतीकी वनमालासे घुटनोंतकका भाग सुशोभित है। उनके सारे अङ्ग चन्दनसे चर्चित हैं तथा वे भक्तोंपर अनुग्रह करनेवाले हैं। श्रेष्ठ कौस्तुभमणिकी प्रभासे उनका वक्षःस्थल उद्भासित होता है। सुस्थिर यौवनसे युक्त तथा सदा सब ओर घेरकर खड़ी हुई भूषण-भूषित गोपिकाएँ सदा बाँकी चितवनसे उनकी ओर देखा करती हैं। वे श्रीराधाके वक्षःस्थलमें विराजमान हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदि देवता नित्य-निरन्तर उनकी पूजा, वन्दना और स्तुति करते हैं। उनकी अवस्था किशोर है। वे श्रीराधाके प्राणनाथ, शान्तस्वरूप एवं परात्पर हैं। वे निर्लिप्त एवं साक्षीरूप हैं। निर्गुण तथा प्रकृतिसे परे हैं। वे सर्वेश्वर परमात्मा एवं ऐश्वर्यशाली हैं। इस प्रकार उन भगवान् श्रीकृष्णका ध्यान करे।

मुने! इस प्रकार मैंने तुमसे भगवान्‌के ध्यान, स्तोत्र, कवच तथा मन्त्रोपयोगी सत्यका वर्णन किया है। उनका मन्त्र भी कल्पवृक्षस्वरूप है। शौनक! उस समय वह बालक एक हजार दिव्य वर्षोंतक बिना कुछ खाये-पीये ध्यानमें बैठा रहा। उसका पेट सटकर अत्यन्त कृश हो गया था। फिर भी वह सिद्ध मन्त्रके प्रभावसे परिपुष्ट एवं शक्तिमान् था। उसने ध्यानमें देखा—एक दिव्य लोक है, जहाँ रत्नमय सिंहासनपर एक दिव्य बालक विराजमान है। रत्नमय आभूषण उसके

अङ्गोंकी शोभा बढ़ाते हैं। किशोर-अवस्था, श्याम-कान्ति, गोप-वेष और मुखपर मन्द-मन्द मुस्कान है। वह पीताम्बरधारी द्विभुज किशोर गोपों और गोपाङ्गनाओंसे घिरा हुआ है। उसके हाथमें मुरली है। चन्दनसे उसके श्रीअङ्गोंका शृङ्गार किया गया है तथा ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवता उस चिर-शान्त परात्पर पुरुषकी स्तुति कर रहे हैं। वह शान्त स्वभाववाला गोपीका बालक श्यामसुन्दरकी उस मनोहर झाँकीको देखकर ध्यानसे विरत हो गया। ध्यान टूटनेपर जब फिर वह उनका दर्शन न कर सका तब शोकसे पीड़ित हो गया। ध्यानगत बालकको पुनः न देखनेपर वह गोपीकुमार पीपलकी जड़पर बैठकर रोने लगा। तब उस रोते हुए बालकको सम्बोधित करके आकाशवाणी हुई। आकाशवाणीका कथन सत्य, प्रबोधयुक्त, हितकर एवं संक्षिप्त था। आकाशवाणी बोली—'बालक! एक बार जो रूप तेरे दृष्टिपथमें आ चुका है, वही इस समय पर्याप्त

है। अब फिर तुझे उसका दर्शन नहीं हो सकता; क्योंकि जिनके अन्तःकरणकी वासना परिपक्व

नहीं हुई है, ऐसे कुयोगियोंको उस स्वरूपका दर्शन होना अत्यन्त कठिन है। तेरे इस शरीरका अन्त होनेपर जब तुझे दिव्य शरीर प्राप्त होगा, तब तू पुनः जन्म, मृत्यु और जराका नाश करनेवाले गोविन्दका दर्शन करेगा।'

यह सुनकर वह बालक बड़ी प्रसन्नताके साथ पुनः ध्यानके प्रयाससे विरत हो गया। उसने समय आनेपर मन-ही-मन श्रीकृष्णका स्मरण करते हुए तीर्थभूमिमें अपने शरीरको त्याग दिया। उस समय स्वर्गलोकमें दुन्दुभियाँ बजने लगीं। आकाशसे पृथ्वीपर फूलोंकी वर्षा होने लगी। इस प्रकार महामुनि नारद शापमुक्त हो गये। गोप-शरीरका त्याग करके वह जीव ब्रह्म-विग्रहमें विलीन हो गया। वह नित्यस्वरूप तो है ही, पूर्वकालमें उसका आविर्भाव हुआ और भिन्न कालमें वह तिरोहित हो गया। नित्यरूपधारी जो भक्तजन हैं, उनका अपनी इच्छासे आविर्भाव अथवा तिरोभाव होता है। उन्हें जन्म, मृत्यु, जरा और व्याधिका स्पर्श नहीं होता। (अध्याय २०-२१)

ब्रह्माजीके पुत्रोंके नामोंकी व्युत्पत्ति

सौति कहते हैं—शौनकजी! तदनन्तर कुछ कल्प व्यतीत होनेपर जब ब्रह्माजी पुनः सृष्टि-कार्यमें संलग्न हुए, तब उनके 'नरद' नामक कण्ठदेशसे मरीचि आदि मुनियोंके साथ वे शापमुक्त मुनि प्रकट हुए। इसी कारणसे उन मुनीन्द्रकी 'नारद' नामसे ख्याति हुई। ब्रह्माजीका जो पुत्र उनके चेतस् (चित्त)-से प्रकट हुआ, उसका नाम उन्होंने 'प्रचेता' रखा। जो उनके दक्षिण पार्श्वसे सहसा उत्पन्न हुआ, वह सब कर्मोंमें दक्ष होनेके कारण 'दक्ष' कहलाया। वेदोंमें कर्दम शब्द छायाके अर्थमें विद्यमान है। जो बालक ब्रह्माजीके कर्दम अर्थात् छायासे प्रकट हुआ, उसका नाम 'कर्दम' रखा गया। इसी तरह मरीचि शब्द वेदोंमें तेजोभेदके अर्थमें आता है। अतः जो बालक तत्काल अत्यन्त तेजस्वी रूपमें प्रकट हुआ, वह 'मरीचि' कहलाया। जिस बालकने जन्मान्तरमें क्रतुसंघ (यज्ञसमूह)-का सम्पादन किया था, वह वर्तमान जन्ममें ब्रह्माजीका पुत्र होनेपर भी उसी क्रतुके नामपर 'क्रतु' कहलाया। ब्रह्माजीका मुख प्रधान अङ्ग है। उस अङ्गसे उत्पन्न हुआ बालक इर अर्थात् तेजस्वी था, इसलिये 'अङ्गिरा' नामसे प्रसिद्ध हुआ। शौनक! भृगु शब्द अत्यन्त तेजस्वीके अर्थमें विद्यमान है। ब्रह्माजीसे उत्पन्न जो बालक अत्यन्त तेजस्वी हुआ, उसका नाम 'भृगु' हुआ। जो बालक होनेपर भी तत्काल अत्यन्त तेजके कारण अरुण वर्णका हो गया और उच्च कोटिकी तपस्याके कारण तेजसे प्रज्वलित होने लगा, वह 'अरुण' नामसे विख्यात हुआ। जिस योगीके योगबलसे हंस उसके अधीन रहते थे, वह परम

शिशु नारद

सुतपा ब्राह्मण

योगीन्द्र बालक 'हंसी' नामसे विख्यात हुआ। तत्काल प्रकट हुआ जो बालक वशीभूत और शिष्य होकर विधाताका अत्यन्त प्रीतिपात्र हुआ, उसका नाम 'वसिष्ठ' रखा गया। जिस बालकका तपमें सदा प्रयत्न देखा गया तथा जो सम्पूर्ण कर्मोंमें संयत रहा, वह अपने उसी गुणके कारण 'यति' कहलाया। वेदोंमें 'पुल' शब्द तपस्याके अर्थमें आता है और 'ह' स्फुट-अर्थमें। जिस बालकमें स्फुटरूपसे तपस्याका समूह लक्षित हुआ, वह उसी लक्षणसे 'पुलह' कहलाया। (पुलका अर्थ है—तपः-समूह और 'स्त्य' शब्द अस्ति—'है' के अर्थमें आया है) जिसके पूर्वजन्मोंके तपःसमूह विद्यमान हैं; इसी कारण जो तपः-संघस्वरूप है; वह इसी व्युत्पत्तिके द्वारा 'पुलस्त्य' के नामसे विख्यात हुआ। 'त्रि' शब्द त्रिगुणमयी प्रकृतिके अर्थमें आता है और 'अ' विष्णुके अर्थमें। जिसकी उन दोनोंके प्रति समान भक्ति है, उस बालकको 'अत्रि' कहा गया। जिसके मस्तकपर तपस्याके तेजसे प्रकट हुई अग्निशिखास्वरूपिणी पाँच जटाएँ थीं, उसका नाम 'पञ्चशिख' हुआ। जिसने दूसरे जन्ममें आन्तरिक अन्धकारसे रहित प्रदेशमें तप किया था, उस शिशुका नाम 'अपान्तरतमा' हुआ। जो स्वयं तपस्या करता और दूसरोंको भी उसकी प्राप्ति करा सकता था तथा जो तपस्याका भार वहन करनेमें पूर्ण समर्थ था, वह अपनी इसी योग्यताके कारण 'वोढु' कहलाया। मुने! जो बालक तपस्याके तेजसे सदा दीप्तिमान् रहता था तथा तपस्यामें जिसके चित्तकी स्वाभाविक रुचि थी, वह 'रुचि' नामसे प्रसिद्ध हुआ। जो ब्रह्माजीके क्रोधके समय ग्यारहकी संख्यामें प्रकट हुए और रोने लगे, वे रोदनके ही कारण 'रुद्र' कहलाये।

सौति फिर बोले—जिनमें सत्त्वगुणकी प्रधानता है, वे भगवान् विष्णु पालक हैं। रजोगुणप्रधान ब्रह्मा सृष्टिकर्ता हैं तथा जिनमें तमोगुणकी प्रधानता है, वे 'रुद्र' कहे गये हैं। उनके वेगको रोकना कठिन है। वे बड़े भयंकर हैं। उन रुद्रोंमेंसे एकका नाम कालाग्नि रुद्र है, जो भगवान् शंकरके अंश हैं। वे ही जगत्का संहार करनेवाले हैं। शुद्ध सत्त्वस्वरूप जो शिव हैं, वे सत्पुरुषोंको कल्याण प्रदान करनेवाले हैं। अन्य रुद्र श्रीकृष्णकी कलामात्र हैं। केवल भगवान् विष्णु और शंकर उन परिपूर्णतम भगवान् श्रीकृष्णके दो अंश हैं। वे दोनों ही समान सत्त्वस्वरूप हैं। ब्रह्मन्! यह बात मैंने रुद्रकी उत्पत्तिके प्रसंगमें बतायी है। आप उसे भूल क्यों रहे हैं। सच है, सभी लोग भगवान्की मायासे मोहित हो जाते हैं। मुनियोंको भी मतिभ्रम हो जाया करता है। 'सनक' ब्रह्माके प्रथम, 'सनन्दन' द्वितीय, 'सनातन' तृतीय और भगवान् 'सनत्कुमार' चतुर्थ पुत्र हैं। मुने! ब्रह्माजीने उन प्रथम चार पुत्रोंसे सृष्टि करनेके लिये कहा। परंतु उनके लिये यह कार्य असह्य हो गया। इससे ब्रह्माजीको बड़ा क्रोध हुआ। उसी क्रोधसे रुद्रोंकी उत्पत्ति हुई। सनक और सनन्दन—ये दोनों शब्द आनन्दके वाचक हैं। वे दोनों बालक भक्तिभावसे परिपूर्ण होनेके कारण सदा आनन्दित रहते हैं, इसलिये सनक और सनन्दन नामसे विख्यात हुए। नित्य परिपूर्णतम साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण ही सनातन पुरुष हैं। जो उनका भक्त है, वह भी वास्तवमें उन्हींके समान है। इसीलिये वह तीसरा कृष्ण-भक्त बालक सनातन नामसे विख्यात हुआ। 'सनत्' का अर्थ है नित्य और 'कुमार' का अर्थ है शिशु। नित्य शैशवावस्थासे सम्पन्न होनेके कारण इस बालकको ब्रह्माजीने सनत्कुमार नाम दिया। मुने! इस प्रकार मैंने ब्रह्माजीके पुत्रोंके नामोंकी व्युत्पत्ति बतायी। अब आप क्रमशः नारदजीके आख्यानको सुनिये। (अध्याय २२)

ब्रह्माजीसे सृष्टिके लिये दारपरिग्रहकी प्रेरणा पाकर डरे हुए नारदका स्त्री-संग्रहके दोष बताकर तपके लिये जानेकी आज्ञा माँगना

सौति कहते हैं—सृष्टिकर्ता ब्रह्माने अपने सब बालकोंको सृष्टिके कार्यमें लगाकर नारदजीको भी सृष्टि करनेके लिये प्रेरित किया। उन्होंने वेद-वेदाङ्गोंके पारंगत विद्वान् नारदसे यह सत्य, हितकर, वेदसारस्वरूप और परिणाममें सुख देनेवाली बात कही।

ब्रह्माजी बोले—कुलमें श्रेष्ठ मेरे प्राणवल्लभ पुत्र नारद! आओ। तुम ज्ञानदीपकी शिखासे अज्ञानान्धकारका निवारण करनेवाले हो। तुमसे यह बात छिपी नहीं है कि जन्मदाता पिता परम गुरु है। वह सभी वन्दनीय पुरुषोंमें सबसे श्रेष्ठ है। विद्यादाता और मन्त्रदाता दोनों समान हैं तथा पितासे भी बढ़कर हैं। बेटा! मैं तुम्हारा पिता, पालक, विद्यादाता एवं मन्त्रदाता भी हूँ। तुम मेरी आज्ञासे मेरी ही प्रसन्नताके लिये विवाह कर लो।

ब्रह्माजीकी यह बात सुनकर मुनिवर नारदके कण्ठ, ओठ और तालु सूख गये। वे भयभीत होकर विनयपूर्वक बोले।

नारदजीने कहा—तात! वही पिता, वही गुरु, वही बन्धु, वही पुत्र और वही मेरा ईश्वर है, जो भगवान् श्रीकृष्णके चरणारविन्दोंमें सुदृढ़ भक्ति उत्पन्न करा दे*। यदि बालक अज्ञानवश कुमार्गपर चल रहे हों तो उन्हींको जो उस मार्गसे हटाता है, वही करुणानिधान पिता है। जो श्रीकृष्ण-चरणोंमें लगी हुई भक्तिका त्याग कराकर पुत्रको दूसरे किसी विषयमें लगाये, वह कैसा पिता है? स्त्रीसंग्रह केवल दुःखका ही कारण है। उससे सुख नहीं मिलता। वह तपस्या, स्वर्ग, भक्ति, मुक्ति एवं सत्कर्मोंमें विघ्न उपस्थित करनेवाला है। ब्रह्मन्! मूढ़चित्त गृहस्थोंके घरोंमें तीन प्रकारकी स्त्रियाँ पायी जाती हैं—साध्वी, भोग्या और कुलटा। वे सब-की-सब स्वार्थपरायणा होती हैं। साध्वी स्त्री परलोकके भयसे, इस लोकमें अपनेको यश मिलनेके लोभसे तथा कामासक्तिसे भी निरन्तर स्वामीकी सेवा करती है। भोग्या स्त्री भोगकी अभिलाषिणी होती है। वह सदा केवल कामासक्तिसे ही प्रियतम पतिकी सेवा करती है। भोगके सिवा और किसी हेतुसे वह क्षणभर भी सेवा नहीं करती। भोग्या स्त्री जबतक वस्त्र, आभूषण, सम्भोग तथा सुस्निग्ध एवं उत्तम आहार पाती है, तबतक ही स्वामीके वशमें रहकर प्यारी बनी रहती है। कुलटा नारी कुलमें अंगारके समान है। वह कुलका नाश करनेवाली है। कुलटा स्त्री कपटसे ही स्वामीकी सेवा करती है, भक्तिसे नहीं। वे अपने स्वार्थकी सिद्धिके लिये सुधाके समान मधुर वचन बोलती हैं। क्रोध होनेपर उनके मुखसे विषके समान दुःसह वचन निकलता है। यदि उनकी बातपर विश्वास किया जाय तब तो सर्वनाश ही हो जाता है। उनके अभिप्रायको समझना बहुत कठिन है। केवल उनका कर्म छिपा होता है। सर्वज्ञ! आप सब कुछ जानते हैं; क्योंकि आत्माराम पुरुषोंके ईश्वर हैं। प्रभो! मुझपर अनुग्रह कीजिये और अब मुझे विदा दीजिये। आप कल्पवृक्षसे भी बढ़कर हैं। मैं आपसे श्रीकृष्ण-भक्तिकी याचना करता हूँ।

ऐसा कहकर नारदजीने पिताके चरण-कमलोंको पकड़कर मङ्गलमय तपके निमित्त जानेके लिये आज्ञा माँगी। फिर दोनों हाथ जोड़कर भक्तिभावसे मस्तक झुका ब्रह्माजीकी परिक्रमा एवं प्रणाम करके वे वहाँसे जानेको उद्यत हुए। (अध्याय २३)

---

* स पिता स गुरुर्बन्धुः स पुत्रः स मदीश्वरः। यः श्रीकृष्णपादपद्मे दृढां भक्तिं च कारयेत्॥
(ब्रह्मखण्ड २३। १७)

ब्रह्माजीका नारदको गृहस्थधर्मका महत्त्व बताते हुए विवाहके लिये राजी करना और नारदका पिताकी आज्ञा ले शिवलोकको जाना

सौति कहते हैं—नारदको इस प्रकार जाते देख ब्रह्माजी उदास हो गये और इस प्रकार बोले।

ब्रह्माजीने कहा—अच्छी बात है। बेटा! तुम तपस्याके लिये जाओ। अब संसारकी सृष्टि करनेसे मेरा भी क्या प्रयोजन है? मैं सर्वेश्वर श्रीकृष्णको जाननेके लिये गोलोकको जाऊँगा। सनक, सनन्दन, सनातन तथा चौथा बेटा सनत्कुमार—ये चारों वैरागी हैं ही। यति, हंसी, आरुणि, वोढु तथा पञ्चशिख—ये सब पुत्र तपस्वी हो गये। फिर संसारकी रचनासे मेरा क्या प्रयोजन? मरीचि, अङ्गिरा, भृगु, रुचि, अत्रि, कर्दम, प्रचेता, क्रतु और मनु—ये मेरे आज्ञापालक हैं। समस्त पुत्रोंमें केवल वसिष्ठ ऐसे हैं, जो सदा मेरी आज्ञाके अधीन रहते हैं। उपर्युक्त पुत्रोंके सिवा अन्य सब-के-सब अविवेकी तथा मेरी आज्ञासे बाहर हैं। ऐसी दशामें मेरा संसारकी सृष्टिसे क्या प्रयोजन है? बेटा! सुनो। मैं तुम्हें वेदोक्त मङ्गलमय वचन सुना रहा हूँ। वह वचन परम्परा-क्रमसे पालित होता आ रहा है तथा धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्षरूप चारों पुरुषार्थोंको देनेवाला है। समस्त विद्वान् धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी इच्छा रखते हैं; क्योंकि ये वेदोंमें विहित तथा विद्वानोंकी सभाओंमें प्रशंसित हैं। वेदोंमें जिसका विधान है वह धर्म है और जिसका निषेध है वह अधर्म है। ब्राह्मणको चाहिये कि वह पहले सुखपूर्वक यज्ञोपवीत धारण करके फिर वेदोंका अध्ययन करे। अध्ययन समाप्त होनेपर गुरुको दक्षिणा दे। इसके बाद उत्तम कुलमें उत्पन्न एवं परम विनीत स्वभाववाली कन्याके साथ विवाह करे। उत्तम कुलमें उत्पन्न हुई नारी साध्वी तथा पतिसेवामें तत्पर होती है। अच्छे कुलकी स्त्री कभी उद्दण्ड नहीं हो सकती। पद्मरागमणिकी खानमें काँच कैसे पैदा हो सकता है? नारद! नीच कुलमें उत्पन्न हुई नारी ही माता-पिताके दोषसे उद्दण्ड होती है। वही दुष्टा तथा सब कर्मोंमें स्वतन्त्र होती है। बेटा! सभी स्त्रियाँ दुष्ट नहीं होती हैं; क्योंकि वे लक्ष्मीकी कलाएँ हैं। जो अप्सराओंके अंशसे तथा नीच कुलमें उत्पन्न होती हैं, वे ही स्त्रियाँ कुलटा हुआ करती हैं। साध्वी स्त्री गुणहीन स्वामीकी सेवा एवं प्रशंसा करती है और कुलटा सद्गुणशाली पतिकी भी सेवा नहीं करती। उलटे उसकी निन्दा करती है। अतः साधुपुरुष प्रयत्नपूर्वक उत्तम कुलमें उत्पन्न हुई कन्याके साथ विवाह करे। उसके गर्भसे अनेक पुत्रोंको जन्म देकर वृद्धावस्थामें तपस्याके लिये जाय। आगमें निवास करना उत्तम है, साँपके मुखमें तथा काँटेपर भी रह लेना अच्छा है, परंतु मुँहसे दुर्वचन निकालनेवाली स्त्रीके साथ निवास करना कदापि अच्छा नहीं है। वह इन अग्नि, सर्प और कण्टकसे भी अधिक दुःखदायिनी होती है। बेटा! मैंने तुम्हें वेद पढ़ाया है। अब तुम मुझे यही गुरुदक्षिणा दो कि विवाह कर लो। वत्स! तुम्हारी पूर्वजन्मकी पत्नी मालती उत्तम कुलमें उत्पन्न हुई है। तुम किसी मङ्गलमय दिन और क्षणमें उसके साथ विवाह करो। वह सती तुम्हें पानेके लिये ही मनुवंशी संजयके घरमें जन्म लेकर भारतवर्षमें तपस्या कर रही है। इस समय उसका नाम रत्नमाला है। वह लक्ष्मीकी कला है। तुम उसे ग्रहण करो। भारतवर्षमें लोगोंकी तपस्याका फल व्यर्थ नहीं होता। मनुष्यको अध्ययनके पश्चात् पहले गृहस्थ होना चाहिये, फिर वानप्रस्थ। तत्पश्चात् मोक्षके निमित्त तपस्याका आश्रय लेना चाहिये। वेदमें यही क्रम सुना गया है। श्रुतिमें यह भी सुना गया है कि वैष्णवोंके लिये श्रीहरिकी पूजा ही तपस्या है। तुम वैष्णव हो। अतः घरमें रहो और श्रीकृष्ण-चरणोंकी अर्चना करो। बेटा! जिसके भीतर और बाहर

श्रीहरि ही विद्यमान हैं, उसे तपस्यासे क्या लेना है? जिसके बाहर और भीतर श्रीहरि नहीं हैं अर्थात् जो श्रीहरिको अपने बाहर और भीतर व्याप्त नहीं देखता, उसे भी व्यर्थकी तपस्यासे क्या लेना-देना है? तपस्याके द्वारा श्रीहरिकी ही आराधना की जाती है, दूसरा कोई आराध्य नहीं है। बेटा! जहाँ-तहाँ कहीं भी रहकर की हुई श्रीकृष्णकी सेवा सर्वोत्तम तप है। अतः तुम मेरे कहनेसे ही घरमें रहकर श्रीहरिका भजन करो। मुनिश्रेष्ठ! गृहस्थ बनो; क्योंकि गृहस्थोंको सदा ही सुख मिलता है। पत्नीके परिग्रहका प्रयोजन है पुत्रकी प्राप्ति; क्योंकि पुत्र सैकड़ों प्राणवल्लभा पत्नियोंसे भी अधिक प्रिय होता है। पुत्रसे बढ़कर कोई बन्धु नहीं है तथा पुत्रसे बढ़कर कोई प्रिय नहीं है। सबसे जीतनेकी इच्छा करे। एकमात्र पुत्रसे ही पराजयकी कामना करे। कोई भी प्रिय पदार्थ अपने लिये नहीं (पुत्रके लिये) रखा जाता है; इसलिये भी पुत्र प्रिय होता है। अतः प्रियतम पुत्रको अपना श्रेष्ठ धन सौंप देना चाहिये।

शौनक! ऐसा कहकर ब्रह्माजी चुप हो गये। तब ज्ञानिशिरोमणि नारदने पितासे यह बात कही।

नारदजी बोले—तात! जो स्वयं सब कुछ जानकर अपने पुत्रको कुमार्गमें लगाता है, वह पिता दयालु कैसे माना जा सकता है? ब्रह्मन्! सारा संसार पानीके बुलबुलेके समान नश्वर है। जैसे जलकी रेखा मिथ्या होती है, उसी प्रकार तीनों लोक मिथ्या हैं। जिसका मन श्रीहरिकी दासता छोड़कर विषयके लिये चञ्चल रहता है, उसका दुर्लभ मानव तन व्यर्थ हो गया। भवसागरमें कौन किसकी प्रिया है और कौन किसका पुत्र या बन्धु है? कर्ममयी तरङ्गोंके उठनेसे इन सबका संयोग हो जाता है और उन तरङ्गोंके शान्त होनेपर ये एक-दूसरेसे बिछुड़ जाते हैं। जो सत्कर्म करवाता है, वही मित्र है, वही पिता और गुरु है। जो दुर्बुद्धि उत्पन्न करता

है, वह तो शत्रु है। उसे पिता कैसे कहा जा सकता है? तात! इस प्रकार मैंने शास्त्रके अनुसार वेदका बीज (सारतत्त्व) बताया। यद्यपि यह ध्रुव सत्य है, तथापि मुझे आपकी आज्ञाका पालन करना चाहिये। भगवन्! पहले मैं नर-नारायणके आश्रमपर जाऊँगा। वहाँ नारायणकी वार्ता सुननेके पश्चात् पत्नी-परिग्रह करूँगा।

ऐसा कहकर नारद मुनि पिताके सामने चुप हो रहे, उसी क्षण उनके ऊपर फूलोंकी वर्षा होने लगी। पिताके सामने क्षणभर खड़े रहकर मुनिवर नारदने फिर यह मङ्गलदायक वचन कहा।

श्रीनारद बोले—पिताजी! पहले मुझे कृष्णमन्त्रका उपदेश दीजिये, जो मेरे मनको अभीष्ट है। श्रीकृष्णमन्त्र-सम्बन्धी जो ज्ञान है तथा जिसमें उनके गुणोंका वर्णन है, वह सब भी मुझे बताइये। इसके बाद आपकी प्रसन्नताके लिये मैं दार-संग्रह करूँगा; क्योंकि मनकी इच्छा पूर्ण हो जानेपर ही मनुष्यको कोई काम करनेमें सुख मिलता है।

नारदकी यह बात सुनकर ज्ञानवेत्ताओंमें श्रेष्ठ कमलजन्मा ब्रह्माजी बड़े प्रसन्न हुए और अपने पुत्रसे फिर इस प्रकार बोले।

ब्रह्माजीने कहा—वत्स! भगवान् शंकर तुम्हारे पूर्वजन्मके गुरु हैं और हमारे भी पुरातन गुरु हैं। अतः तुम उन्हीं ज्ञानियोंके गुरु कल्याणदाता शान्तस्वरूप शिवके पास जाओ। वहीं उन पुरातन गुरुसे भगवन्मन्त्रका ज्ञान प्राप्त करके नारायणकी कथा-वार्ता सुनो और शीघ्र ही मेरे घर लौट आओ। शौनक! ऐसा कहकर तीनों लोकोंका धारण-पोषण करनेवाले ब्रह्माजी चुप हो गये और नारदमुनि पिताको भक्तिभावसे प्रणाम करके शिवलोकको चले गये। (अध्याय २४)

नारदजीको भगवान् शिवका दर्शन, शिवद्वारा नारदजीका सत्कार तथा उनकी मनोवाञ्छापूर्तिके लिये आश्वासन

सौति कहते हैं—शौनक! तदनन्तर विप्रवर नारद क्षणभरमें बड़ी प्रसन्नताके साथ शिवके मनोहर धाममें जा पहुँचे। भगवान् शिवका वह अभीष्ट लोक ध्रुवसे एक लाख योजन ऊपर था। त्रिशूलधारी शिवने दिव्य रत्नोंद्वारा उसका निर्माण किया है। आधारशून्य आकाशमें योगबलसे शम्भुद्वारा धारण किया गया वह विचित्र लोक भाँति-भाँतिके दिव्य भवनोंसे सुशोभित है तथा दिन-रात तेजसे उद्भासित होता रहता है। पवित्र अन्तःकरणवाले श्रेष्ठ साधक तथा मुनीन्द्रशिरोमणि महात्माजन ही उस लोकका दर्शन कर पाते हैं। मुने! वहाँ सूर्य और चन्द्रमाकी किरणें नहीं पहुँच पातीं। परकोटोंके रूपमें प्रकट हुए अत्यन्त ऊँचे, बहुत बढ़े हुए तथा ज्वालाओंसे जगमगाते हुए असंख्य पावक उस लोकको चारों ओरसे घेरकर स्थित हैं। उस श्रेष्ठ धामका विस्तार एक लाख योजन है। उसमें श्रेष्ठ रत्नोंके बने हुए तीन हजार गृह हैं। हीरेके सार-तत्त्वसे बने हुए भाँति-भाँतिके चित्र-विचित्र मनोहर भवन उसकी शोभा बढ़ाते हैं। वहाँ माणिक्य तथा मुक्तामणिके दर्पण हैं। विश्वकर्माने उस लोकको सपनेमें भी नहीं देखा होगा। एकमात्र शिवसेवी महात्माजन ही उसमें कल्पपर्यन्त निरन्तर वास करते हैं। वह शिवलोक करोड़ों-करोड़ों सिद्धों तथा शिव-पार्षदोंसे युक्त है। वहाँ लाखों विकट भैरव निवास करते हैं। सैकड़ों लाख क्षेत्र उसे घेरे हुए हैं। सुन्दर फूलोंसे भरे हुए मन्दार आदि देववृक्षोंसे वह सदा आवेष्टित है। सुन्दर कामधेनुएँ उस धामकी उसी तरह शोभा बढ़ाती हैं, जैसे सैकड़ों बलाकाएँ आकाशकी। उस लोकको देखकर नारद मुनि मन-ही-मन बड़े विस्मित हुए और सोचने लगे—'जहाँ ज्ञानियों तथा योगियोंके गुरु निवास करते हैं, वहाँ ऐसी विचित्रताका होना क्या आश्चर्य है? यह सृष्टिलोक त्रिलोकीसे अत्यन्त विलक्षण है और भय, मृत्यु, रोग, पीड़ा तथा जरावस्थाको हर लेनेवाला है।

नारदजीने देखा, दूर सभा-मण्डपके मध्य-भागमें शान्तस्वरूप, कल्याणदाता एवं मनोहर शिव विराजमान हैं। उनके पाँच मुख पाँच चन्द्रमाओंके समान आह्लाददायक जान पड़ते हैं। प्रत्येक मुखमें प्रफुल्ल कमलके समान तीन-तीन नेत्र हैं। उन्होंने मस्तकपर गङ्गाजीको धारण कर रखा है तथा उनके भालदेशमें निर्मल चन्द्रमाका मुकुट शोभा पा रहा है। तपाये हुए सुवर्णके समान कान्तिमती पीली जटा धारण करनेवाले दिगम्बर भगवान् शिव उस समय आकाशगङ्गामें उत्पन्न कमलोंके बीज (पद्माक्ष)-की मालासे सानन्द 'श्रीकृष्ण' नामका जप कर रहे थे। उनकी अङ्गकान्ति गौर वर्णकी है, वे अनन्त और अविनाशी हैं। उनके कण्ठमें सुन्दर नील चिह्न शोभा पाता है। वे नागराजके हारसे अलंकृत हैं। बड़े-बड़े योगीन्द्र, सिद्धेन्द्र और मुनीन्द्र उनके

चरणोंकी वन्दना करते हैं। वे सिद्धेश्वर हैं, सिद्धिविधानके कारण हैं, मृत्युञ्जय हैं तथा काल और यमका भी अन्त करनेवाले हैं। उनका मुख प्रसन्नतासूचक हास्यसे अत्यन्त मनोहर जान पड़ता है। वे सम्पूर्ण आश्रितोंको कल्याण तथा अभीष्ट वर प्रदान करनेवाले हैं। सदा शीघ्र ही संतुष्ट होनेवाले, भवरोगसे रहित, भक्तजनोंके प्रिय तथा भक्तोंके एकमात्र बन्धु हैं।

दूरसे देखनेके पश्चात् निकट जाकर मुनिने भगवान् शूलपाणिको मस्तक झुकाकर प्रणाम किया। उस समय मुनिके शरीरमें रोमाञ्च हो आया था। वे तीन तारवाली वीणा बजाते हुए कलहंसके समान मधुर कण्ठसे पुनः श्रीकृष्णका गुणगान करने लगे। ब्रह्माजीके पुत्र और वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ मुनीन्द्रशिरोमणि नारदको आया देख भगवान् शंकर योगीन्द्र, सिद्धेन्द्र और महर्षियोंके साथ मुस्कराते हुए सिंहासनसे वेगपूर्वक उठकर खड़े हो गये। फिर उन्होंने मुनिको बड़े वेगसे पकड़कर हृदयसे लगा लिया और आशीर्वाद तथा आसन आदि दिये। साथ ही उन तपोधनसे आनेका प्रयोजन और कुशल-मङ्गल पूछा। इसके बाद भगवान् शम्भु उत्तम रत्नोंके बने हुए श्रेष्ठ एवं सुन्दर सिंहासनपर अपने प्रमुख पार्षदोंके साथ बैठे। किंतु ब्रह्माजीके पुत्र नारद नहीं बैठे। उन्होंने भक्तिभावसे प्रभुको प्रणाम करके दोनों हाथ जोड़कर उनकी स्तुति की। गन्धर्वराजके द्वारा किये गये शुभदायक वेदोक्त स्तोत्रसे स्तुति करके पुनः प्रणाम करनेके अनन्तर भगवान् शिवकी आज्ञा ले नारदजी उनके वाम-भागमें बैठे। वहीं उन्होंने जगत्की वाञ्छा पूर्ण करनेवाले भगवान् शिवसे अपनी हार्दिक अभिलाषा बतायी। मुनिका वह वचन सुनकर कृपानिधान शंकरने तुरंत प्रतिज्ञापूर्वक कहा—'बहुत अच्छा, तुम्हारी अभिलाषा पूर्ण होगी।' (अध्याय २५)

ब्राह्मणोंके आह्निक आचार तथा भगवान्के पूजनकी विधिका वर्णन

सौति कहते हैं—शौनकजी! देवर्षि नारदने भगवान् शंकरसे श्रीहरिके स्तोत्र, कवच, मन्त्र, उत्तम पूजाविधान, ध्यान तथा उनके तत्त्वज्ञानकी याचना की। महेश्वरने उन्हें स्तोत्र, कवच, मन्त्र, ध्यान, पूजाविधि तथा उनके पूर्वजन्म-सम्बन्धी ज्ञानका उपदेश दिया। वह सब कुछ पाकर मुनिश्रेष्ठ नारदका मनोरथ पूर्ण हो गया। उन्होंने अपने शरणागतवत्सल गुरु भगवान् शिवको भक्तिभावसे प्रणाम किया और इस प्रकार कहा।

नारदजी बोले—वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ प्रभो! आप ब्राह्मणोंके आह्निक आचार (दिनचर्या या नित्य-कर्म)-का वर्णन कीजिये, जिससे प्रतिदिन स्वधर्मपालन हो सके।

श्रीमहेश्वरने कहा—प्रतिदिन ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर रात्रिमें पहने हुए कपड़ेको बदल दे और अपने ब्रह्मरन्ध्रमें स्थित सूक्ष्म, निर्मल, ग्लानिरहित सहस्रदल-कमलपर विराजमान गुरुदेवका चिन्तन करे। ध्यानमें यह देखे कि ब्रह्मरन्ध्रवर्ती सहस्रदल-कमलपर गुरुजी प्रसन्नतापूर्वक बैठे हैं, मन्द-मन्द मुस्करा रहे हैं, व्याख्याकी मुद्रामें उनका हाथ उठा हुआ है और शिष्यके प्रति उनके हृदयमें बड़ा स्नेह है। मुखपर प्रसन्नता छा रही है। वे शान्त तथा निरन्तर संतुष्ट रहनेवाले हैं और साक्षात् परब्रह्मस्वरूप हैं। सदा इसी प्रकार उनका चिन्तन करना चाहिये। इस तरह ध्यान करके मन-ही-मन गुरुकी आराधना करे। तदनन्तर निर्मल, श्वेत, सहस्रदलभूषित, विस्तृत हृदयकमलपर विराजमान इष्टदेवका चिन्तन करे। जिस देवताका जैसा ध्यान और जो रूप बताया गया है, वैसा ही चिन्तन करना चाहिये। गुरुकी आज्ञा ले समयोचित कर्तव्यका पालन करना चाहिये। क्रम यह है कि पहले गुरुका ध्यान करके उन्हें प्रणाम करे। फिर उनकी विधिवत् पूजा

करनेके पश्चात् उनकी आज्ञा ले इष्टदेवका ध्यान एवं पूजन करे। गुरु ही देवताके स्वरूपका दर्शन कराते हैं। वे ही इष्टदेवके मन्त्र, पूजाविधि और जपका उपदेश देते हैं। गुरुने इष्टदेवको देखा है; किंतु इष्टदेवने गुरुको नहीं देखा है। इसलिये गुरु इष्टदेवसे भी बढ़कर हैं। गुरु ब्रह्मा हैं, गुरु विष्णु हैं, गुरु महेश्वरदेव हैं, गुरु आद्या प्रकृति—ईश्वरी (दुर्गा देवी) हैं, गुरु चन्द्रमा, अग्नि और सूर्य हैं, गुरु ही वायु और वरुण हैं, गुरु ही माता-पिता और सुहृद् हैं तथा गुरु ही परब्रह्म परमात्मा हैं। गुरुसे बढ़कर दूसरा कोई पूजनीय नहीं है। इष्टदेवके रुष्ट होनेपर गुरु शिष्य अथवा साधककी रक्षा करनेमें समर्थ हैं। परंतु गुरुदेवके रुष्ट होनेपर सम्पूर्ण देवता मिलकर भी उस साधककी रक्षा करनेमें समर्थ नहीं हैं। जिसपर गुरु सदा संतुष्ट हैं, उसे पग-पगपर विजय प्राप्त होती है और जिसपर गुरुदेव रुष्ट हैं, उसके लिये सदा सर्वनाशकी ही सम्भावना रहती है। जो मूढ़ भ्रमवश गुरुकी पूजा न करके इष्टदेवका पूजन करता है, वह सैकड़ों ब्रह्महत्याओंके पापका भागी होता है, इसमें संशय नहीं है। सामवेदमें साक्षात् भगवान् श्रीहरिने भी ऐसी बात कही है। इसलिये गुरु इष्टदेवसे भी बढ़कर परम पूजनीय हैं।

मुने! इस प्रकार गुरुदेव तथा इष्टदेवका ध्यान एवं स्तवन करके साधक वेदमें बताये हुए स्थानपर पहुँचकर प्रसन्नतापूर्वक मल और मूत्रका त्याग करे। जल, जलके निकटका स्थान, बिलयुक्त भूमि, प्राणियोंके निवासके निकट, देवालयके समीप, वृक्षकी जड़के पास, मार्ग, हलसे जोती हुई भूमि, खेतीसे भरे हुए खेत, गोशाला, नदी, कन्दराके भीतरका स्थान, फुलवाड़ी, कीचड़युक्त अथवा दलदलकी भूमि, गाँव आदिके भीतरकी भूमि, लोगोंके घरके आसपासका स्थान, मेख या खम्भेके पास, पुल, सरकंडोंके वन, श्मशानभूमि, अग्निके समीप, क्रीडास्थल (खेल-कूदके मैदान), विशाल वन, मचानके नीचेका स्थान, पेड़की छायासे युक्त स्थान, जहाँ भूमिके भीतर प्राणी रहते हों वह स्थान, जहाँ ढेर-के-ढेर पत्ते जमा हों वह भूमि, जहाँ घनी दूब उगी हो अथवा कुश जमे हों वह स्थान, बाँबी, जहाँ वृक्ष लगाये गये हों वहाँकी भूमि तथा जो किसी विशेष कार्यके लिये झाड़-बुहारकर साफ की गयी हो, वह भूमि—इन सबको छोड़कर सूर्यके तापसे रहित स्थानमें गड्ढा खोद उसीमें मल-मूत्रका त्याग करना चाहिये।

दिनमें उत्तराभिमुख होकर मल-मूत्रका त्याग करे; रातमें पश्चिमकी ओर मुँह करके और संध्याकालमें दक्षिणकी ओर मुँह रखते हुए मलोत्सर्ग तथा मूत्रोत्सर्ग करना उचित है। मौन रहकर, जोर-जोरसे साँस न लेते हुए मलत्याग करे, जिससे उसकी दुर्गन्ध नाकमें न जाय। मलत्यागके पश्चात् उस मलको मिट्टी डालकर ढक दे। तदनन्तर बुद्धिमान् पुरुष गुदा आदि अङ्गोंको शुद्ध करे। पहले ढेले या मिट्टीसे गुदा आदिकी शुद्धि करे। तत्पश्चात् उसे जलसे धोकर शुद्ध करे। मृत्तिकायुक्त जो जल शौचके उपयोगमें आता है, उसका परिमाण सुनो। मूत्रत्यागके पश्चात् लिङ्गमें एक बार मिट्टी लगाये और धोये। फिर बायें हाथमें चार बार मिट्टी लगाकर धोये। तत्पश्चात् दोनों हाथोंमें दो बार मिट्टी लगाकर धोना चाहिये, यह मूत्र-शौच कहा गया। यदि मैथुनके अनन्तर मूत्र-शौच करना हो तो उसमें मिट्टी लगाने और धोनेकी संख्या दुगुनी कर दे अथवा मैथुनके अनन्तरका शौच मूत्र-शौचकी अपेक्षा चौगुना होना चाहिये। मलत्यागके पश्चात् लिङ्गमें एक बार, गुदामें तीन बार, बायें हाथमें दस बार तथा दोनों हाथोंमें सात बार मिट्टी देनी चाहिये। छठे बार मिट्टी लगाकर धोनेसे पैरोंकी शुद्धि होती है। गृहस्थ ब्राह्मणोंके लिये मलत्यागके अनन्तर यही शौच बताया गया है। विधवाओंके लिये इस शौचका परिमाण दुगुना बताया गया है।

यतियों, वैष्णवों, ब्रह्मर्षियों एवं ब्रह्मचारियोंके लिये गृहस्थोंकी अपेक्षा चौगुने शौचका विधान किया गया है। उपनयनरहित द्विज, शूद्र तथा स्त्रीके लिये उतने ही शौचका विधान है, जितनेसे उन-उन अङ्गोंमें लगे हुए मलके लेप और दुर्गन्ध मिट जायँ। क्षत्रिय और वैश्यके लिये भी गृहस्थ ब्राह्मणोंके समान शौचका विधान है। वैष्णव आदि मुनियोंके लिये दुगुना शौच कहा गया है। शुद्धिकी इच्छा रखनेवाले मनुष्यको शौचके उपर्युक्त नियममें न्यूनता या अधिकता नहीं करनी चाहिये; क्योंकि विहित नियमका उल्लङ्घन करनेपर प्रायश्चित्तका भागी होना पड़ता है।

नारद! अब तुम मुझसे शौच तथा उसके नियमके विषयमें सावधान होकर सुनो! मिट्टीसे शुद्धि करनेपर ही वास्तविक शुद्धि होती है। ब्राह्मण भी इस नियमका उल्लङ्घन करे तो वह अशुद्ध ही है। बाँबीकी मिट्टी, चूहोंकी खोदी हुई मिट्टी और पानीके भीतरकी मिट्टी भी शौचके उपयोगमें न लाये। शौचसे बची हुई मिट्टी, घरकी दीवारसे ली हुई मिट्टी तथा लीपने-पोतनेके काममें लायी हुई मिट्टी भी शौचके लिये त्याज्य है। जिसके भीतर प्राणी रहते हों, जहाँ पेड़से गिरे हुए पत्तोंके ढेर लगे हों तथा जहाँकी भूमि हलसे जोती गयी हो, वहाँकी भी मिट्टी न ले। कुश और दूर्वाके जड़से निकाली गयी, पीपलकी जड़के निकटसे लायी गयी तथा शयनकी वेदीसे निकाली गयी मिट्टीको भी शौचके काममें न लाये। चौराहेकी, गोशालाकी, गायकी खुरीकी, जहाँ खेती लहलहा रही हो, उस खेतकी तथा उद्यानकी मिट्टीको भी त्याग दे।

ब्राह्मण नहाया हो अथवा नहीं, उपर्युक्त शौचाचारके पालनमात्रसे शुद्ध हो जाता है तथा जो शौचसे हीन है, वह नित्य अपवित्र एवं समस्त कर्मोंके अयोग्य है। विद्वान् ब्राह्मण इस शौचाचारका पालन करके मुँह धोये। पहले सोलह बार कुल्ला करके मुख शुद्ध करनेके पश्चात् दँतुवनसे दाँतकी सफाई करे। फिर सोलह बार कुल्ला करके मुँह शुद्ध करे। नारद! दाँत माँजनेके लिये जो काठकी लकड़ी ली जाती है, उसके विषयमें भी कुछ नियम है, उसे सुनो। सामवेदमें श्रीहरिने आह्निक प्रकरणमें इसका निरूपण किया है। अपामार्ग (चिड़चिड़ा या ऊँगा), सिन्धुवार (सँभालू या निर्गुण्डी), आम, करवीर (कनेर), खैर, सिरस, जाति (जायफल), पुन्नाग (नागकेसर या कायफल), शाल (साखू), अशोक, अर्जुन, दूधवाला वृक्ष, कदम्ब, जामुन, मौलसिरी, उड़ (अढ़उल) और पलाश—ये वृक्ष दँतुवनके लिये उत्तम माने गये हैं। बेर, देवदारु, मन्दार (आक), सेमर, कँटीले वृक्ष तथा लता आदिको त्याग देना चाहिये। पीपल, प्रियाल (पियाल), तिन्तिडीक (इमली), ताड़, खजूर और नारियल आदि वृक्ष दँतुवनके उपयोगमें वर्जित हैं। जिसने दाँतोंकी शुद्धि नहीं की, वह सब प्रकारके शौचसे रहित है। शौचहीन पुरुष सदा अपवित्र होता है। वह समस्त कर्मोंके लिये अयोग्य है। शौचाचारका पालन करके शुद्ध हुआ ब्राह्मण स्नानके पश्चात् दो धुले हुए वस्त्र धारण करके पैर धो आचमनके पश्चात् प्रातः-कालकी संध्या करे।

इस प्रकार जो कुलीन ब्राह्मण तीनों संध्याओंके समय संध्योपासना करता है, वह समस्त तीर्थोंमें स्नानके पुण्यका भागी होता है। जो त्रिकाल संध्या नहीं करता, वह अपवित्र है। समस्त कर्मोंके अयोग्य है। वह दिनमें जो काम करता है, उसके फलका भागी नहीं होता। जो प्रातः और सायं संध्याका अनुष्ठान नहीं करता, वह शूद्रके समान है। उसको समस्त ब्राह्मणोचित कर्मसे बाहर निकाल देना चाहिये।* प्रातः, मध्याह्न और सायं-

* नोपतिष्ठति यः पूर्वां नोपास्ते यस्तु पश्चिमाम्। स शूद्रवद्बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विजकर्मणः॥
(ब्रह्मखण्ड २६। ५३)

संध्याका परित्याग करके द्विज प्रतिदिन ब्रह्महत्या और आत्महत्याके पापका भागी होता है। जो एकादशीके व्रत और संध्योपासनासे हीन है, वह द्विज शूद्रजातिकी स्त्रीसे सम्बन्ध रखनेवाले पापीकी भाँति एक कल्पतक कालसूत्र नामक नरकमें निवास करता है। प्रातःकालकी संध्योपासना करके श्रेष्ठ साधक गुरु, इष्टदेव, सूर्य, ब्रह्मा, महादेव, विष्णु, माया, लक्ष्मी और सरस्वतीको प्रणाम करे। तत्पश्चात् गुड़, घी, दर्पण, मधु और सुवर्णका स्पर्श करके समयानुसार स्नान आदि करे। जब पोखरी या बावड़ीमें स्नान करे, तब धर्मात्मा एवं विद्वान् पुरुष पहले उसमेंसे पाँच पिण्ड मिट्टी निकालकर बाहर फेंक दे। नदी, नद, गुफा अथवा तीर्थमें स्नान करना चाहिये। पहले जलमें गोता लगाकर पुनः स्नानके लिये संकल्प करे। वैष्णव महात्माओंका स्नानविषयक संकल्प श्रीकृष्णकी प्रीतिके लिये होता है और गृहस्थोंका वह संकल्प किये हुए पापोंके नाशके उद्देश्यसे होता है। ब्राह्मण संकल्प करके अपने शरीरमें मिट्टी पोते। उस समय निम्नांकित वेद-मन्त्रका पाठ करे। मिट्टी लगानेका उद्देश्य शरीरकी शुद्धि ही है।

शरीरमें मृत्तिका-लेपनका मन्त्र

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे।
मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्॥

'वसुन्धरे! तुम्हारे ऊपर अश्व चलते हैं, रथ दौड़ते हैं और भगवान् विष्णुने अपने चरणोंसे तुम्हें आक्रान्त किया है (अथवा अवतारकालमें वे तुम्हारे ऊपर लीलाविहार करते हैं)। मृत्तिकामयी देवि! मैंने जो भी दुष्कर्म किया है, मेरा वह सारा पाप तुम हर लो।'

उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना।
आरुह्य मम गात्राणि सर्वं पापं प्रमोचय॥
पुण्यं देहि महाभागे स्नानानुज्ञां कुरुष्व माम्।

'सैकड़ों भुजाओंसे सुशोभित वराहरूपधारी श्रीकृष्णने एकार्णवके जलसे तुम्हें ऊपर उठाया है। तुम मेरे अङ्गोंपर आरूढ़ हो समस्त पापोंको दूर कर दो। महाभागे! पुण्य प्रदान करो और मुझे स्नान करनेके लिये आज्ञा दो।'

तपोधन! ऐसा कहकर नाभितक जलमें प्रवेश करे और मन्त्रोच्चारणपूर्वक चार हाथ लम्बा-चौड़ा सुन्दर मण्डल बनाकर उसमें हाथ दे तीर्थोंका आवाहन करे। जो-जो तीर्थ हैं, उन सबका वर्णन कर रहा हूँ।

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् संनिधिं कुरु॥

'हे गङ्गे! यमुने! गोदावरि! सरस्वति! नर्मदे! सिन्धु! और कावेरि! तुम सब लोग इस जलमें निवास करो' (इस प्रकार आवाहन करनेसे सब तीर्थ जलमें आ जाते हैं)। तदनन्तर नलिनी, नन्दिनी, सीता, मालिनी, महापथा, भगवान् विष्णुके पादार्घ्यसे प्रकट हुई त्रिपथगामिनी गङ्गा, पद्मावती, भोगवती, स्वर्णरेखा, कौशिकी, दक्षा, पृथ्वी, सुभगा, विश्वकाया, शिवामृता, विद्याधरी, सुप्रसन्ना, लोकप्रसाधिनी, क्षेमा, वैष्णवी, शान्ता, शान्तिदा, गोमती, सती, सावित्री, तुलसी, दुर्गा, महालक्ष्मी, सरस्वती, श्रीकृष्णप्राणाधिका राधिका, लोपामुद्रा, दिति, रति, अहल्या, अदिति, संज्ञा, स्वधा, स्वाहा, अरुन्धती, शतरूपा तथा देवहूति इत्यादि देवियोंका शुद्ध बुद्धिवाला बुद्धिमान् पुरुष स्मरण करे। इनके स्मरणसे स्नान कर अथवा बिना स्नान किये ही मनुष्य परम पवित्र हो जाता है। इसके बाद विद्वान् पुरुष दोनों भुजाओंके मूलभागमें, ललाटमें, कण्ठदेशमें और वक्षःस्थलमें तिलक लगाये। यदि ललाटमें तिलक न हो तो स्नान, दान, तप, होम, देवयज्ञ तथा पितृयज्ञ—सब कुछ निष्फल हो जाता है। ब्राह्मण स्नानके पश्चात् तिलक करके संध्या और तर्पण करे। फिर भक्तिभावसे देवताओंको नमस्कार करके प्रसन्नतापूर्वक अपने घरको जाय। वहाँ यत्नपूर्वक पैर धोकर धुले हुए दो वस्त्र धारण

करे। तत्पश्चात् बुद्धिमान् पुरुष मन्दिरमें जाय। यह साक्षात् श्रीहरिका ही कथन है। जो स्नान करके पैर धोये बिना ही मन्दिरमें घुस जाता है, उसका स्नान, जप और होम आदि सब नष्ट हो जाता है। जो गृहस्थ पुरुष पानीसे भींगे या तेलसे तर वस्त्र पहनकर घरमें प्रवेश करता है, उसके ऊपर लक्ष्मी रुष्ट हो जाती हैं और उसे अत्यन्त भयंकर शाप देकर उसके घरसे निकल जाती हैं। यदि ब्राह्मण पिण्डलियोंसे ऊपरतक पैरोंको धोता है तो वह जबतक गङ्गाजीका दर्शन न कर ले, तबतक चाण्डाल बना रहता है।

ब्रह्मन्! पवित्र साधक आसनपर बैठकर आचमन करे। फिर संयमपूर्वक रहकर भक्तिभावसे सम्पन्न हो वेदोक्त विधिसे इष्टदेवकी पूजा करे। शालग्राम-शिलामें, मणिमें, मन्त्रमें, प्रतिमामें, जलमें, थलमें, गायकी पीठपर अथवा गुरु एवं ब्राह्मणमें श्रीहरिकी पूजा की जाय तो वह उत्तम मानी जाती है। जो अपने सिरपर शालग्रामका चरणोदक छिड़कता है, उसने मानो सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान कर लिया और सम्पूर्ण यज्ञोंकी दीक्षा ग्रहण कर ली। जो मनुष्य प्रतिदिन भक्तिभावसे शालग्राम-शिलाका जल (चरणामृत) पान करता है, वह जीवन्मुक्त होता है और अन्तमें श्रीकृष्णधामको जाता है। नारद! जहाँ शालग्राम-शिलाचक्र विद्यमान है, वहाँ निश्चय ही चक्रसहित भगवान् विष्णु तथा सम्पूर्ण तीर्थ विराजमान हैं। वहाँ जो देहधारी जानकर, अनजानमें अथवा भाग्यवश मर जाता है, वह दिव्य रत्नोंद्वारा निर्मित विमानपर बैठकर श्रीहरिके धामको जाता है। कौन ऐसा साधुपुरुष है, जो शालग्राम-शिलाके सिवा और कहीं श्रीहरिका पूजन करेगा; क्योंकि शालग्राम-शिलामें श्रीहरिकी पूजा करनेपर परिपूर्ण फलकी प्राप्ति होती है।

पूजाके आधार (प्रतीक)-का वर्णन किया गया। अब पूजनकी विधि सुनो। श्रीहरिकी पूजा बहुसंख्यक सज्जनोंद्वारा सम्मानित है। अतः शास्त्रके अनुसार उसका वर्णन करता हूँ। कोई-कोई वैष्णव पुरुष श्रीहरिको प्रतिदिन भक्तिभावसे सोलह सुन्दर तथा पवित्र उपचार अर्पित करते हैं। कोई बारह द्रव्योंका उपचार और कोई पाँच वस्तुओंका उपचार चढ़ाते हैं। जिनकी जैसी शक्ति हो, उसके अनुसार पूजन करें। पूजाकी जड़ है—भगवान्‌के प्रति भक्ति। आसन, वस्त्र, पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, पुष्प, चन्दन, धूप, दीप, उत्तम नैवेद्य, गन्ध, माल्य, ललित एवं विलक्षण शय्या, जल, अन्न और ताम्बूल—ये सामान्यतः अर्पित करने योग्य सोलह उपचार हैं। गन्ध, अन्न, शय्या और ताम्बूल—इनको छोड़कर शेष द्रव्य बारह उपचार हैं। पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, पुष्प और नैवेद्य—ये पाँच उपचार हैं। श्रेष्ठतम साधक मूलमन्त्रका उच्चारण करके ये सभी उपचार अर्पित करे। गुरुके उपदेशसे प्राप्त हुआ मूलमन्त्र समस्त कर्मोंमें उत्तम माना गया है। पहले भूतशुद्धि करके फिर प्राणायाम करे। तत्पश्चात् अङ्गन्यास, प्रत्यङ्गन्यास, मन्त्रन्यास तथा वर्णन्यासका सम्पादन करके अर्घ्यपात्र प्रस्तुत करे। पहले त्रिकोणाकार मण्डल बनाकर उसके भीतर भगवान् कूर्म (कच्छप)-की पूजा करे। इसके बाद द्विज शङ्खमें जल भरकर उसे वहीं स्थापित करे। फिर उस जलकी विधिवत् पूजा करके उसमें तीर्थोंका आवाहन करे। तदनन्तर उस जलसे पूजाके सभी उपचारोंका प्रक्षालन करे। इसके बाद फूल लेकर पवित्र साधक योगासनसे बैठे और गुरुके बताये हुए ध्यानके अनुसार अनन्यभावसे भगवान् श्रीकृष्णका चिन्तन करे। इस तरह ध्यान करके साधक मूलमन्त्रका उच्चारण करते हुए पाद्य आदि सब उपचार बारी-बारीसे आराध्यदेवको अर्पित करे। तन्त्रशास्त्रमें बताये हुए अङ्ग-प्रत्यङ्ग देवताओंके साथ श्रीहरिकी पूजा करे। मूलमन्त्रका यथाशक्ति जप करके इष्टदेवके मन्त्रका विसर्जन करे। फिर भाँति-भाँतिके उपहार निवेदित करके स्तुतिके पश्चात् कवचका पाठ करे।

तत्पश्चात् विसर्जन करके पृथ्वीपर माथा टेककर प्रणाम करे। इस तरह देवपूजा सम्पन्न करके बुद्धिमान् एवं विद्वान् पुरुष श्रौत तथा स्मार्त अग्निसे युक्त यज्ञका अनुष्ठान करे। मुने! यज्ञके पश्चात् दिक्पाल आदिको बलि देनी चाहिये। फिर यथाशक्ति नित्य-श्राद्ध और अपने वैभवके अनुसार दान करे। यह सब करके पुण्यात्मा साधक आवश्यक आहार-विहारमें प्रवृत्त हो। श्रुतिमें पूजनका यही क्रम सुना गया है। नारद! इस प्रकार मैंने तुमसे सम्पूर्ण वेदोक्त उत्तम सूत्रका तथा ब्राह्मणोंके आह्निक कर्मका वर्णन किया। अब और क्या सुनना चाहते हो? (अध्याय २६)

ब्राह्मणोंके लिये भक्ष्याभक्ष्य तथा कर्तव्याकर्तव्यका निरूपण

नारदजीने पूछा—प्रभो! गृहस्थ ब्राह्मणों, यतियों, वैष्णवों, विधवा स्त्रियों और ब्रह्मचारियोंके लिये क्या भक्ष्य है और क्या अभक्ष्य? क्या कर्तव्य है और क्या अकर्तव्य? अथवा उनके लिये क्या भोग्य है और क्या अभोग्य? आप सर्वज्ञ, सर्वेश्वर और सबके कारण हैं, अतः मेरी पूछी हुई सब बातें बताइये।

महादेवजीने कहा—मुने! कोई तपस्वी ब्राह्मण चिरकालतक मौन रहकर बिना आहारके ही रहता है। कोई वायु पीकर रह जाता है और कोई फलाहारी होता है। कोई गृहस्थ ब्राह्मण अपनी स्त्रीके साथ रहकर यथोचित समयपर अन्न ग्रहण करता है। ब्रह्मन्! जिनकी जैसी इच्छा होती है, वे उसीके अनुसार आहार करते हैं; क्योंकि रुचियोंका स्वरूप भिन्न-भिन्न प्रकारका होता है। गृहस्थ ब्राह्मणोंके लिये हविष्यान्न-भोजन सदा उत्तम माना गया है। भगवान् नारायणका उच्छिष्ट प्रसाद ही उनके लिये अभीष्ट भोजन है। जो भगवान्‌को निवेदित नहीं हुआ है, वह अभक्षणीय है। जो भगवान् विष्णुको अर्पित नहीं किया गया, वह अन्न विष्ठा और जल मूत्रके समान है। एकादशीके दिन सब प्रकारका अन्न-जल मल-मूत्रके तुल्य कहा गया है। जो ब्राह्मण एकादशीके दिन स्वेच्छासे अन्न खाता है, वह पाप खाता है, इसमें संशय नहीं है। नारद! एकादशीका दिन प्राप्त होनेपर गृहस्थ ब्राह्मणोंको कदापि अन्न नहीं खाना चाहिये, नहीं खाना चाहिये, नहीं खाना चाहिये। जन्माष्टमीके दिन, रामनवमीके दिन तथा शिवरात्रिके दिन जो अन्न खाता है, वह भी दूने पातकका भागी होता है। जो सर्वथा उपवास करनेमें समर्थ न हो, वह फल-मूल और जल ग्रहण करे; अन्यथा उपवासके कारण शरीर नष्ट हो जानेपर मनुष्य आत्महत्याके पापका भागी होता है। जो व्रतके दिन एक बार हविष्यान्न खाता अथवा भगवान् विष्णुके नैवेद्यमात्रका भक्षण करता है, उसे अन्न खानेका पाप नहीं लगता। वह उपवासका पूरा फल प्राप्त कर लेता है।*

नारद! गृहस्थ, शैव, शाक्त, विशेषतः वैष्णव यति तथा ब्रह्मचारियोंके लिये यह बात बतायी गयी है। जो वैष्णव पुरुष नित्य भगवान् श्रीकृष्णके नैवेद्य (प्रसाद)-का भोजन करता है, वह जीवन्मुक्त हो प्रतिदिन सौ उपवास-व्रतोंका फल पाता है। सम्पूर्ण देवता और तीर्थ उसके अङ्गोंका स्पर्श चाहते हैं। उसके साथ वार्तालाप तथा उसका दर्शन समस्त पापोंका नाश करनेवाला है। यतियों, विधवाओं और ब्रह्मचारियोंके लिये ताम्बूल-भक्षण निषिद्ध है।

---

* उपवासासमर्थश्च फलमूलजलं पिबेत्। नष्टे शरीरे स भवेदन्यथा चात्मघातकः॥
सकृद् भुंक्ते हविष्यान्नं विष्णोर्नैवेद्यमेव च। न भवेत् प्रत्यवायी स चोपवासफलं लभेत्॥

नारद! समस्त ब्राह्मणोंके लिये जो अभक्ष्य है, उसका वर्णन सुनो। ताँबेके पात्रमें दूध पीना, जूठे बर्तन या अन्नमें घी लेकर खाना तथा नमकके साथ दूध पीना तत्काल गोमांस-भक्षणके समान माना गया है। काँसके बर्तनमें रखा हुआ एवं जो द्विज उठकर बायें हाथसे जल पीता है, वह शराबी माना गया है और समस्त धर्मोंसे बहिष्कृत है। मुने! भगवान् श्रीहरिको निवेदित न किया गया अन्न, खानेसे बचा हुआ जूठा भोजन तथा पीनेसे शेष रहा जूठा जल—ये सब सर्वथा निषिद्ध हैं। कार्तिकमें बैंगनका फल, माघमें मूली तथा श्रीहरिके शयनकाल (चौमासे)-में कलम्बी[1]का शाक सर्वथा नहीं खाना चाहिये। सफेद ताड़, मसूर और मछली—ये सभी ब्राह्मणोंके लिये समस्त देशोंमें त्याज्य हैं। प्रतिपदाको कूष्माण्ड (कोहड़ा) नहीं खाना चाहिये; क्योंकि उस दिन वह अर्थका नाश करनेवाला है। द्वितीयाको बृहती (छोटे बैंगन अथवा कटेहरी) भोजन कर ले तो उसके दोषसे छुटकारा पानेके लिये श्रीहरिका स्मरण करना चाहिये। तृतीयाको परवल शत्रुओंकी वृद्धि करनेवाला होता है; अतः उस दिन उसे नहीं खाना चाहिये। चतुर्थीको भोजनके उपयोगमें लायी हुई मूली धनका नाश करनेवाली होती है। पञ्चमीको बेल खाना कलङ्क लगनेमें कारण होता है। षष्ठीको नीमकी पत्ती चबायी जाय या उसका फल या दाँतुन मुँहमें डाला जाय तो उस पापसे मनुष्यको पशु-पक्षियोंकी योनिमें जन्म लेना पड़ता है। सप्तमीको ताड़का फल खाया जाय तो वह रोग बढ़ानेवाला तथा शरीरका नाशक होता है। अष्टमीको नारियलका फल खाया जाय तो उससे बुद्धिका नाश होता है। नवमीको लौकी और दशमीको कलम्बीका शाक सर्वथा त्याज्य है। एकादशीको शिम्बी (सेम), द्वादशीको पूतिका (पोई) और त्रयोदशीको बैंगन खानेसे पुत्रका नाश होता है। मांस सबके लिये सदा वर्जित है।

पार्वणश्राद्ध और व्रतके दिन प्रातःकालिक स्नानके समय सरसोंका तेल और पकाया हुआ तेल उपयोगमें लाया जाय तो उत्तम है। अमावास्या, पूर्णिमा, संक्रान्ति, चतुर्दशी और अष्टमी तिथियोंमें, रविवारको, श्राद्ध और व्रतके दिन स्त्री-सहवास तथा तिलके तेलका सेवन निषिद्ध है। सभी वर्णोंके लिये दिनमें अपनी स्त्रीका भी सेवन वर्जित है। रातमें दही खाना, दिनमें दोनों संध्याओंके समय सोना तथा रजस्वला स्त्रीके साथ समागम करना—ये नरककी प्राप्तिके कारण हैं। रजस्वला तथा कुलटाका अन्न नहीं खाना चाहिये।

ब्रह्मर्षे! शूद्रजातीय स्त्रीसे सम्बन्ध रखनेवाले ब्राह्मणका अन्न भी खाने योग्य नहीं है। ब्रह्मन्! सूदखोर और गणकका अन्न भी नहीं खाना चाहिये। अग्रदानी ब्राह्मण (महापात्र) तथा चिकित्सक (वैद्य या डाक्टर)-का अन्न भी खाने योग्य नहीं है। अमावास्या तिथि और कृत्तिका नक्षत्रमें द्विजोंके लिये क्षौर-कर्म (हजामत) वर्जित है। जो मैथुन करके देवताओं तथा पितरोंका तर्पण करता है, उसका वह जल रक्तके समान होता है तथा उसे देनेवाला नरकमें पड़ता है। नारद! जो करना चाहिये, जो नहीं करना चाहिये, जो भक्ष्य है और जो अभक्ष्य है, वह सब तुम्हें बताया गया। अब और क्या सुनना चाहते हो? (अध्याय २७)

---

१. जलज शाकविशेष अथवा कदम्ब।

परब्रह्म परमात्माके स्वरूपका निरूपण

नारदजीने पूछा—जगन्नाथ! जगद्गुरो! आपकी कृपासे मैंने सब कुछ सुन लिया। अब आप ब्रह्मके स्वरूपका वर्णन—ब्रह्मतत्त्वका निरूपण कीजिये। प्रभो! सर्वेश्वर! ब्रह्म साकार है या निराकार? क्या उसका कुछ विशेषण भी है? अथवा वह विशेषणोंसे रहित (निर्विशेष) ही है? ब्रह्मका नेत्रोंसे दर्शन हो सकता है या नहीं? वह समस्त देहधारियोंमें लिप्त है अथवा नहीं? उसका क्या लक्षण बताया गया है? वेदमें उसका किस प्रकार निरूपण किया गया है? क्या प्रकृति ब्रह्मसे अतिरिक्त है या ब्रह्मस्वरूपिणी ही है? श्रुतिमें प्रकृतिका सारभूत लक्षण किस प्रकार सुना गया है? ब्रह्म और प्रकृति इन दोनोंमेंसे किसकी सृष्टिमें प्रधानता है? दोनोंमें कौन श्रेष्ठ है? सर्वज्ञ! इन सब बातोंपर मनसे विचार करके जो सिद्धान्त हो, उसे अवश्य मुझे बताइये।

नारदजीकी यह बात सुनकर भगवान् पञ्चमुख महादेव ठठाकर हँस पड़े और उन्होंने परब्रह्म-तत्त्वका निरूपण आरम्भ किया।

महादेवजी बोले—वत्स नारद! तुमने जो-जो पूछा है, वह उत्तम गूढ़ ज्ञानका विषय है। वेदों और पुराणोंमें भी वह उत्तम एवं गूढ़ ज्ञान परम दुर्लभ है। ब्रह्मन्! मैं ब्रह्मा, विष्णु, शेषनाग, धर्म और महाविराट्—इन सबने तथा श्रुतियोंने भी सब बातोंका निरूपण किया है। वेदवेत्ताओंमें श्रेष्ठ नारद! जो सविशेष तथा प्रत्यक्ष दृश्य-तत्त्व है, उसका हम लोगोंने वेदमें निरूपण किया है। प्राचीनकालकी बात है, वैकुण्ठधाममें मैंने, ब्रह्माजीने और धर्मने श्रीहरिके समक्ष अपना प्रश्न उपस्थित किया था। उस समय श्रीहरिने उसका जो कुछ उत्तर दिया, वह सुनो; मैं तुम्हें बताता हूँ। वह ज्ञान तत्त्वोंका सारभूत तत्त्व है, अज्ञानान्धकारसे अन्धे हुए लोगोंके लिये नेत्ररूप है तथा दुविधा अथवा द्वैत नामक भ्रमरूपी अन्धकारका नाश करनेके लिये सर्वोत्तम प्रदीपके समान है। सनातन परब्रह्म परमात्मस्वरूप है। वह देहधारियोंके कर्मोंके साक्षीरूपसे समस्त शरीरोंमें विराजमान है। प्रत्येक शरीरमें पाँचों प्राणोंके रूपमें साक्षात् भगवान् विष्णु विद्यमान हैं। मनके रूपमें प्रजापति ब्रह्मा विराज रहे हैं। सम्पूर्ण ज्ञान (बुद्धि)-के रूपमें स्वयं मैं हूँ और शक्तिके रूपमें ईश्वरीय प्रकृति है। हम सब-के-सब परमात्माके अधीन हैं। शरीरमें उसके स्थित होनेपर ही स्थित होते हैं और उसके चले जाने (सम्बन्ध हटा लेने)-पर हम भी चले जाते हैं। जैसे राजाके सेवक सदा राजाका अनुसरण करते हैं, उसी प्रकार हम लोग उस परमात्माके अनुगामी बने रहते हैं। जीव परमात्माका प्रतिबिम्ब है। वही कर्मोंके फलका उपभोग करता है। जैसे जलसे भरे हुए घड़ोंमें पृथक्-पृथक् सूर्य और चन्द्रमाका प्रतिबिम्ब होता है तथा उन घड़ोंके फूट जानेपर वह प्रतिबिम्ब फिर चन्द्रमा और सूर्यमें लीन हो जाता है, उसी प्रकार सृष्टिकालमें परमात्माके प्रतिबिम्ब-स्वरूप जीवकी उपलब्धि होती है तथा सृष्टिमयी उपाधिके नष्ट हो जानेपर वह प्रतिबिम्बस्वरूप जीव पुनः सर्वव्यापी परमात्मामें लीन हो जाता है।

वत्स! संसारका संहार हो जानेपर एकमात्र परब्रह्म परमात्मा ही शेष रहता है। हम तथा यह चराचर जगत् उसीमें लीन हो जाते हैं। वह ब्रह्म मण्डलाकार ज्योतिःपुञ्जस्वरूप है। ग्रीष्म-ऋतुके मध्याह्नकालमें प्रकट होनेवाले कोटि-कोटि सूर्योंके समान उसका प्रकाश है। वह आकाशके समान विस्तृत, सर्वत्र व्यापक तथा अविनाशी है। योगीजनोंको ही वह चन्द्रमण्डलके समान सुखपूर्वक दिखायी देता है। योगीलोग उसे सनातन परब्रह्म कहते हैं और दिन-रात उस सर्वमङ्गलमय सत्यस्वरूप परमात्माका ध्यान करते रहते हैं। वह परमात्मा निरीह, निराकार तथा सबका ईश्वर है।

उसका स्वरूप उसकी इच्छाके अनुसार है। वह स्वतन्त्र तथा समस्त कारणोंका भी कारण है। परमानन्दस्वरूप तथा परमानन्दकी प्राप्तिका हेतु है। सबसे उत्कृष्ट, प्रधान पुरुष (पुरुषोत्तम), प्राकृत गुणोंसे रहित तथा प्रकृतिसे परे है। प्रलयके समय उसीमें सर्वबीजस्वरूपिणी प्रकृति लीन होती है। ठीक उसी तरह, जैसे अग्निमें उसकी दाहिका शक्ति, सूर्यमें प्रभा, दुग्धमें धवलता और जलमें शीतलता लीन रहती है। मुने! जैसे आकाशमें शब्द और पृथ्वीमें गन्ध सदा विद्यमान है, उसी तरह निर्गुण ब्रह्ममें निर्गुण प्रकृति सर्वदा स्थित है। जब ब्रह्म सृष्टिके लिये उन्मुख होता है, तब अपने अंशसे पुरुष कहलाता है। वत्स! वही गुणों—विषयोंसे सम्बन्ध स्थापित करनेपर प्राकृत एवं विषयी कहा गया है। त्रिगुणा प्रकृति उस परमात्मामें ही उत्कृष्ट छायारूपिणी मानी गयी है। मुने! जैसे कुम्हार मिट्टीसे घड़ा बनानेमें सदा ही समर्थ होता है, उसी प्रकार वह ब्रह्म प्रकृतिके द्वारा सृष्टिका निर्माण करनेमें नित्य समर्थ है। जैसे सुनार सुवर्णसे कुण्डल बनानेकी शक्ति रखता है, उसी तरह परमेश्वर उपादानभूता प्रकृतिके द्वारा सदा सृष्टि करनेमें समर्थ है। जैसे कुम्हार मिट्टीका निर्माण नहीं करता, मिट्टी उसके लिये नित्य एवं सनातन है तथा जैसे सुनार सुवर्णकी सृष्टि नहीं करता, सुवर्ण उसके लिये नित्य वस्तु ही है, उसी प्रकार वह परब्रह्म परमात्मा नित्य है और वह प्रकृति भी नित्य मानी गयी है। इसीलिये कुछ लोग सृष्टिमें उन दोनोंकी ही समानरूपसे प्रधानता बतलाते हैं। कुम्हार और सुनार स्वयं मिट्टी और सुवर्ण पैदा करके लानेमें समर्थ नहीं हैं तथा मिट्टी और सुवर्ण भी कुम्हार और सुनारको ले आनेकी शक्ति नहीं रखते। अतः मिट्टी और कुम्हारकी घटमें तथा सुवर्ण और सुनारकी कुण्डलमें समानरूपसे प्रधानता है।

नारद! इस विवेचनसे ब्रह्म प्रकृतिसे परे ही सिद्ध होता है। यही बात दृष्टिमें रखकर कुछ लोग प्रकृति और ब्रह्म दोनोंकी ही निश्चितरूपसे नित्यताका प्रतिपादन करते हैं। कुछ विद्वानोंका कथन है कि ब्रह्म स्वयं ही प्रकृति और पुरुषरूपमें प्रकट है। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि प्रकृति ब्रह्मसे अतिरिक्त (भिन्न) है। वह ब्रह्म परमधाम-स्वरूप तथा समस्त कारणोंका भी कारण है। ब्रह्मन्! उस ब्रह्मका लक्षण श्रुतिमें कुछ इस प्रकारका सुना गया है—ब्रह्म सबका आत्मा है। वह सबसे निर्लिप्त और सबका साक्षी है। सर्वत्र व्यापक और सबका आदिकारण है। सर्वबीजस्वरूपिणी प्रकृति उस ब्रह्मकी शक्ति है। जिससे वह ब्रह्म शक्तिमान् है, अतः शक्ति और शक्तिमान् दोनों अभिन्न हैं। योगीलोग सदा तेजःस्वरूपमें ही ब्रह्मका ध्यान करते हैं; परंतु सूक्ष्म बुद्धिवाले मेरे भक्त—वैष्णवजन ऐसा नहीं मानते। वे वैष्णवजन उस आश्चर्यमय तेजोमण्डलके भीतर सदा साकार, सर्वात्मा, स्वेच्छामय पुरुषके मनोहर रूपका ध्यान करते हैं। करोड़ों सूर्योंके समान प्रकाशमान जो मण्डलाकार तेजःपुञ्ज है, उसके भीतर नित्यधाम छिपा हुआ है, जिसका नाम गोलोक है। वह मनोहर लोक चारों ओरसे लक्षकोटि योजन विस्तृत है। सर्वश्रेष्ठ दिव्य रत्नोंके सारतत्त्वसे जिनका निर्माण हुआ है, ऐसे दिव्य भवनों तथा गोपाङ्गनाओंसे वह लोक भरा हुआ है। उसे सुखपूर्वक देखा जा सकता है। चन्द्रमण्डलके समान ही वह गोलाकार है। रत्नेन्द्रसारसे निर्मित वह धाम परमात्माकी इच्छाके अनुसार बिना किसी आधारके ही स्थित है। उस नित्य लोककी स्थिति वैकुण्ठसे पचास करोड़ योजन ऊपर है। वहाँ गौएँ, गोप और गोपियाँ निवास करती हैं। वहाँ कल्पवृक्षोंके वन हैं। गोलोक कामधेनु गौओंसे भरा हुआ तथा रासमण्डलसे मण्डित है। मुने! वह वृन्दावनसे आच्छन्न और विरजा नदीसे आवेष्टित है। वहाँ सैकड़ों शिखरोंसे सुशोभित गिरिराज विराजमान है। सुवर्णनिर्मित

लक्ष कोटि मनोहर आश्रम हैं, जिनसे वह अभीष्ट धाम अत्यन्त दीप्तिमान् एवं श्रीसम्पन्न दिखायी देता है। उन सबके मध्यभागमें एक परम मनोहर आश्रम है, जो अकेला ही सौ मन्दिरोंसे संयुक्त है। वह परकोटों तथा खाइयोंसे घिरा हुआ तथा पारिजातके वनोंसे सुशोभित है। उस आश्रमके भवनोंमें जो कलश लगे हैं, उनका निर्माण रत्नराज कौस्तुभमणिसे हुआ है। इसलिये वे उत्तम ज्योति:पुञ्जसे जाज्वल्यमान रहते हैं। उन भवनोंमें जो सीढ़ियाँ हैं, वे दिव्य हीरोंके सार-तत्त्वसे बनी हुई हैं। उनसे उन भवनोंका सौन्दर्य बहुत बढ़ गया है। मणीन्द्रसारसे निर्मित वहाँके किवाड़ोंमें दर्पण जड़े हुए हैं। नाना प्रकारके चित्र-विचित्र उपकरणोंसे वह आश्रम भलीभाँति सुसज्जित है। उसमें सोलह दरवाजे हैं तथा वह आश्रम रत्नमय प्रदीपोंसे अत्यन्त उद्भासित होता रहता है।

वहाँ बहुमूल्य रत्नोंद्वारा निर्मित तथा नाना प्रकारके विचित्र चित्रोंसे चित्रित रमणीय रत्नमय सिंहासनपर सर्वेश्वर श्रीकृष्ण बैठे हुए हैं। उनकी अङ्गकान्ति नवीन मेघ-मालाके समान श्याम है। वे किशोर-अवस्थाके बालक हैं। उनके नेत्र शरत्कालकी दोपहरीके सूर्यकी प्रभाको छीने लेते हैं। उनका मुखमण्डल शरत्पूर्णिमाके पूर्ण चन्द्रमाकी शोभाको ढक देता है। उनका सौन्दर्य कोटि कामदेवोंकी लावण्यलीलाको तिरस्कृत कर रहा है। उनका पुष्ट श्रीविग्रह करोड़ों चन्द्रमाओंकी प्रभासे सेवित है। उनके मुखपर मुस्कराहट खेलती रहती है। उनके हाथमें मुरली शोभा पाती है। उनके मनोहर छबिकी सबने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। वे परम मङ्गलमय हैं। अग्निमें तपाकर शुद्ध किये गये सुवर्णके समान रंगवाले दो पीताम्बर धारण करनेसे उनका श्रीविग्रह परम उज्ज्वल प्रतीत होता है। भगवान्‌के सम्पूर्ण अङ्ग चन्दनसे चर्चित तथा कौस्तुभमणिसे प्रकाशित हैं। घुटनोंतक लटकती हुई मालतीकी माला और वनमालासे वे विभूषित हैं। त्रिभंगी छबिसे युक्त और मणिमाणिक्यसे अलंकृत हैं। मोरपंखका मुकुट धारण करते हैं। उत्तम रत्नमय मुकुटसे उनका मस्तक जगमगाता रहता है। रत्नोंके बाजूबंद, कंगन और मंजीरसे उनके हाथ-पैर सुशोभित हैं। उनके गण्डस्थल रत्नमय युगल कुण्डलसे अत्यन्त शोभा पाते हैं। उनकी दन्तपंक्ति मोतियोंकी पाँतिका तिरस्कार करनेवाली है। वे बड़े ही मनोहर हैं। उनके ओठ पके हुए बिम्बफलके समान लाल हैं। उन्नत नासिका उनकी शोभा बढ़ाती है। सब ओरसे घेरकर खड़ी हुई गोपाङ्गनाएँ उन्हें सदा सादर निहारती रहती हैं। वे गोपाङ्गनाएँ भी सुस्थिर यौवनसे युक्त, मन्द मुस्कानसे सुशोभित तथा उत्तम रत्नोंके बने हुए आभूषणोंसे विभूषित हैं। देवेन्द्र, मुनीन्द्र, मुनिगण तथा नरेशोंके समुदाय और ब्रह्मा, विष्णु, शिव, अनन्त तथा धर्म आदि उनकी सानन्द वन्दना किया करते हैं। वे भक्तोंके प्रियतम, भक्तोंके नाथ तथा भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये कातर रहनेवाले हैं। राधाके वक्ष:स्थलपर विराजमान परम रसिक रासेश्वर हैं। मुने! वैष्णवजन उन निराकार परमात्माका इस रूपमें ध्यान किया करते हैं। वे परमात्मा ईश्वर हम सब लोगोंके सदा ही ध्येय हैं। उन्हींको अविनाशी परब्रह्म कहा गया है। वे ही दिव्य स्वेच्छामय शरीरधारी सनातन भगवान् हैं। वे निर्गुण, निरीह और प्रकृतिसे परे हैं। सर्वाधार, सर्वबीज, सर्वज्ञ, सर्वरूप, सर्वेश्वर, सर्वपूज्य तथा सम्पूर्ण सिद्धियोंको हाथमें देनेवाले हैं। वे आदिपुरुष भगवान् स्वयं ही द्विभुज रूप धारण करके गोलोकमें निवास करते हैं। उनकी वेष-भूषा भी ग्वालोंके समान होती है और वे अपने पार्षद गोपालोंसे घिरे रहते हैं। उन परिपूर्णतम भगवान्‌को श्रीकृष्ण कहते हैं। वे सदा श्रीजीके साथ रहनेवाले और श्रीराधिकाके प्राणेश्वर हैं। सबके अन्तरात्मा, सर्वत्र प्रत्यक्ष

दर्शन देनेके योग्य और सर्वव्यापी हैं। 'कृष्'का अर्थ है सब और 'ण' का अर्थ है आत्मा। वे परब्रह्म परमात्मा सबके आत्मा हैं। इसलिये उनका नाम 'कृष्ण' है। 'कृष्' शब्द सर्वका वाचक है और 'ण' कार आदिवाचक है। वे सर्वव्यापी परमेश्वर सबके आदिपुरुष हैं, इसलिये 'कृष्ण' कहे गये हैं। वे ही भगवान् अपने एक अंशसे वैकुण्ठधाममें चार भुजाधारी लक्ष्मीपतिके रूपमें निवास करते हैं, चार भुजाधारी पार्षद उन्हें घेरे रहते हैं। वे ही जगत्पालक भगवान् विष्णु अपनी एक कलासे श्वेतद्वीपमें चार भुजाधारी रमापति-रूपसे निवास करते हैं। समुद्रतनया रमा उनकी पत्नी हैं।

इस प्रकार मैंने तुमसे परब्रह्म-निरूपणविषयक सब बातें बतायीं। वे परमात्मा हम सबके प्रिय, वन्दनीय, सेव्य तथा सर्वदा स्मरणीय हैं।

शौनक! ऐसा कहकर भगवान् शंकर वहाँ चुप हो गये। तब नारदने गन्धर्वराज उपबर्हणद्वारा रचे गये स्तोत्रसे उनकी स्तुति की। मुनिके उस स्तोत्रसे संतुष्ट हो अपनी महिमासे कभी च्युत न होनेवाले आदि भगवान् मृत्युञ्जयने उन्हें अभीष्ट वरदान—ज्ञान प्रदान किया। उस समय मुनिवर नारदके मुख और नेत्र प्रसन्नतासे खिल उठे। वे भगवान् शिवको प्रणाम करके उनकी आज्ञा ले पुण्यमय नारायणाश्रमको चले गये।

(अध्याय २८)

बदरिकाश्रममें नारायणके प्रति नारदजीका प्रश्न

सौति कहते हैं—शौनक! देवर्षि नारदने नारायण ऋषिके आश्चर्यमय आश्रमको देखा, जो बेरके वनोंसे सुशोभित था। नाना प्रकारके वृक्षों और फलोंसे भरे हुए उस आश्रममें कोयलकी मीठी कूक मुखरित हो रही थी। बड़े-बड़े शरभों, सिंहों और व्याघ्रसमुदायोंसे घिरे होनेपर भी उस आश्रममें ऋषिराज नारायणके प्रभावसे हिंसा और भयका कहीं नाम नहीं था। वह विशाल वन जनसाधारणके लिये अगम्य और स्वर्गसे भी अधिक मनोहर था। वहाँ नारदजीने देखा—ऋषिप्रवर नारायण मुनियोंकी सभामें रत्नमय सिंहासनपर विराजमान हैं। उनका रूप बड़ा मनोहर है और वे योगियोंके गुरु हैं। श्रीकृष्णस्वरूप परमेश्वर परब्रह्मका जप करते हुए नारायण मुनिका दर्शन करके ब्रह्मपुत्र नारदने उन्हें प्रणाम किया। उन्हें आया देख नारायणने सहसा उठकर हृदयसे लगा लिया और उत्तम आशीर्वाद प्रदान किया। साथ ही स्नेहपूर्वक कुशल-समाचार पूछा और आतिथ्यसत्कार किया। फिर नारदजीको भी उन्होंने रमणीय रत्नमय सिंहासनपर बिठाया। उस रमणीय आसनपर बैठकर नारदजीने रास्तेकी थकावट दूर की और उन ऋषिश्रेष्ठ सनातन भगवान् नारायणसे, साथ ही उन सब परम दुर्लभ मुनियोंसे भी पूछा, जो पिताके स्थानमें वेदाध्ययन करके वहाँ विराजमान थे।

नारदजी बोले—प्रभो! योगीश्वर शंकरसे ज्ञान और मन्त्रका उपदेश पाकर भी मेरा मन तृप्त नहीं हो रहा है; क्योंकि यह बड़ा चञ्चल है और इसे रोकना अत्यन्त कठिन है। मेरे मनमें प्रभुकी कुछ ऐसी प्रेरणा हुई, जिससे मैंने आपके चरणारविन्दोंका दर्शन किया। इस समय मैं आपसे कुछ विशेष ऐसा ज्ञान प्राप्त करना चाहता हूँ, जिसमें श्रीकृष्णके गुणोंका वर्णन हो, जो कि जन्म, मृत्यु और जराका नाश करनेवाला है। भगवन्! ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवता, देवराज इन्द्र, मुनि और विद्वान् मनु किसका चिन्तन करते हैं? सृष्टिका प्रादुर्भाव किससे होता है अथवा उसका लय कहाँ होता है? समस्त

कारणोंके भी कारणभूत सर्वेश्वर विष्णु कौन हैं? जगत्पते! उन ईश्वरका रूप अथवा कर्म क्या है? इन सब बातोंपर मन-ही-मन विचार करके आप बतानेकी कृपा करें।

नारदजीका यह वचन सुनकर भगवान् नारायण ऋषि हँसे। फिर उन्होंने त्रिभुवनपावनी पुण्यकथाको कहना आरम्भ किया।

(अध्याय २९)

नारायणके द्वारा परमपुरुष परमात्मा श्रीकृष्ण तथा प्रकृतिदेवीकी महिमाका प्रतिपादन

श्रीनारायण बोले—गणेश, विष्णु, शिव, रुद्र, शेष, ब्रह्मा आदि देवता, मनु, मुनीन्द्रगण, सरस्वती, पार्वती, गङ्गा और लक्ष्मी आदि देवियाँ भी जिनका सेवन करती हैं, उन भगवान् गोविन्दके चरणारविन्दका चिन्तन करना चाहिये। जो अत्यन्त गम्भीर और भयंकर दावाग्निरूपी सर्पसे आवेष्टित हो छटपटाते अङ्गवाले संसार-सागरको लाँघकर उस पार जाना चाहता है और श्रीहरिके दास्य-सुखको पानेकी इच्छा रखता है, वह भगवान् श्रीकृष्णके चरणारविन्दका चिन्तन करे। जिन्होंने गोवर्धन पर्वतको हाथपर उठाकर व्रजभूमिको इन्द्रके कोपसे बचानेकी कीर्ति प्राप्त की है, वाराहावतारके समय एकार्णवके जलमें गली जाती हुई पृथ्वीको अपनी दाढ़ोंके अग्रभागसे उठाकर जलके ऊपर स्थापित किया तथा जो अपने रोमकूपोंमें असंख्य विश्व-ब्रह्माण्डको धारण करते हैं, उन आदिपुरुष भगवान् गोविन्दके चरणारविन्दका चिन्तन करना चाहिये। जो गोपाङ्गनाओंके मुखारविन्दके रसिक भ्रमर हैं और वृन्दावनमें विहार करनेवाले हैं, उन व्रजवेषधारी विष्णुरूप परमपुरुष रसिक-रमण रासेश्वर श्रीकृष्णके चरणारविन्दका चिन्तन करना चाहिये। वत्स नारदमुने! जिनके नेत्रोंकी पलक गिरते ही जगत्स्रष्टा ब्रह्मा नष्ट हो जाते हैं, उनके कर्मका वर्णन करनेमें भूतलपर कौन समर्थ है? तुम भी श्रीहरिके चरणारविन्दका अत्यन्त आदरपूर्वक चिन्तन करो। तुम और हम उन भगवान्‌की कलाकी कलाके अंशमात्र हैं। मनु और मुनीन्द्र भी उनकी कलाके कलांश ही हैं। महादेव और ब्रह्माजी भी कलाविशेष हैं और महान् विराट्-पुरुष भी उनकी विशिष्ट कलामात्र हैं। सहस्र सिरोंवाले शेषनाग सम्पूर्ण विश्वको अपने मस्तकपर सरसोंके एक दानेके समान धारण करते हैं, परंतु कूर्मके पृष्ठभागमें वे शेषनाग ऐसे जान पड़ते हैं, मानो हाथीके ऊपर मच्छर बैठा हो। वे भगवान् कूर्म (कच्छप) श्रीकृष्णकी कलाके कलांशमात्र हैं। नारद! गोलोकनाथ भगवान् श्रीकृष्णका निर्मल यश वेद और पुराणमें किञ्चिन्मात्र भी प्रकट नहीं हुआ। ब्रह्मा आदि देवता भी उसका वर्णन करनेमें समर्थ नहीं हैं। ब्रह्मपुत्र नारद! तुम उन सर्वेश्वर श्रीकृष्णका ही मुख्यरूपसे भजन करो।

जिन विश्वाधार परमेश्वरके सम्पूर्ण लोकोंमें सदा बहुत-से ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र रहा ही करते हैं तथा श्रुतियाँ और देवता भी उनकी नियत संख्याको नहीं जानते हैं, उन्हीं परमेश्वर श्रीकृष्णकी तुम आराधना करो। वे विधाताके भी विधाता हैं। वे ही जगत्प्रसविनी नित्यरूपिणी प्रकृतिको प्रकट करके संसारकी सृष्टि करते हैं। ब्रह्मा आदि सब देवता प्रकृतिजन्य हैं। वे भक्तिदायिनी श्रीप्रकृतिका भजन करते हैं। प्रकृति ब्रह्मस्वरूपा है। वह ब्रह्मसे भिन्न नहीं है। उसीके द्वारा सनातन पुरुष परमात्मा संसारकी सृष्टि करते हैं, श्रीप्रकृतिकी

कलासे ही संसारकी सारी स्त्रियाँ प्रकट हुई हैं। प्रकृति ही माया है, जिसने सबको मोहमें डाल रखा है। वह सनातनी परमा प्रकृति नारायणी कही गयी है; क्योंकि वह परमपुरुष नारायणकी शक्ति है। सर्वात्मा ईश्वर भी उसीके द्वारा शक्तिमान् होते हैं। उस शक्तिके बिना वे सृष्टि करनेमें सदा असमर्थ ही हैं। वत्स! तुम इस समय जाकर विवाह करो। मैं तुम्हें पिताके आदेशका पालन करनेकी आज्ञा देता हूँ। जो गुरुकी आज्ञाका पालन करनेवाला है, वह सदा सर्वत्र पूजनीय तथा विजयी होता है। जो पुरुष वस्त्र, अलंकार और चन्दनसे अपनी पत्नीका सत्कार करता है, उसपर प्रकृतिदेवी संतुष्ट होती हैं। ठीक उसी तरह जैसे ब्राह्मणकी पूजा-अर्चा करनेपर भगवान् श्रीकृष्ण संतुष्ट होते हैं। प्रकृति ही सम्पूर्ण लोकोंमें अपनी मायासे स्त्रियोंके रूपमें प्रकट हुई हैं। अतः महिलाओंके अपमानसे वे प्रकृतिदेवी ही अपमानित होती हैं। जिसने पति-पुत्रसे युक्त सती-साध्वी दिव्य नारीका पूजन किया है, उसके द्वारा सर्वमङ्गलदायिनी प्रकृतिदेवीका ही पूजन सम्पन्न हुआ है। मूल प्रकृति एक ही है। वह पूर्ण ब्रह्मस्वरूपिणी है। उसीको सनातनी विष्णुमाया कहा गया है। सृष्टिकालमें वह पाँच रूपोंमें प्रकट होती है। जो परमात्मा श्रीकृष्णके प्राणोंकी अधिष्ठात्री देवी है तथा समस्त प्रकृतियोंमें उन्हें सबसे अधिक प्यारी है, उस मुख्या प्रकृतिका नाम 'राधा' है। दूसरी प्रकृति नारायणप्रिया लक्ष्मी हैं, जो सर्वसम्पत्स्वरूपिणी हैं। तीसरी प्रकृति वाणीकी अधिष्ठात्री देवी सरस्वती हैं, जो सदा सबके द्वारा पूजनीया हैं। चौथी प्रकृति वेदमाता सावित्री हैं। वे ब्रह्माजीकी प्यारी पत्नी और सबकी पूजनीया हैं। पाँचवीं प्रकृतिका नाम दुर्गा है, जो भगवान् शंकरकी प्यारी पत्नी हैं। उन्हींके पुत्र गणेश हैं। (अध्याय ३०)

ब्रह्मखण्ड सम्पूर्ण